नागरीप्रचारिणी ग्रंथमाला सं० १७

भूषणग्रंथावली

(सटिप्पण)

संपादक

रावराजा डाक्टर

पं० श्यामबिहारी मिश्र एम० ए०, डी० लिट०

और

रायबहादुर

पं० शुकदेवबिहारी मिश्र बी० ए०

प्रकाशक

नागरीप्रचारिणी सभा, काशी।

[मूल्य २)

पंचम-संशोधित संस्करण] सं० १९९६

विषय सूची

(१) चतुर्थ संस्करण का वक्तव्य

(२) शिवराज भूषण ग्रंथ

चतुर्थ संस्करण का वक्तव्य

महाकवि भूषण की रचना पर हम लोग बहुत काल से मनन और परिश्रम करते आए हैं। भूषण ग्रन्थावली का प्रथम संस्करण प्रायः बीस वर्ष हुए, प्रकाशित हुआ था। इसके प्रायः ५ वर्ष पूर्व से हम लोग इस विषय पर परिश्रम करते आये थे। समय के साथ नवीन घटनाओं तथा ऐतिहासिक विषयों का ज्ञान प्राप्त होने से इस कविरत्न के सम्बन्ध में दिनों दिन विचार परिष्कृत होते गए। इन्हीं के अनुसार दूसरी तथा तीसरी आवृत्तियों में नवीन मतानुसार संशोधन होते गए। इन दिनों भाषासाहित्य-प्रेमियों ने इस प्राचीन विषय पर खण्डनात्मक तथा मण्डनात्मक दोनों प्रकार के लेख कुछ प्रचुरता से लिखे। केलूसकर तथा तकाखौ नामक दो महाराष्ट्र लेखकों ने शिवाजी महाराज की बहुत ही श्रेष्ठ जीवनी लिखी। सरकार महोदय का इसी विषय पर जो ग्रन्थरत्न है, उसके भी अधिक अवलोकन की आवश्यकता हुई। प्रायः इन २५ वर्षों में समाज को महाराज शिवाजी सम्बन्धी ऐतिहासिक ज्ञानवृद्धि बहुत अच्छी हुई। इन्हीं सब कारणों से हमें भी शिवाजी सम्बन्धी इतिहास पर विशेष ध्यान देना पड़ा। केलूसकर तथा तकाखौ महाशयों का ग्रन्थ इतना रोचक है कि निष्कारण भी उसे दो बार पढ़े बिना चित्त प्रसन्न न हुआ। इन सब खोजों का फल इस चौथे संस्करण में रक्खा गया

है। भूमिका तथा टिप्पणी दोनों में प्रचुरता से संशोधन किया गया है। नए नोट भी बहुत कुछ बढ़ाये गए हैं। नवीन ऐतिहासिक खोजों से कुछ प्राचीन छन्दों के नए अर्थ भी समझ पड़े हैं जो नोटों में लिखे गए हैं। कुछ नए छन्द भी प्राप्त हुए हैं जो स्फुट छन्दों में सन्निविष्ट हुए हैं। महाकवि भूषण के समय पर भी बहुत कुछ नया विचार हुआ और इनके तीन भ्राताओं से इनके सम्बन्ध पर भी कुछ सज्जनों ने सन्देह प्रकट किया था, सो इस विषय पर भी श्रम किया गया है। इसी विषय पर अपने नवीन ग्रन्थ सुमनोञ्जलि के द्वितीय खण्ड में हम तीन बड़े लेखों में अपना मत प्रकट कर चुके हैं। यह ग्रन्थ प्रयाग के वेलवेडियर प्रेस ने हाल ही में प्रकाशित किया है। उन लेखों का सारांश इस ग्रंथ में भी उचित स्थानों पर आ गया है। इस बार भूषण ग्रन्थावली का यह नवीन (पाँचवाँ) संस्करण यथासाध्य बहुत ही शुद्ध करके छापा जाता है। आशा है कि पाठकों को इससे और भी अधिक लाभ उठाने का अवसर मिलेगा। हिन्दी समाज ने हमारे इस ग्रन्थ सम्बन्धी परिश्रम को सफल करने में पूरी कृपा दिखलाई है। यह ग्रन्थ कई कक्षाओं में पाठ्य ग्रन्थ भी नियत है। इस ग्रन्थ का इतना मान बढ़ाने पर हम हिन्दी की विद्वन्मण्डली को अनेकानेक धन्यवाद देते हैं।

सं० १९९६ } मिश्रबन्धु।

भूषण-ग्रंथावली की

भूमिका

"एक लहैं तप पुंजन के फल ज्यों तुलसी अरु सूर गोसाईं।
एकन को बहु संपति केशव भूपन ज्यों बलबीर बड़ाई॥
एकन को जस ही सों प्रयोजन है रसखानि रहीम कि नाईं।
दास कवित्तन की चरचा गुनवंतन को सुखदै सब ठाईं"॥

वास्तव में सन् १७३४ के कवि दासजी का उपर्युक्त सवैया भूषणजी के विषय में जो कुछ कहता है, वह विलकुल ठीक है। जैसी कुछ संपत्ति और बड़ाई कविता से भूषणजी को प्राप्त हुई, वैसी प्राय: औरों को नहीं मिली।

हमारे भाषा साहित्य में वीर, रौद्र, तथा भयानक रसों का सर्वोच्च पद है, क्योंकि उत्कृष्ट हिंदी कविता इन्हीं रसों का अवलंब ले पृथ्वी पर अवतीर्ण हुई है। सब से प्रथम जिस प्रकृष्ट ग्रंथ के निर्मित होने का हाल हम लोगों को ज्ञात है, वह चंद कृत पृथ्वी-राजरासो है और वह विशेषतया इन्हीं रसों के वर्णनों का भांडार है। जज्जल, शार्ङ्गधर आदि ने भी ऐसे ही विषयों का मान किया। मलिक मुहम्मद जायसी ने भी पद्मावत में यत्र तत्र उपर्युक्त ग्रंथों की भाँति इन रसों का समावेश किया है। तदनंतर "चौथे पन

जाड्य नृप कानन" की बात स्मरण कर चौथे की कौन कहे, श्रीरामचंद्र जी की भाँति प्राय: पहले ही पन में हमारी भाषा काव्यकानन को चल दी और भगवत भजन करने लगी। अत: ऐसे रसों को छोड़ तुलसीदास, सूरदास, कबीर इत्यादि कवीश्वरों की सहायता से इसने शांत * रस के बड़े ही मनोरंजक राग अलापे; परंतु असमय की कोई बात चिरस्थायी नहीं होती। सो हमारे साहित्य का चित्त भी शांत रस में न लगा। शांत रस का वास्तविक प्रादुर्भाव तो शृंगार के पश्चात् होता है। जब विषयों का उपभोग कर प्राणी कुछ थक सा जाता है, तभी उसके चित्त में, राजा ययाति की भाँति, उन विषयों की तृष्णा हटती है और निर्वेद का राज्य होता है। सो हमारे साहित्य ने अपना पुराना उत्साह तो छोड़ ही दिया था, अब वह निर्वेद को भी तिलांजलि दे अपना शृंगार करने में पूर्णतया प्रवृत्त हो गया और हमारे कवियों ने पुण्यात्मा सरस्वती देवी को "नायिकाओं" के गुणकथन में लगाया। इस कार्य में उनको विषयी और उद्योगशून्य राजाओं से विशेष सहायता मिली। शृंगार रस के वर्णन में उसी समय से अब तक हमारी कविता ऐसी कुछ उलझ पड़ी है कि उसका छुटकारा होना ही कठिन दिखाई देता है। यहाँ तो जहाँ देखिए, पति अथवा उपपति और पत्नी का विहार, मान, दूतीत्व, पश्चात्ताप, विरह की उसासें, उपपतियों और जारों की ताक झाँक, सुरतांत

---

* अवश्य ही सूरदासजी ने शृंगार एवं अन्य कतिपय कवियों ने और रसों की भी कविता की है, पर प्रधानता शांत रस की ही रही।

के लटके, नायिकाओं के नखशिख और विशेष करके कटि, नेत्र व नितंबों के वर्णन, उलाहने, गणिकाओं का अधिक धन वसूल करने का प्रयत्न इत्यादि इत्यादि, विशेपतः यही सब हमारी कविता हमको दिखा रही है! हमारे इस प्रबंध के नायक भूषण महाराज ऐसे ही समय में उत्पन्न हुए थे, पर इन्हें ऐसे वर्णन पसंद न थे, अतः ये लिखते हैं—

ब्रह्म के आनन ते निकसे ते अत्यंत पुनीत तिहूँ पुर मानी।
राम युधिष्ठिर के बरने बलमीकि हु व्यास के संग सोहानी॥
भूषन यों कलि के कविराजन राजन के गुन पाय नसानी।
पुन्य चरित्र सिवा सरजा-सर न्हाय पवित्र भई पुनि बानी॥

हमारे भूषण महाराज का यह भी एक बड़ा गुण है कि शृंगार को ही नहीं वरन् सभी अनुपयोगी विषयों को लात मारकर इन्होंने भारतमुखोज्वलकारी महाराज शिवाजी भोंसला एवं छत्रसाल बुँदेला जैसे महापुरुषों के गुणगान में अपनी अलौकिक कवित्व शक्ति लगाई और ऐसे उपयोगी वर्णनों की ओर लोगों की रुचि आकर्षित की, यहाँ तक कि उन्होंने सिवा कतिपय छंदों के शृंगार रस के वर्णन में और कुछ न कहा। एक शृंगार छंद में भी मानों प्रायश्चित्तार्थ, उन्होंने युद्ध का ही रूपक बाँधा है (स्फुट कविता देखिये)।

हर्ष की बात है कि जैसे उन्होंने शृंगार एवं अन्य अनुपयोगी विषयों को लात मारकर वीर-रौद्र तथा भयानक रसों ही को प्रधानता देकर अन्य कवियों को सदुपदेश सा दिया, वैसे ही इनका

मान भी ऐसा हुआ, जैसा इनसे श्रेष्ठतर कवियों का भी कभी स्वप्न तक में न हुआ, जैसा कि दासजी के शिरोभाग में उद्धृत छंद से प्रकट होता है। विहारीलालजी सदैव कलियुग के दानियों की निंदा ही करते रहे ("तुम हूँ कान्ह मनो भए आजु कालिह के दानि")। परंतु उन्होंने यह न विचार किया कि उन्हींके सम-कालीन भूषण कवि किस प्रकार की कविता करने से किस स्थान को पहुँच गए हैं। अस्तु।

शिवसिंह-सरोज तथा अन्य पुस्तकों में इन महाशय के वनाए चार ग्रंथ लिखे हैं—(१) शिवराज भूषण, (२) भूषण-हज़ारा, (३) भूषण उल्लास, और (४) दूषण उल्लास। इनमें अंतिम तीन ग्रंथों को अद्यावधि मुद्रण का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ है, और न हमने उन्हें कहीं देखा ही है। नहीं मालूम उनके रच-यिता भूषण जी हैं या नहीं। एक यह भी प्रश्न है कि शिवाबावनी एवं छत्रसालदशक कोई स्वतंत्र ग्रंथ हैं अथवा भूषण की स्फुट कविता के संग्रह मात्र। प्रथम प्रश्न के उठने का यह कारण है कि किसी महाशय ने भूषणजी के उक्त चार ग्रंथ होने का कोई प्रमाण नहीं दिया है। उन्होंने केवल यही कह दिया है कि भूषण के ये चार ग्रंथ हैं। यदि वे लिखते कि उन्होंने इन चारों ग्रन्थों को देखा है अथवा उनका होना किसी स्थान विशेष पर किसी प्रामाणिक रीति पर सुना है, तो उनका कथन अधिक मान्य होता। हमारा इस विषय में यह मत है कि यद्यपि हम नहीं कह सकते कि भूषण महाराज के कौन कौन और ग्रंथ हैं ("हजारा"

का होना कालिदास त्रिवेदी ने लिखा है, और उसका नाम यों भी बहुत सुन पड़ता है) तथापि इसमें संदेह नहीं कि इन्होंने कुछ अन्य ग्रंथ निर्माण अवश्य किए होंगे। इस मत की पुष्टि में निम्नलिखित बातें ध्यान देने योग्य हैं—

(१) भूषणजी ने शिवाजी के सन् १६७४ वाले राज्याभिषेक के वर्णन में एक ही छंद लिखा हो, यह संभव नहीं। ऐसे प्रधान उत्सव में कविजी अवश्य ही सम्मिलित हुए होंगे अथवा घर से लौटने पर उसका पूर्ण वृत्तांत तो उन्होंने सुना ही होगा। अवश्य ही भूषण शिवाजी को सदैव से राजा और महाराज कहते थे, पर शिवाजी भी तो ऐसा ही करते थे। सो जब उन्होंने अपना विधिवत् शास्त्रानुकूल अभिषेक बड़ी धूम धाम से करना आवश्यक समझा, तब भूषणजी उसका वर्णन करना कैसे अनुचित मानते ? जान पड़ता है कि कहीं न कहीं भूषणजी ने इसका वर्णन किया ही होगा; पर जिस ग्रंथ में यह वर्णन होगा, वह अभी तक कहीं छिपा ही पड़ा हुआ प्रतीत होता है।

(२) इन महाशय ने कितनी ही अन्य सुप्रसिद्ध घटनाओं का अपने विदित ग्रंथों मे समावेश नहीं किया है। सो यदि इनके अन्य ग्रंथों का प्रस्तुत होना न मानें, तो आश्चर्य्यसागर में मग्न होना पड़ेगा। इसी प्रकार उस समय के इनके कितने ही निकटस्थ प्रसिद्ध व्यक्तियों के नाम तक इनके विदित ग्रन्थों में नहीं मिलते। भला, शिवाजी और छत्रसाल की भेंट का हाल भूषणजी कैसे न लिखते ? अथवा तानाजी, मोरोपंत एवं गुरुवर श्रीरामदासजी

तथा कविवर तुकारामजी का हाल लिखे बिना भूषणजी कैसे रहते ? शंभाजी के प्रधान कृपापात्र कुलूष * नामक एक कान्य-कुब्ज ब्राह्मण थे, जिन्हें औरंगज़ेब ने पकड़कर मरवा डाला था। भूषण भी कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे। क्या वे कहीं कुलूष का नाम ही न लिखते ? शिवाजी का शील स्वभाव बनाने में उनके पालक दादाजी कोणदेव तथा उनकी माता जीजाबाई का बड़ा प्रभाव पड़ा था। क्या भूषणजी इनका कहीं नाम तक न लेते ? क्या यह संभव है कि भूषणजी ब्राह्मण होकर महात्मा रामदास के एवं कवि होकर मराठी कवियों के शिरोमणि तुकारामजी के विषय में एक दम मौन धारण कर लेते ? भूषणजी, जैसा कि आगे लिखा जायगा, साहूजी के राजत्व काल तक अवश्य जीवित थे; परंतु इनके प्रस्तुत ग्रंथों में साहूजी के विषय में केवल एक छंद मिलता है। इन सब बातों से स्पष्ट विदित होता है कि भूषणजी के कई ग्रंथ देखने का अभी हम लोगों को सौभाग्य नहीं प्राप्त हुआ है।

(३) भूषणजी दीर्घजीवी हुए हैं, और प्रायः १०५ वर्ष की अवस्था में उनका देहांत हुआ। पर शिवराजभूषण उन्होंने केवल छः सात साल के भीतर (सन् १६६७ से १६७३ ईसवी तक) बना डाला। उसके ६०–६५ वर्ष पीछे तक वे जीवित रहे। क्या इतने दिनों में उन्होंने दो चार भी अन्य ग्रंथ न लिखे होंगे ? यह तो विदित ही है कि अंतिम समय तक वे कविता करते रहे।

* वास्तव में इनकी उपाधि कवि कुलेश थी, किन्तु महाराष्ट्र लोग ईर्ष्यावश इनको कलुष अथवा कुलूष कहते थे।

शिवाबावनी एवं छत्रसालदशक के विषय में हमारा यह मत है कि वे स्वतंत्र ग्रंथ नहीं हैं, वरन् भूषणजी के अन्य ग्रंथों अथवा स्फुट कविताओं से संगृहीत हुए हैं।

कवि की जीवनी

भूषण महाराज कान्यकुब्ज ब्राह्मण, कश्यप गोत्री त्रिपाठी (तिवारी) थे। इनके पिता का नाम रत्नाकर था और ये त्रिविक्रमपुर (वर्तमान तिकवाँपुर) में रहते थे। यह तिकवाँपुर यमुना नदी के बाएँ किनारे पर ज़िला कानपुर, पर्गना व डाकखाना घाटमपुर में मौज़ा "अकबरपुर बीरबल" से दो मील की दूरी पर बसा है। कानपुर से जो पक्की सड़क हमीरपुर को गई है, उसके किनारे कानपुर से ३० एवं घाटमपुर से ७ मील पर 'सजेती' नामक एक ग्राम है जहाँ से तिकवाँपुर केवल दो मील रह जाता है। "अकबरपुर बीरबल" अब भी एक अच्छा मौज़ा है जहाँ अकबर बादशाह के सुप्रसिद्ध मंत्री और मुसाहब महाराज बीरबल उत्पन्न हुए (शायद तब इनका कुछ और नाम हो) और रहते थे (शि० भू० के छंद नं० २६ व २७ देखिए)।

सुना जाता है कि उक्त रत्नाकरजी श्रीदेवीजी के बड़े भक्त थे और उन्हीं की कृपा से इनके चार पुत्र उत्पन्न हुए—अर्थात् चिंतामणि, भूषण, मतिराम और नीलकंठ उपनाम जटाशंकर।

शिवसिंह-सरोज में भूषणजी का जन्मकाल संवत् १७३८ विक्रमी लिखा है, परंतु यह अशुद्ध है। शिवसिंहजी भूषण महाराज

का शिवाजी एवं छत्रसाल के दरबारों में रहना मानते हैं; पर शिवाजी सन् १६८० ईसवी (अर्थात् १७३६-३७ विक्रमी) में गोलोकवासी हुए थे। तो क्या भूषणजी अपने जन्म के साल डेढ़ साल पहले ही शिवाजी के यहाँ पहुँच गए? भूषणजी लिखते हैं कि संवत् १७३० में उन्होंने शिवराज भूषण समाप्त किया; पर शिवसिंहजी भूषण एवं मतिराम दोनों ही का जन्म-संवत् १७३८ का लिखते हैं! दुःख का विषय है कि भूषण के ग्रंथों से उनके जन्मकाल का कुछ भी पता नहीं चलता, न मतिराम-कृत रसराज और ललितललाम अथवा चिंतामणि-कृत कविकुल-कल्पतरु से ही कुछ सहायता मिलती है। मतिराम और चिंतामणि-कृत (अपूर्ण) पिंगलों में भी इसका कुछ पता नहीं चलता। भूषणग्रंथावली की बंगवासीवाली प्रति की भूमिका में लिखा है कि चिंतामणिजी के ग्रंथ सन् १६२७ से १६५६ ईसवी तक बने। हम नहीं कह सकते कि इस कथन का क्या प्रमाण है; परंतु यदि यह सत्य मान लिया जाय तो चिंतामणि का जन्म सन् १६११ ईसवी के पीछे का नहीं माना जा सकता; क्योंकि १६ वर्ष की अवस्था के पहले कोई मनुष्य कदाचित् ही काव्यग्रंथ रच सके। इस हिसाब से भूषण का जन्म सन् १६१४ ईसवी के आसपास या उससे पहले का मानना पड़ेगा। हमने आगे सप्रमाण लिखा है कि भूषणजी प्रायः सन् १७४० ईसवी तक जीवित रहे। यदि बंगवासीवाली बात ठीक हो तो भूषण का एक सौ वर्ष से कुछ अधिक काल तक जीवित रहना पाया जायगा। भूषण के छोटे भाई जटाशंकर का

अमरेश-विलास ग्रंथ संवत् १६९८ या सन् १६४१ में बना, ऐसा खोज में मिला है। इससे भी भूषण का जन्म-काल सन् १६१५ के लगभग बैठता है, किन्तु यह निष्कर्ष सन्दिग्ध है क्योंकि जटाशंकर का भूषण का भाई होना अनिश्चित है।

यह बात प्रसिद्ध है कि पहले भूषणजी बिल्कुल अपढ़ और निकम्मे थे एवं चिंतामणिजी कमासुत और कुटुंब के आधार थे। भूषण सदा घर बैठे बैठे बगलें बजाया करते और बड़े भाई की कमाई से पेट भरा करते थे। एक दिन भोजन करते समय भूषण ने अपनी भावज से लवण माँगा। उसने क्रोध से कहा—"हाँ, बहुत सा नमक तुमने कमाकर रख दिया है न, जो उठा लाऊँ!" यह बात इन्हें असह्य हो गई और इन्होंने मुँह का ग्रास उगलकर कहा—"अच्छा, अब जब नमक कमा कर लावेंगे, तभी यहाँ भोजन करेंगे।" ऐसा कह भूषणजी खाली हाथ घर से यों ही निकल पड़े और कहते हैं कि इन्होंने अपनी जिह्वा काट कर श्रीजगदंबाजी पर चढ़ा दी और एक दम भारी कवीश्वर हो गए। इस बीसवीं शताब्दी में लोग शायद ऐसी बातों पर विश्वास न कर सकें, पर कम से कम जीभ का काटना संभव हो सकता है। हमने एक भाट को देखा है, जिसने इसी भाँति श्रीदेवीजी पर अपनी जिह्वा कुछ ही दिन पूर्व चढ़ाई थी। दासापुर के बलदेव कवि ने भी अपनी जिह्वा काट कर देवीजी पर चढ़ाई थी। उनकी कटी हुई जिह्वा हमने देखी है। अस्तु जो हो, इसमें सन्देह नहीं कि भूषण जी ने इसी समय

से विद्याध्ययन में बहुत चित्त लगाया और वे थोड़े ही दिनों में कविता करने लगे।

इसके बाद वे चित्रकूटाधिपति हृदयराम के पुत्र रुद्रराम सोलंकी के आश्रय में कुछ दिन रहे। इनकी कवित्व शक्ति से प्रसन्न हो रुद्रराम ने इन्हें सन् १६६६ के लगभग "कविभूषण" की उपाधि दी और तभी से ये भूषण कहलाने लगे, यहाँ तक कि इनके मुख्य नाम का अब पता भी नहीं लगता (शि० भू० छंद २८ देखिये)। जान पड़ता है कि पहले भी ये अपना उपनाम भूषण रखते थे और यही इन्हें उपाधि भी मिली। रुद्रराम सोलंकी का पता तो इतिहासों में नहीं लगता, किन्तु इनके पिता हृदयराम का लगता है। आप गहोरा के राजा थे और आप के राज्य में १०४३½ ग्राम थे एवं बीस लाख वार्षिक आय थी। गहोरा चित्रकूट से तेरह मील पर है। चित्रकूट पर भी आप का राज्य समझ पड़ता है। करवी का उसमें सम्मिलित होना लिखा ही है और वह चित्रकूट से तीन ही मील पर है। सन् १६७१ के लगभग महाराज छत्रसाल ने शेष बुंदेलखंड के साथ इस राज्य पर भी अधिकार कर लिया। सन् १७३१ के लगभग महाराज छत्रसाल के राज्य का बटवारा हुआ। उक्त बातें मध्य भारत, बाँदा, हमीरपुर, रीवाँ तथा पन्ना के गज़ेटियरों से विदित होती हैं। मुंशी श्यामलाल के इतिहास से विदित होता है कि उपर्युक्त बटवारे में गहोरा का राज्य महाराज छत्रसाल के बड़े बेटे हृदय-शाह के भाग में पड़ा था। सोलंकियों का राज्य एक बार छूटकर

गहोरा पर फिर न हुआ। गहोरा के सोलंकियों को सुरकी कहते थे। अब ज़िला बाँदा में प्रायः एक सहस्र सुरकी ठाकुर हैं।

यहाँ से भूषणजी महाराज शिवाजी के दरबार में गए। यह वह समय था जब शिवाजी दक्षिण के अनेक दुर्ग जीत कर रायगढ़ में राजधानी नियत कर चुके थे (शि० भू० छंद १४ देखिए) अर्थात् सन् १६६२ ईसवी के पश्चात्। इस समय भूषणजी २७ वर्ष के थे। इससे जान पड़ता है कि इधर उधर बहुत न रहकर आप शिवाजी के यहाँ गए थे। अनुमान होता है कि भूषणजी महाराज शिवाजी के यहाँ उस समय के कुछ ही पीछे पहुँचे थे, जब वे आगरे से निकल आए थे और छत्रसाल बुँदेला से मिल चुके थे अर्थात् सन् १६६७ ईसवी के अंत में। निम्नलिखित विचारों से इस अनुमान की पुष्टि होती है—

(१) शिवाजी के यहाँ पहुँचने पर भूषणजी उनका वर्तमान निवासस्थान रायगढ़ बतलाते हैं और सिवाय उसके और कहीं शिवाजी का रहना नहीं लिखते। शिवाजी सन् १६६२ ईसवी में रायगढ़ आए थे, अतः भूषणजी उनके दरबार में सन् १६६२ के पश्चात् पहुँचे होंगे (शि० भू० छंद १४ व १६)।

(२) शिवाजी सन् १६६६ में आगरे गए थे और वहाँ से लौटकर घर तक पहुँचने में उन्हें नौ मास लगे थे। अतः यदि इस समय के पहले भूषणजी शिवाजी के यहाँ पहुँचे होते, तो इन नौ मासों के बीच में हतोत्साह होकर वे घर लौट आते। उन्होंने सन् १६७३ ईसवी में शिवराजभूषण समाप्त किया,

और जान पड़ता है कि सन् १६६७ ईसवी में ही उसका निर्माण प्रारंभ कर दिया था; क्योंकि ग्रंथारंभ ही में तीन बड़े प्रभावशाली छंदों में शिवाजी के दिल्लीश्वर से साक्षात्कार का वर्णन है (छंद नंबर ३४, ३५ व ३८ देखिए)। यदि भूषणजी सन् १६६६ के पहले शिवाजी के यहाँ पहुँचे होते और हतोत्साह होकर लौट आते, तो इतने शीघ्र, एक ही साल के भीतर, उस समय के भयावने मार्ग का इतना लंबा सफ़र करके अपने घर से फिर महाराष्ट्र देश तक न पहुँच सकते। इससे विदित होता है कि शिवाजी के आगरे से लौटने के पश्चात् भूषण उनके दरबार में हाजिर हुए (अर्थात् सन् १६६७ में)।

(२) यदि भूषणजी सन् १६६७ के बीच तक शिवाजी के यहाँ पहुँच गए होते; जब कि छत्रसाल बुँदेला ने शिवाजी से भेंट की थी (लालकृत छत्रप्रकाश देखिए), तो वे इस भेंट का हाल शिवराजभूषण में ही कहीं न कहीं अवश्य लिखते। इससे जान पड़ता है कि १६६७ ईसवी के अंत में भूषणजी शिवाजी के यहाँ पहुँचे होंगे।

भूषणजी के जन्म से लेकर रुद्रराम सोलंकी के यहाँ जाने तक में तो कोई दो मत नहीं हैं, पर यहाँ से कतिपय लोग इनका दिल्लीश्वर औरंगज़ेब के यहाँ जाना बतलाते हैं और बादशाह से लड़ाई झगड़े की बातें करके इनका शिवाजी के यहाँ जाना मानते हैं; पर ये बातें अग्राह्य सी हैं। चिटणीस की बखर में लिखा है कि चिन्तामणि के भाई भूषण कवि शिवाजी के दरबार में जाकर

और वहाँ कुछ काल तक रहकर शिवाजी की प्रशंसा के बहुत से छंद रचकर अपने घर वापस गए। अनन्तर वे दिल्ली में औरंगज़ेब के दरबार में पहुँचे। वहाँ जो घटनाएँ घटीं, उनके विषय में बखर-कार यों लिखता है—"भूषणजी ने औरंगज़ेब से यह कहा कि मेरे भाई (चिंतामणिजी) की शृङ्गार रस की कविता सुनकर आपका हाथ ठौर कुठौर पड़ता होगा; पर मेरा वीर काव्य सुनकर वह मोछों पर पड़ेगा। सो पहले पानी से धोकर हाथ शुद्ध कर लीजिए"। इस पर बादशाह ने कहा कि यदि हाथ मूँछ पर न गया, तो तुम्हें मृत्यु दंड मिलेगा। इतना कहकर हाथ धोकर वह छंद सुनने लगा। भूषण ने भी वीर रस के ऐसे ऐसे बढ़िया छंद शिवाजी की प्रशंसा के पढ़े कि उनमें शत्रुयश का गान होते हुए भी औरंगजेब का हाथ मूँछ पर गया। यह हाल महाराज शिवाजी को सुन पड़ा। तब उन्होंने भूषण को फिर अपने दरबार में बुलाया और वे वहाँ पधारे। यह कथा कुछ आश्चर्यमयी अवश्य है किंतु असंभव नहीं। मुग़ल दरबार में हिन्दी कवि भी मान पाते थे। कालिदास त्रिपाठी ने औरंगज़ेब के दरबार में जाकर उसकी प्रशंसा के छंद बनाए थे, जिनमें से एक 'मिश्रबन्धुविनोद' में भी लिखा है। बखर के उक्त कथन से सिद्ध है कि भूषण शिवाजी के यहाँ जाकर पीछे से औरंगज़ेब के यहाँ गए थे। एक भँड़ौवा भी सुना गया है जो यों है—

तिमिरलंग लइ मोल रही बाबर के हलके।
चली हुमाऊँ संग गई अकबर के दल के॥

जहाँगीर जस लियो पीठि को भार हटायो।
साहजहाँ करि न्याव ताहि पुनि माँड़ चटायो॥
बलरहित भई पौरुष थक्यो दुरी फिरत वन स्यार डर।
औरंगज़ेब करिनी सोई लै दीन्हीं कविराज कर॥

इस भँडौवामें किसी कवि का नाम नहीं और न यही ध्यान में आता है कि इतना बड़ा बादशाह किसी कवि को ऐसी बुड्ढी हस्तिनी देता। संभव है कि किसी उर्दू या फारसी के कवि को बादशाह ने कोई हस्तिनी दी हो, क्योंकि कवि यह नहीं कहता कि स्वयं उसी ने वह करिणी पाई; अथवा यह भी संभव है कि औरंगज़ेब की कट्टरता से नाराज़ होकर किसी ने उसका उपहास करने को यों भी भँडौवा बना डाला हो। अस्तु।

शिवाजी की राजधानी में पहुँच कर भूषणजी संध्या को एक देवालय में ठहरे। कुछ रात बीते महाराज शिवाजी भी अकेले ही वहाँ पूजनार्थ पहुँचे। भूषण से उन्होंने पूछा और हाल जान कर कहा कि शिवराज के दरबार में पहुँचने के पूर्व हमें भी कोई छंद सुनाइए। भूषण ने बड़ी कड़क से शि० भू० का छं० नं० ५६ पढ़ा। शिवाजी ने उनकी प्रशंसा कर उस छं० को फिर सुनना चाहा और भूषण ने कह सुनाया। इसी भाँति १८ * बार इसी छंद को पढ़कर भूषणजी थक गए और १९ वीं बार आगंतुक

* कोई कोई कहते हैं कि १८ नहीं ५२ बार भूषण ने ५२ भिन्न भिन्न छंद पढ़े और वे ही छंद शिवाबावनी के नाम से प्रसिद्ध हुए, पर यह नितांत अशुद्ध है (शिवाबावनी संबंधी भूमिकांश देखिए)। कुछ लोग यह भी कहते हैं कि एक ही

(शिवाजी) की पुनः प्रार्थना पर भी न पढ़ सके। तब शिवाजी ने अपना नाम बतला कर कहा कि हमने प्रतिज्ञा की थी कि जितनी बार आप यह छंद पढ़ेंगे उतने लक्ष मुद्रा, उतने हाथी और उतने ही ग्राम हम आपको देंगे। अधिक मिलना आपके भाग्य में न था। भूषण जी ने उतने ही पर पूर्ण संतोष प्रकट कर कहा कि अब विशेष मुझे क्या चाहिए ?* निदान इसी समय से शिवाजी के यहाँ जा वे राजकवि बने। इसी समय (१६६७ ईसवी के अंत) से ये महाशय धीरे धीरे सन् १६७३ ईसवी (संवत् १७३०) तक "शिवराज भूषण" ग्रंथ के छंद अलंकारों के हिसाब पर बनाते रहे (इस विषय पर शिवराज भूषण संबंधी भूमिकांश देखिए)।

सन् १६७४ या ७५ ईसवी के आसपास भूषणजी कुछ दिनों के लिये अपने घर लौटे और रास्ते में छत्रसाल बुँदेला के यहाँ पहुँचे। उन्होंने संभवतः छत्रसाल-दशक के दो प्रारंभिक दोहे एवं छंद नं० ३ इस अवसर पर पढ़े और बड़े सम्मान के साथ वे कुछ दिन वहीं रहे। चलते समय छत्रसालजी ने भूषण के

छंद ५२ बार पढ़ा गया; पर १८ बार ही पढ़ा जाना अधिक मान्य प्रतीत होता है। शिवाजी का दान निम्नलिखित छंदों में वर्णित है जो उपर्युक्त बड़े दान को सत्यता सिद्ध करते हैं, यथा शि० भू० छंद १४०, १७१, १७५, २१५, ३२६, २२१, २८० २८३, ३३६, ३४०, इत्यादि इत्यादि।

* सं० १७६० के लोकनाथ कवि भूषण को ५२ हाथी मात्र मिलना लिखते हैं। इससे ग्रामों तथा १८ लाख की कथा संदिग्ध है। प्रचुर धन मात्र ठीक है।

शिवाजी कृत सम्मान का ध्यान कर उनकी पालकी का डंडा स्वयं अपने कंधे पर रख लिया। तब तो भूषणजी अत्यंत प्रसन्न हो चट पालकी से कूद पड़े और "बस महाराज! बस" कहते हुए दशक के संभवतः छंद नं० ४ व ५ एवं दो चार अन्य कवित्त, जो अप्राप्य हैं, तत्काल पढ़े होंगे। छंद नं० ३ में उन्होंने छत्रसाल जी को "लाल छितिपाल" क्या ही ठीक कहा है, क्योंकि उन महाराज की अवस्था उस समय केवल २४, २५ साल की थी। वैसे ही छंद नं० ४ व ५ में भी किसी घटना विशेष की बात न कहकर यों ही छत्रसालजी की प्रशंसा की गई है। छत्रसाल ने तब तक कोई ऐसी बड़ी लड़ाई नहीं जीती थी जो सलहेरि परनालो इत्यादि युद्धों के द्रष्टा और वर्णनकर्ता भूषणजी की निगाह में जँचती। बुँदेला महाराज की उस समय भूषणजी ने छत्रसाल हाड़ा (महाराज बूँदी) से तुलना करके भी मानो प्रशंसा ही की है; क्योंकि तब तक वास्तव में वे ५२ युद्धों में सम्मिलित रहने और लड़नेवाले वीरवर हाड़ा महाराज के बराबर कदापि न थे, यद्यपि आगे चल कर बूँदीनरेश से बहुत अधिक बढ़ गए।

कुछ दिन अपने घर रहकर भूषणजी ने कमाऊँ महाराज के यहाँ जाकर स्फुट छंद नं० ६ पढ़ा। महाराज ने समझा कि भूषणजी के सम्मान की जो बातें शिवाजी के संबंध में उन्होंने सुनीं, वे शायद ठीक न होंगी। सो वे कविजी की वैसी खातिर बात किए बिना ही उन्हें एक लक्ष रुपए का दान देने लगे। तब भूषणजी ने कहा कि अब रुपए की चाह नहीं; हम तो केवल यह देखने

आए थे कि महाराज शिवराज का यश यहाँ तक पहुँचा है या नहीं। यह कह भूषणजी रुपया लिए विना घर लौट आए। जान पड़ता है कि इसी प्रकार भूषणजी छत्रसालजी के यहाँ भी गए थे; पर अभूतपूर्व सम्मान से मुग्ध हो उन्हें शिवाजी के जीते जी भी छत्रसाल को अपनी सरकार मानना ही पड़ा।

थोड़े दिनों बाद ये महाराज शिवाजी के यहाँ फिर गए और समय समय पर उनके कवित्त बनाते रहे जिनमें शिवावावनी के छंद भी हैं। संभव है कि इन दिनों इन्होंने शिवाजी पर दो एक और ग्रंथ भी बना डाले हों जिनका अब पता नहीं चलता। सन् १६८० ईसवी में शिवाजी के स्वर्गवासी होने पर कदाचित् छत्रसालजी के यहाँ होते हुए ये फिर घर लौट आए और उक्त छत्रसालजी के यहाँ आते जाते रहे। सन् १७०७ ई० में जब साहूजी ने दिल्लीश्वर की क़ैद से छूटकर अपना राज्य पाया, तब भूषणजी अवश्य ही उनके यहाँ गए होंगे और सदा की भाँति सम्मानित हुए होंगे। साल डेढ़ साल वहाँ रह कर भूषणजी फिर घर लौट आए और आनंद से रहने लगे होंगे।

जान पड़ता है कि सन् १७१० ई० के निकट अपने अनुज मतिरामजी के कहने से ये महाशय बूँदीनरेश राव बुद्धसिंह के दरबार में गए और उनके वृद्ध प्रपितामह सुप्रसिद्ध महाराज छत्रसाल हाड़ा के दो छंद (छ० सा० दशक, छंद १ व २) और स्वयं राव बुद्ध का एक कवित्त (स्फुट नंबर ३) पढ़ा। अवश्य ही जैसी ख़ातिर बात बूँदी में मतिरामजी की होती थी, उससे कुछ

विशेष भूषणजी की हुई होगी। पर भूषण महाराज का चित्त तो बढ़ा हुआ था। उन्हें यह खातिर कुछ जँची नहीं और वे असंतुष्ट रहे। यों तो भूषणजी वहीं कुछ कहे बिना न रहते (जैसा कि कमाऊँ में किया था), पर मतिरामजी की हानि के विचार से कुछ न बोले होंगे और महेवा या पन्ना होकर छत्रसाल से मिलते हुए घर लौटे होंगे। इसी मौक़े पर "और राव राजा एक मन में न ल्याऊँ अब साहू को सराहौं कै सराहौं छत्रसाल को" वाला छंद (छ० सा० दशक नं० १०) बना होगा। यह बात ध्यान में रखने योग्य है कि सन् १७०७ ईसवी में जाजऊ का समर जीतने पर औरंगज़ेब के पुत्र बहादुर शाह बादशाह ने राव बुद्ध को "राव राजा" की उपाधि दी थी, सो भूषणजी के उपर्युक्त कवित्त में "राव राजा" शब्दों से राव बुद्ध का साफ़ इशारा है, एवं कहने को ये शब्द किसी राव या राजा पर घटित किए जा सकते हैं। राव बुद्ध सन् १७०६ ई० के लगभग गद्दी पर बैठे थे।

जान पड़ता है कि मतिराम जी अपना सम्मान बढ़ाने के लिये ही भूषण जैसे राजसम्मानित एवं जगत् प्रसिद्ध कवि को अपनी सरकार में हठ करके ले गए होंगे; नहीं तो प्रायः ७१ वर्ष की अवस्था में उस समय की तीन चार सौ मील की दुर्गम यात्रा करके भूषण जी बूँदी जाने का श्रम कदापि न उठाते। संभव है कि राव बुद्ध ही कारणवश इस ओर आए हों और तब भेंट हुई हो। यह इस बात का भी प्रमाण है कि मतिराम अवश्य भूषण जी के भाई थे। राव बुद्ध हिंदी के रसिक थे, क्योंकि मतिराम-

जी इनके दरबार में रहते ही थे और इनके प्रपितामह के अग्रज राव भाऊसिंह के यहाँ रहकर 'ललितललाम' बना चुके थे, एवं आगे चलकर कवींद्रजी ने भी राव बुद्ध की प्रशंसा में कई कवित्त कहे हैं। तो भी भूषणजी राव बुद्ध की खातिर बात से बिलकुल अप्रसन्न रहे, यहाँ तक कि इसके पश्चात् उन्होंने साफ़ कह दिया कि अब कोई रावराजा मन में भी न लाऊँगा! इससे स्पष्ट विदित होता है कि छत्रसाल बुँदेला ने लड़कपन के जोश में इनकी पालकी का डंडा अवश्य कंधे पर रख लिया होगा, क्योंकि ये शिवाजी द्वारा भी सम्मानित थे और छत्रसाल शिवाजी को बहुत ही पूज्य दृष्टि से देखते थे, जैसा कि लालकृत "छत्रप्रकाश" से विदित होता है। इसी छंद में इन्होंने छत्रसाल के पहले साहू को सराहने की प्रतिज्ञा की है, सो भी ऐसे समय में जब ये स्वयं छत्रसाल के यहाँ विद्यमान थे। इससे स्पष्ट है कि साहूजी ने भी इनका पूरा सम्मान किया होगा। लगभग सन् १७१५ ई० में एक बार भूषणजी फिर साहूजी के दरबार में गए होंगे। इसी समय स्फुट छंद नंबर ७ बनाया गया होगा। यह छंद उस समय का है कि जब साहूजी का राज्य भली भाँति स्थापित हो चुका था और उन्होंने उत्तर का धावा किया था। यह छंद मुद्रित प्रतियों में भी छपा है।

भूषणजी की कविता अथवा किसी अन्य प्रसंग से उनके सन् १७४० के पीछे जीवित रहने का कोई प्रमाण नहीं मिलता। उनके छंदों में इस समय तक के महापुरुषों के कथन हैं। अब

हम यही समझते हैं कि भूषणजी सन् १७४० ई० के लगभग १०५ वर्ष की अवस्था में स्वर्गवासी हुए होंगे। इधर साहित्यप्रेमियों ने भूषणजी के विषय में नवीन ढूँढ़ खोज की और हमने भी बहुत कुछ नवीन ऐतिहासिक सामग्री एकत्र की। भूषणजी ने उन दारा-शिकोह के विभव का पूर्ण वर्णन किया है जिन्हें सन् १६५८ या १६५९ में औरंगज़ेब ने मरवा डाला था। इससे सन् १६५७ के लगभग इनके रचना-काल का आरम्भ समझ पड़ेगा। मिर्ज़ा राजा जयसिंह और उनके पुत्र महाराज रामसिंह की प्रशंसा में भी इनके छंद मिले हैं। जयसिंह सन् १६२३ में आमेर (जयपुर) की गद्दी पर बैठे थे और रामसिंह सन् १६६७ में। महाराज अव-धूतसिंह सन् १७०० से १७५५ तक रीवाँ के नरेश रहे। ये केवल छः मास की अवस्था में गद्दी पर बैठे थे। इनकी प्रशंसा का भूषण-कृत एक बहुत बढ़िया छंद स्फुट कविता में लिखा है। यह सन् १७१५ के लगभग बना होगा। असोथर के महाराज भगवंतराय खीची सन् १७४० में मरे। उनकी मृत्यु पर शोक प्रकट करने वाला स्फुट छन्द नम्बर ८ भूषण-कृत कहा जाता है।

यद्यपि इस छंद की शैली कुछ कुछ तो भूषण की कविता से मिलती जुलती है, तथापि ऐसे प्रभावपूर्ण थोड़े बहुत छंद कई अन्य हिन्दी कवियों ने भी बनाए हैं। इस छंद को भूषण विषयक वाद में एक महाशय ने लिखा था, जिसमें पहले जसवंतराय का नाम लिखा था और पीछे भगवंतराय का बतलाया गया। छंद मध्य देश के किसी राजा का कथन करता है, किंतु भगवंतराय

युक्तप्रांत के निवासी थे। आर्य्य काल में युक्त प्रांत भी मध्य देश कहलाता था। छंद मुक्तक मात्र है और किसी प्रामाणिक रीति से इसका भूषण-कृत होना सिद्ध नहीं किया गया है। यही छंद कुछ लोग 'भूधर' कवि का रचा बतलाते हैं। भूधर भगवंतराय के आश्रित भी थे। कुल बातों पर विचार करके भूषण का मृत्यु-काल सन् १७४० के लगभग बैठता है। सन् १६४९ में उत्पन्न होने वाले छत्रसाल को आप लाल छितिपाल अर्थात् लड़के कहते हैं, इससे तथा अन्य विचारों से हमने इनका जन्म-काल सन् १६३५ के इधर उधर माना है। खेद का विषय है कि भूषणजी के घरेलू चरित्रों से हम नितांत अनभिज्ञ हैं। इनके विवाह अथवा पुत्रों पुत्रियों एवं मित्रों के विषय में हम कुछ भी नहीं कह सकते। केवल इतना कह सकते हैं कि इनका विवाह अवश्य हुआ था और ये पुत्रवान् भी थे; क्योंकि सुना जाता है कि प्रसिद्ध दोहा-कार वृंद कवि एवं सीतल कवि इन्हीं के वंशधर थे; और तिकवाँ-पुर में जाँच करने से विदित हुआ कि ज़िला फ़तेहपुर एवं कहीं मध्य प्रदेश में भूषणजी के वंशज अब भी वर्तमान हैं। इसका ठीक पता कुछ भी नहीं है। नाती को हाथी दयो जापै ढुरकति ढाल। साहू के जस कलस पै ध्वज बाँधी छतसाल॥ इस छन्द में भूषण ने अपने नाती के मान का कथन किया है। भूषण महा-राज धनसंपन्न थे और बड़े आदमियों की भाँति रहते थे। देश भर में और राजा महाराजों के यहाँ इनका सदैव बड़ा मान रहा। इनकी कविता से इतना और भी ज्ञात होता है कि इन्होंने देशाटन

बहुत किया था, क्योंकि इनके छंदों में सैकड़ों स्थानों एवं तत्कालीन ऐतिहासिक मनुष्यों के नाम आए हैं।

प्राचीन ग्रन्थों में भूषण के वंश का कुछ वर्णन मिलता है। वंश-भास्कर सन् १८४० का ग्रन्थ है जिसमें लिखा है कि 'जेठो भ्राता भूपनरु मध्य मतिराम तीजो चिंतामनि विदित भये ये कविता प्रवीन'। मनोहरप्रकाश सन् १८९५ का ग्रंथ है जो चिंतामणि, भूषण, मतिराम और जटाशंकर को इसी क्रम से भाई मानता है। यही मत शिवसिंह-सरोज का भी है जो इससे १८ वर्ष पुराना ग्रंथ है। मतिराम के वंशधर बिहारीलाल ने संवत् १८७२ में रस-चन्द्रिका नाम्नी एक टीका की पुस्तक लिखी। उसमें आपने लिखा है कि मेरे पिता का नाम जगन्नाथ, पितामह का सीतल तथा प्रपितामह का मतिराम था। आप अपने को कश्यप गोत्री कान्यकुब्ज तिवारी कहते हैं और यह भी लिखते हैं कि भूषण, चिन्तामणि तथा मतिराम को नृप हमीर ने सन्मान से जमुना किनारे त्रिविक्रमपुर में बसाया था। इन्हीं बिहारी लाल के समकालीन नवीन कवि भी इन्हें मतिराम का वंशधर मानते हैं। पंडित मयाशंकर जी याज्ञिक ने चिंतामणि-कृत रामाश्वमेध ग्रंथ में यह देखा है कि चिंतामणि अपने को कान्यकुब्ज, कश्यपगोत्री, मनोह के तिवारी कहते हैं। बिलग्राम के विद्वान् गुलाम अली ने सन् १७५३ में 'तज़किरा-सर्व-आज़ाद-हिन्द' ग्रन्थ लिखा। उसमें आप लिखते हैं कि चिंतामणि के भाई मतिराम और भूषण थे। सन् १७०३ के लोकनाथ कवि ने लिखा है कि शिवाजी ने भूषण को ५२ हाथी देकर सन्मा-

नित किया। सन् १७३४ के दास कवि ने लिखा है कि भूषण ने कविता से प्रचुर संपत्ति कमाई। इन बातों से भूषण संबंधी कई घटनाएँ दृढ़ता के साथ ज्ञात होती हैं।

एक महाशय ने किसी वत्स गोत्री तिवारी मतिराम की वनाई हुई वृत्त कौमुदी का कथन किया है। इन मतिराम का निवासस्थान वनपुर था और इनके पिता विश्वनाथ थे। पहले तो इस ग्रंथ का अस्तित्व ही संदिग्ध है, क्योंकि जिन्होंने इसका कथन किया है, वे कहते हैं कि अब यह मिल नहीं रहा है। यदि इसका अस्तित्व मानें भी तो इसके रचयिता वत्स गोत्री मति-राम थे जो कश्यप गोत्री हमारे मतिराम से भिन्न ही थे। अतएव वृत्त-कौमुदी के कथनों से भूषण और मतिराम के भ्रातृत्व में कोई संदेह नहीं पड़ता। सूर्यमल्ल बूँदी दरबार के कवि थे। उनके सन् १८४० के ग्रंथ वंशभास्कर में लिखा है कि मतिराम को बूँदी दरबार से समस्त वस्त्र, आभूषण, चार हज़ार रुपए, ३२ हाथी तथा रिड़ी और चिड़ी नामक दो ग्राम मिले थे। इतना पाने पर भी भूषण के आगे मतिराम का संपत्तिशाली कवियों में कुछ भी वखान नहीं हुआ। इससे भी जान पड़ता है कि भूषण ने कविता से मतिराम की अपेक्षा वहुत ही अधिक संपत्ति कमाई थी। इन महाकवि की कविता से प्रकट होता है कि ये बड़े ही सत्यप्रिय और यथार्थ-भाषी थे, यहाँ तक कि इन्होंने शिवाजी की पराजय का भी वर्णन किसी न किसी रीति से कर ही दिया; और जहाँ शिवाजी ने कोई बेजा काम किया है, उसे भी कह दिया

(देखिए शि० भू० छंद नं० ७५, २१२, २१३, २७२)। भूषणजी को हिंदू जातीयता का सदैव पूरा विचार रहता था। ये बड़े ही प्रभावशाली कवि हो गए हैं और इनका जैसा सम्मान अथवा धन किसी कवि ने कविता से अद्यापि उपार्जित नहीं किया।

भूषणजी के प्रस्तुत ग्रंथों में शिवराजभूषण, श्रीशिवाबावनी, छत्रसालदशक तथा स्फुट कवित्त इस ग्रंथ में दिए गए हैं। इनके ग्रंथों से उस समय के राजाओं एवं मुग़ल साम्राज्य की भी दशा विदित होती है। अतः सब से प्रथम हम भूषण की प्रस्तुत कविता से उस समय का जो कुछ हाल ज्ञात होता है, वह लिखते हैं। हर्ष का विषय है कि भूषणजी का वर्णन इतिहास के विरुद्ध नहीं है, क्योंकि इन्हें इतिहास विरुद्ध बनाकर बातें लिखना पसंद न था। इनका लिखा हुआ हाल इतिहास से अधिक विस्तृत अवश्य है, क्योंकि कवि जितने विस्तार और समारोह के साथ कोई घटना लिखता है, वैसा इतिहासकार प्रायः नहीं करता। इसमें केवल सन् संवत् का ब्योरा और घटनाओं का क्रम हम अपनी ओर से लिखते हैं, शेष सब भूषण के छंदों से लिखा जाता है। इनके लिखे अनुसार उस समय का इतिहास यों है।

सूर्य वंश पृथ्वी पर विख्यात है जिसमें परमेश्वर ने बार बार अवतार लिया। इसी वंश में एक बड़ा प्रतापी राजा हुआ जिसने अपना सिर शङ्करजी पर चढ़ाकर अपने और स्ववंशजों के लिये सीसोदिया (हिंदूपति महाराणा उदयपुर एवं नैपाल के राजा इसी उज्ज्वलवंश के हैं) की उपाधि प्राप्त

की *। उसी वंश में एक बड़ा पराक्रमी पुरुप माल मकरंद हुआ जिसके पुत्र राजा शाहजी भौंसला हुए। शाहजी बड़े दानी और बहादुर थे और उन्हीं के पुत्र महाराज शिवराज छत्रपति (शिवाजी) हुए जो भवानी और श्रीशङ्करजी के बड़े भक्त थे और जिन्हें शैव कथाओं के सुनने से बड़ा प्रेम था। वे बड़े ही उदार दानी थे एवं उनके साहस की कोई सीमा ही न थी। उस समय दक्षिण में आदिलशाही, कुतुबशाही, निजामशाही, इमादशाही और बारीदशाही नामक पाँच † राजघराने

---

* वास्तव में सिसोदावासी होने से ये लोग सीसोदिया कहलाते थे।

† ये पाँचों राजघराने दक्षिण की बहमनी राज्य के टूटने पर बने थे। बहमनी राज्य सन् १३४७ ईसवी में स्थापित हुआ था और १५२५ तक रहा। यह राज्य प्रायः वर्तमान हैदराबाद रियासत पर विस्तृत था। बीजापुर सन् १४८९ में स्थापित हुआ और औरङ्गजेब ने इसे १६८६ में छीन लिया। गोलकुंडा सन् १५१२ ई० में स्थापित हुआ और इसे भी औरंगजेब ने सन् १६८८ में जीत लिया। अहमदनगर का राज्य सन् १४९० में स्थापित हुआ और १६३६ ई० में इसे शाहजहाँ ने जीत लिया। एलिचपुर सन् १४८४ में स्थापित हुआ और १६५२ ई० में मुगल राज्य में मिला लिया गया। बिदर राज्य १४९८ में स्थापित हुआ और १६५७ में इसे औरंगजेब ने जीत लिया। इन सब में बीजापुर और गोलकुंडा प्रधान थे। शिवाजी के पिता शाहजी पहले निजामशाही बादशाहों के यहाँ एक प्रधान कारबारी थे और शाहजहाँ से उन्होंने घोर युद्ध किया था और क्रमशः कई बादशाहों को तख्त पर बैठाकर अपने ही बाहु और बुद्धिबल से शाहजहाँ को हैरान कर रक्खा था। तभी तो भूषणजीने उन्हें 'साहि-निजामसखा' (शिव० भू० छंद नं०७) और "साहिन को सरन सिपाहिन को तकिया" (छंद नं० १०) कहा है। इसके बाद ये बीजापुर में नौकर हो गए और तंजौर के

शाह कहलाते थे, जिनके राजस्थान यथाक्रम वीजापुर, गोलकुंडा, अहमदनगर, एलिचपुर और विदर थे। उत्तर में मुगलों का सुविशाल साम्राज्य था। उस समय श्रीनगर, नैपाल, मेवार, ढुंढार, मारवाड़, बुँदेलखंड, झारखंड और पूर्व पश्चिम सब देशों के राजे अर्थात् राना, हाड़ा, राठौर, कछवाहे, गौर इत्यादि सब मुगलों से दबते और उनकी प्रजा के समान थे। वे राज्य तो अवश्य करते थे, परंतु अपनी स्वतंत्रता खो बैठे थे।

ऐसे भयावने समय में शिवाजी ने मुसलमानों का सामना करने का साहस किया। उनकी उच्च अभिलाषा चक्रवर्ती राज्य स्थापित करने की थी। इस परिश्रम का यह फल हुआ कि उन्होंने वाल्यावस्था ही में वीजापुर तथा गोलकुंडा को जीतकर युवावस्था में दिल्लीपति को पराजित किया और उनके राज्य का प्रजा तथा हिंदू समाज पर यह प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ा कि वेद पुराणों की चर्चा एवं द्विजदेवों की अर्चा की प्रथा फिर लोक में फैल गई। शिवाजी ने पहले वीजापुर के वादशाह से लड़ना आरंभ किया। सन् १६५५ में उन्होंने चंद्रावल (चंद्रराव मोरे) को मारकर जावली ज़ब्त कर ली। फिर ये और छोटे छोटे दुर्ग लेते रहे। सन् १६५७ में शिवाजी ने अहमदनगर पर मुगलों के सरदार नौशेरीख़ाँ तथा

निकटस्थ राज्य में अपनी मृत्यु पर्यंत गवर्नरी (शासन) करते रहे। पीछे इनके द्वितीय पुत्र वेंकोजी तंजौर के स्वतन्त्र राजा हो गए थे। उनके वंशधरों से यह राज्य उन्नीसवीं शताब्दी में अंगरेजों ने छीन लिया। लार्ड डलहौजी ने तंजौर के राजा को पोलिटिकल पेन्शन भी बंद कर दी।

कारतलब ख़ाँ से युद्ध किया। सन् १६५८ में औरंगजेब अपने भाई दारा एवं मुराद को मरवा, शाह शुजा को अराकान भगा और अपने पिता शाहजहाँ को कारागार में डालकर राज्य करने लगा। सन् १६५९ में आदिल शाह ने शिवाजी से लड़ने को एक बड़ी सेना के साथ अफ़ज़ल ख़ाँ को भेजा। इस पर संधि की बात चीत चली और यह स्थिर हुआ कि शिवाजी अफ़ज़ल ख़ाँ से अकेले में मिले। इस अवसर पर अफ़ज़ल ने दग़ा करके शिवाजी पर कटार का वार किया। शिवाजी पहले ही से ख़ाँ को मारना चाहते थे, सो उन्होंने ख़ाँ की पसली लोहे के बने हुए शेर के पंजे से नोच ली और फिर गड़बड़ में खड्ग से उसे तथा उसके शरीररक्षक सैयद बंदा को मार डाला। फिर आपने उसकी सब सेना को भी परास्त किया। यह सुनकर उसी सन् में बीजापुराधीश ने रुस्तमेज़माँ को भेजा, परंतु इन से उसे भी पराजित होना पड़ा। सन् १६६१ में इन्होंने शृंगारपुर को जीत लिया। १६६२ में (अपने पिता शाहजी की सम्मति से) इन्होंने रायगढ़ * को अपना निवासस्थान स्थिर किया और राजगढ़ को

* भूषणजी ने रायगढ़ का ही हाल लिखा है, परंतु उसका नाम राजगढ़ लिखा है। शिवाजी सन् १६४७ से १६६२ तक राजगढ़ में रहे थे और १६६२ ई० से मरण पर्यंत (१६८०) रायगढ़ में। भूषणजी ने लिखा है कि शिवाजी ने दक्षिण के सब दुर्ग जीतकर राजगढ़ में वास किया (शि० भू० छंद नं० १४)। फिर शिवराज भूषण ग्रंथ में राजगढ़ का वास वर्तमान काल में वर्णित है। यह ग्रंथ सन् १६६७ या १६६८ में प्रारंभ और सन् १६७३ में समाप्त हुआ था, जब शिवाजी

छोड़ दिया। इस समय ये दक्षिण के सब क़िले जीत चुके थे। शिवाजी की सभा बहुत ही अच्छी और दुर्ग बड़ा ऊँचा तथा दृढ़ था। आपने बहुत से दुर्ग बनवाए और अपना राज्य अनेकानेक विजयों द्वारा बहुत बढ़ाया।

सन् १६६३ में मुगलों ने इनका बल बहुत बढ़ता देखकर जोधपुर के महाराज जसवंतसिंह और शाइस्ता खाँ को इनके विरुद्ध एक बड़ी भारी फ़ौज के साथ भेजा। शाइस्ता खाँ एक लाख फ़ौज के साथ पूना में आकर ठहरा। शिवाजी ने उसे बड़ी बुद्धिमानी से परास्त किया। सन् १६६४ में इन्होंने मुगलों के राज्य में घुसकर सूरत को लूटा और फिर मक्का जानेवाले बहुत से सैयदों की नौकाएँ लूट लीं तथा दंड लेकर उन्हें छोड़ा। इसपर औरंगज़ेब ने बड़ा क्रोध करके एक बड़ा दल जयपुर के महाराज मिर्ज़ा राजा जयसिंह के आधिपत्य में शिवाजी से लड़ने को भेजा। अब इन पर बड़ा संकट पड़ा, क्योंकि ये हिंदू का खून बहाना नहीं चाहते थे। अतः सन् १६६६ में इन्होंने जयसिंह को कुछ गढ़ दिए और फिर आगरे भी गए। औरंगज़ेब ने अभिमान करके इन्हें पंचहज़ारी सरदारों में खड़ा किया। इस पर इन्होंने

राजगढ़ में न थे। इसी से विदित है कि "राजगढ़" लिखने से भूषण का रायगढ़ का प्रयोजन था, नहीं तो उनका राजगढ़ संबंधी समस्त वर्णन अशुद्ध हो जाता है। अतः यही मानना चाहिये कि य और ज में भेद न मानकर भूषण ने रायगढ़ को राजगढ़ लिखा है अथवा लेखकों के भ्रम से उनका वास्तविक शब्द रायगढ़ राजगढ़ हो गया। दूसरा अनुमान ही ठीक जँचता है। इसी लिए हमने मूल में शुद्ध शब्द का प्रयोग किया है।

शाह को सलाम नहीं किया और मूँछ पर ताव देकर अपनी स्वतंत्रता एवं क्रोध प्रकाश किया। इनके रोव से दरवार में सन्नाटा पड़ गया। इनके हाथ में कोई अस्त्र न था, नहीं तो वहीं मार काट होने लगती। निरस्त्र होने से क्रोध के मारे आप मूर्छित हो गए और तव लोग इन्हें गुसलखाने में ले जाकर होश में लाए। इन्हीं कारणों से भूपणजी ने कई स्थानों पर गुसलखाने का वर्णन किया है। फिर आप तरकीव से आगरे से निकल आए और अपना राज्य करने लगे।

सन् १६६९ में औरंगजेव ने हिंदुओं के असंख्य मंदिर खुदवाए, मथुरा को ध्वस्त करके देहरा केशवराय तुड़वा डाला और स्वयं काशी विश्वनाथ के मंदिर तक को नष्ट करके उसके स्थान पर मसजिद वनवाई (शिवा० वा० छंद नं० २०, २१, २२ देखिए) *। सन् १६७० में शिवाजी ने फिर सूरत लूटी। उसी साल आपने उदैभान राठौर को मारकर सिंहगढ़ मुगलों से छीन लिया। यह दुर्ग आपने सन् १६६६ में जयसिंह को दिया था।

मुगलों ने शिवाजी की यह प्रचंड धृष्टता देख वड़ा क्रोध करके एक विकराल सेना दिलेर खाँ और खानजहाँ वहादुर के आधिपत्य में भेजी, परंतु सन् १६७२ ई० में शिवाजी ने सलहेरि पर

---

* उस समय शिवाजी और महाराणा राजसिंह ने औरंगजेव को जो पत्र लिखे थे, वे देखने योग्य हैं। ग्रांट डफ़ कृत मरहठों के इतिहास और टॉड राजस्थान में उनके अनुवाद दिए हुए हैं।

इस वृहत् सेना को पूर्णतया परास्त किया। इस युद्ध में दिल्ली के तैंतीस बड़े सेनापतियों को इन्होंने पकड़ लिया और कोटा बूँदी के राजकुमार किशोरसिंह, मोहकमसिंह, इखलास ख़ाँ आदि को परास्त करके समस्त दिल्ली दल का बड़ा ही विकराल क़तले आम किया। इसी युद्ध में कितने ही रुहेले, सैय्यद, पठान, चंदावत, आदि मारे गए। तदनंतर दिलेर ख़ाँ को पराजित करके शिवाजी ने रामनगर एवं जवार पर वैरियों को परास्त किया और गुजरात को भी नीचा दिखाया।

इसके पश्चात् आपने सन् १६७३ में मृत आदिलशाह के नाबालिग़ पुत्र के पालक एवं समस्त राज्य के प्रबंधकर्त्ता ख़वास ख़ाँ से कुछ देश माँग भेजे, परंतु वज़ीरों ने न दिए। तब दो ही दिनों में दौड़कर आपने बहलोलख़ाँ को हराकर परनाले का क़िला छीन लिया। इस पर ख़वास ख़ाँ ने बहलोल ख़ाँ को आप से लड़ने को फिर भेजा, परंतु उसे मरहठों ने घेर लिया और कृपा करके जाने दिया। फ़रवरी मार्च सन् १६७४ में शिवाजी के सेनापति हंसाजी मोहिते ने जसारी पर बहलोल ख़ाँ को पूर्णतया पराजित किया। इस समय बीजापुर समान शत्रु नहीं रहा था, इसी लिये भूषण लिखते हैं कि "बापुरो एदिलसाहि कहाँ कहाँ दिल्ली को दामनगीर शिवाजी।"*

---

* इस समय जून सन् १६७४ में शिवाजी ने अपना अभिषेक कराया और अपने नाम का सिक्का चलाया। सन् १६६७ ई० में प्रसिद्ध छत्रसाल बुँदेला शिवाजी से मिलने आए थे और इनसे प्रोत्साहित होकर मुग़लों से लड़ने लगे थे। सन् १६७४ तक वे महाराज भी कई छोटे छोटे दलों को जीत बुँदेलों का दल जोड़ मुग़लों से बड़े बल के साथ लड़ने लगे थे।

इस प्रकार अपना बल भली भाँति स्थापित करके शिवाजी सन् १६७६ से ७८ तक अठारह महीने करनाटक वश करने में लगे रहे। ऐसी प्रचंड और प्रभावपूरित इनकी कोई और चढ़ाई नहीं हुई थी और इसका वर्णन भी कवि ने बड़े उत्कृष्ट छंदों में किया है (शि० बा० के छंद नं० ४२, ४५, ४६ देखिए)।

इस समय इनकी ऐसी धाक बँध गई थी कि पुर्तगालवासी तक इन महाशय को नज़रें भेजते थे, बीजापुर एवं गोलकुंडावाले पीछे दबते थे (वरन् पाँच लक्ष और तीन लक्ष रुपए सालाना कर भी देते थे) तथा औरंगज़ेब का राज्य नर्मदा के उत्तर तक रह गया था। इसी समय भूषणजी ने औरंगज़ेब को ललकारा था (शि० बा० नं० ३६ देखिए) शिवराज के प्रयत्नों का फल स्वरूप भूषण ने यथार्थ छंद कहा है "वेद राखे विदित" इत्यादि (शि० बा० नं० ५१ देखिए)। भूषण जी का लिखा हुआ इतिहास इसी जगह समाप्त होता है *।

अब हम पाठकों के लाभार्थ उस समय के ऐसे इतिहास को भी सूक्ष्मतया लिखते हैं जिससे उन्हें भूषण के काव्य का पूर्ण प्रभाव समझने में सुभीता हो।

शिवाजी का जन्म सन् १६२७ ई० में हुआ था। इनकी माता का नाम जीजाबाई था। शाहजी ने एक दूसरा भी विवाह

---

* पाठकगण देख सकते हैं कि ऊपर के इतिहास में, "काव्य" की कुछ तड़क भड़क छोड़, प्रायः सभी बातें सत्य हैं।

कर लिया और वे अपनी नवीन स्त्री के साथ तंजौर में रहने लगे। इसी स्त्री के पुत्र वेंकोजी थे। जीजाबाई अपने पुत्र शिवाजी के साथ शाहजी के मुख्य निवासस्थान पूने में रहती थीं और शाहजी की पैतृक जागीर का प्रबंध करती थीं। इस समय शाहजी ने दादाजी कोणदेव को शिवाजी के पालनार्थ एवं पैतृक संपत्ति के रक्षणार्थ नियत कर रक्खा था। यह जागीर दो लाख रुपये सालाना आय की थी। बालक शिवाजी का पढ़ने लिखने में जी नहीं लगता था, परंतु अस्त्रविद्या के सीखने एवं दौड़ धूप के कामों में उसे अधिक उत्साह रहता था। उसका जी गौओ, ब्राह्मणों और देवालयों की बुरी दशा देख मुसलमानों की ओर से बहुत हट गया था और वह बाल्यावस्था से ही हिंदू राज्य स्थापित करने एवं म्लेच्छों को मार भगाने के स्वप्न देखने लगा था *। शाहजी मुसलमानों के नौकर थे, अतः उन्हें शिवाजी का यह हाल सुन कर बड़ा भय उपस्थित हुआ, और उन्होंने दादाजी को इसका निषेध करने को लिख भेजा, परंतु पिता और पालक दोनों के निषेध करने पर भी बालक शिवाजी ने अपना ढंग नहीं बदला। वह क़िलेदारों से एक एक करके दुर्ग लेने लगा। बड़ा आदमी होता हुआ भी छोटे छोटे लोगों के यहाँ तक यह चला जाता था, और इसी लिये वे लोग इसे बहुत चाहने लगे और सच्चे चित्त से इसके अनुयायी हो गए। इसी समय दादाजी कोणदेव मृत्युशय्यापर पड़े और मरने के

---

* वह समय ही ऐसा अनिश्चित था।

पहले उन्होंने शिवाजी को हृदय से लगाकर इसे मुसलमानों से युद्धार्थ प्रोत्साहित किया।

इसी समय से शिवाजी और भी साहस के काम करने लगे। अब आप आदिल शाह से खुल्लमखुल्ला लड़ने में प्रवृत्त हुए, यद्यपि उस समय भी शाहजी उन्हीं आदिल शाह के ही नौकर थे। अंत में शाह ने शिवाजी के विरोध में शाहजी की भी गुप्त सम्मति का भ्रम करके उन्हें कारागृह में डाल दिया, परंतु शिवाजी ने शाहजहाँ की नौकरी करना स्वीकार करके उसके दबाव से अपने पिता को बीजापुर के कारागार से छुड़वा लिया। इसके कुछ पीछे शाह जान गया कि शिवाजी अपने बादशाह ही का नहीं वरन् पिता का भी विरोधी है; अतः उसने शाहजी को फिर तंजोर भेज दिया। शिवाजी ५३ वर्ष की अवस्था में सन् १६८० ई० में स्वर्गवासी हुए। मरते समय आपने पाँच करोड़ रुपए वार्षिक आय का राज्य छोड़ा। किसी किसी ने शिवाजी को सोलंकी कहा है, परंतु सोलंकी अग्निवंशी हैं और शिवाजी सूर्य्य-वंशी थे।

इसी सन् में उदयपुर के महाराणा राजसिंह ने मुग़लों की अधीनता को लात मारकर औरंगज़ेब का सामना करके चार घोर युद्धों में उसे परास्त किया। प्रथम युद्ध नालघाटी के पास हुआ जिसमें मुग़लों की पचास हज़ार सेना औरंगज़ेब के पुत्र अकबर के साथ थी। दूसरी लड़ाई देसौरीघाटी के आगे हुई। उसमें भी मुग़लों की उतनी ही सेना शाहज़ादा अकबर को बचाने गई

थी। तीसरे युद्ध में स्वयं औरंगज़ेब शाहज़ादा आज़म के साथ मुग़लों का मुख्य दल लिए अकबर और दिलेरखाँ की बाट जोहता था। इस तीसरे युद्ध में औरंगज़ेब को बड़ी ही कादरता से भागना पड़ा और शाही झंडा, हाथी और साज सामान राणाजी के हाथ लगे। जब औरंगज़ेब भागकर अजमेर पहुँचा, तब उसने वहाँ से खान रुहेला को बारह हज़ार सेना के साथ साँवलदास से लड़ने भेजा; परंतु यह दल भी पुरमंडल में पराजित हुआ। इसी समय पर राणाजी ने अपने प्रधान अमात्य दयालसाह को भेजा और उन्होंने मालवा से नर्मदा और बेतवा तक का देश लूटा। फिर सारंगपुर, देवास, सारोंज, मंडी, उज्जैन और चँदेरी भी लूटे गए। इसी समय उसने अपना दल महाराणा के बड़े पुत्र जयसिंह की सेना से मिलाकर शाहज़ादा आज़म को चित्तौर के समीप परास्त किया। तब महाराणा के द्वितीय पुत्र भीम ने अपना दल जोधपुर के राठौरों के दल से मिलाकर शाहज़ादा अकबर और तहौवरख़ाँ को गनोरा पर हराया। इस प्रकार मुगलों की प्रचंड हार से प्रोत्साहित होकर सीसोदियों और राठोरों ने शाहज़ादा अकबर को अपनी ओर मिलाकर औरंगज़ेब को तख़्त से उतार देने का प्रबंध किया, परंतु दुर्भाग्यवश इनको यह संदेह हो गया कि अकबर गुप्त रीति से अपने पिता से मिला हुआ है; अतः जीत जिताकर ये अपने इरादे से हट गए और औरंगज़ेब बच गया।

इस युद्ध में सीसौदियों और राठौरों ने मिलकर औरंगज़ेब से युद्ध किया। राठौरों के मिलने का यह कारण था कि उनके

महाराज जसवंतसिंह भीतरी सूरत से औरंगज़ेब के घोर शत्रु थे, परंतु दिखाने को उससे मिले हुए थे। इसका कारण इनका हिंदुओं से प्रेम एवं औरंगज़ेब की कट्टरता थी। जब ये महाराज मुग़लों की ओर से सन् १६६३ ई० में शाइस्ताख़ाँ के साथ शिवा जी से लड़ने गए थे, तब शिवाजी से मिलकर इन्होंने शाइस्ताख़ाँ के दल की दुर्गति करा डाली थी। इसी प्रकार शाहशुजा से मिल कर इन्होंने औरंगज़ेब को धोखा दिया था। इन कारणों से औरंगज़ेब इनसे बहुत कुढ़ता था, परंतु कई उचित कारणों से इनसे खुल्लमखुल्ला लड़ना अच्छा नहीं समझता था। इसी कारण उसने इन्हें काबुल में लड़ने के लिये भेज दिया और वहाँ जब ये महाराज सन् १६८० में मर गए, तब उसने राठौरों पर क्रोध प्रकट किया। महाराज जसवंतसिंह के सब पुत्र मर चुके थे, केवल एक कई मास का लड़का, जो काबुल में पैदा हुआ था, जीवित था। जब राठौर लोग काबुल से लौटकर दिल्ली आए, तब औरंगज़ेब ने उन्हें घेर लिया और उस लड़के सहित उन्हें मार डालने का पूर्ण प्रयत्न किया। परंतु राठौरों ने उस बच्चे को किसी प्रकार बचा लिया और मुग़लों से लड़ते भिड़ते वे जोधपुर जा पहुँचे। मुग़लों ने उनका पिंड जोधपुर में भी न छोड़ा और प्रायः समस्त मारवाड़ पर अपना दख़ल जमा लिया, परंतु दुर्गादास के आधिपत्य में राठौर लोग अपने बालक महाराज को पहाड़ों में छिपाए हुए औरंगज़ेब से लड़ते रहे। यही बालक समय पाकर राठौरों का प्रसिद्ध और प्रतिभाशाली अजीतसिंह

नामक महाराजा हुआ। बहुत वर्ष मुग़लों से लड़कर अजीत ने अपना राज्य फिर पाया था। इसी कारण राठौर लोग महाराणा के साथ मिल कर मुग़लों से लड़े थे। राठौरों का यह युद्ध सन् १७१० ई० तक चलता रहा था।

जब क्षत्रियों ने शाहज़ादा अकबर को छोड़ दिया, तब अपने पिता से सिवा प्राणदण्ड के और किसी बात की आशा न होने के कारण वह फिर राठौरों की शरण में गया। इस पर दुर्गादास बालक अजीत को अपने भाई के साथ छोड़ अकबर को लेकर दक्षिण चला गया। अकबर के दक्षिण निकल जाने से औरंगज़ेब को बड़ा भय हुआ और उसने महाराज राजसिंह से संधि करके दक्षिण जाने का दृढ़ संकल्प कर लिया। अतः वह अपने दल का मुख्यांश लेकर दक्षिण चला गया और इधर छत्रसाल बुँदेला से लड़ने को तहौवर ख़ाँ को आज्ञा देता गया। अकबर औरंगज़ेब के दक्षिण जाने से फ़ारस भाग गया। तब औरंगज़ेब ने बीजापुर और गोलकुंडा पर चढ़ाई करके दो साल के युद्ध में सन् १६८८ ई० में उन्हें स्ववश कर लिया। सन् १६८९ में उसने मरहठों पर धावा करके शिवाजी के पुत्र शंभाजी को भी बंदी कर बड़ी निर्दयता से मरवा डाला। शंभाजी के पुत्र साहूजी को भी शाह ने पकड़ लिया था; परंतु उसके एक छोटा बच्चा होने के कारण वध न करके उसे अपने यहाँ के एक महाराष्ट्र ब्राह्मण के सिपुर्द कर दिया। साहूजी का भी नाम शिवाजी था, परंतु औरंगज़ेब ही ने उसका नाम "साहु" यह कहकर रक्खा कि इस बच्चे के पिता और पितामह चोर थे,

परंतु यह चोर नहीं, साह है। मरहठों ने उस समय भी धैर्य्य नहीं छोड़ा और शिवाजी के द्वितीय पुत्र राजाराम को राजा बना कर वे मुग़लों से लड़ने लगे। लड़ते लड़ते यहाँ से वहाँ और वहाँ से यहाँ दौड़ते हुए राजाराम यथासाध्य स्वतंत्रता की रक्षा करते रहे। थोड़े ही दिनों में राजाराम का भी शरीरांत हो गया, किंतु उनकी स्त्री ताराबाई ने अंत पर्यंत युद्ध करके महाराष्ट्र राज्य का रक्षण किया। ताराबाई शिवाजी के प्रसिद्ध सरदार प्रतापराय गूजर की पुत्री थी। मरहठे मुग़लों की बृहत् सेना से सम्मुख नहीं लड़ सकते थे, परंतु इधर उधर लगे रहते थे। छोटे छोटे दलों को छिन्न भिन्न करके लूट लेते थे और सेना देख कर भाग जाते थे। इनका किसी खास स्थान पर राज्य नहीं रह गया था, परंतु जहाँ मुग़ल नहीं होते थे, वहीं ये लूट मार करते और वहीं के राजा से देख पड़ते थे। एक बार सन् १६९५ में भीमा नदी ने बढ़कर शाह के १२००० दल को डुबो दिया। औरंगजेब ने सत्ताईस वर्ष उत्तर की भी कुल आय इसी दक्षिण के युद्ध में व्यय की, परंतु फिर भी कुल मरहठों को वह ध्वस्त न कर सका। एक बार इसकी फौज गड़बड़ दशा में थी। मरहठों ने एकाएक धावा करके उसे पूर्ण पराजय दे दी। औरंगजेब कुछ आगे था और उसके पास बहुत ही कम मनुष्य थे, परंतु दुर्भाग्यवश उसकी यह दशा मरहठों पर विदित न थी, नहीं तो वे उसे तुरंत बंदी कर लेते। इन विपत्तियों से मुग़ल सेना बहुत ही विकल और हताश हो गई और मरहठों के युद्ध-कौशल से मुग़ल-विजय की आशा

जाती रही। दिनों दिन उनका बल मंद पड़ता जाता था और मरहठों की विजय-वैजयंती फहराती जाती थी।

औरंगज़ेब ने देखा कि यदि अब यहाँ और रहूँगा, तो समस्त सेना पराजित हो जायगी और मैं पकड़ लिया जाऊँगा। यह सोच कर वह अहमदनगर चला गया और इन आपदाओं से उसका हृदय ऐसा विदीर्ण हो गया कि ८८ वर्ष की अवस्था में वह सन् १७०७ में परलोकवासी हुआ। उसने अपने पुत्रों में बखेड़ा बचाने के विचार से राज्य के तीन भाग कर दिए, परंतु शाहज़ादों ने यह न माना। दक्षिण में मँझला शाहज़ादा आज़म औरंगज़ेब के साथ था। उसने अपने बड़े भाई मुअज़्ज़म से, जो दिल्ली में था, युद्ध करना निश्चय किया। इस कारण उसने मरहठों में झगड़ा पैदा कर देने के विचार से साहूजी को छोड़ दिया, परंतु मरहठों ने बिना किसी विशेष झगड़े के साहूजी को अपना महाराज मान लिया और राजाराम के पुत्र कोल्हापुर के महाराज हो गए। उनके वंशधर अब भी कोल्हापुर के महाराज हैं। आज़म और मुअज़्ज़म का सन् १७०७ ई० में जाजऊ पर घोर युद्ध हुआ जिसमें आज़म मारा गया और मुअज़्ज़म बहादुरशाह की उपाधि धारण करके बादशाह हुआ।

अब औरंगज़ेब के तीसरे पुत्र कामबख़्श ने बहादुरशाह का सामना किया, परंतु वह हार गया और फिर युद्ध के घावों से मर भी गया। इस प्रकार जो भारी मुग़ल दल औरंगजेब दक्षिण जीतने को ले गया था, वह मरहठों तथा शाहज़ादों के

झगड़ों से निश्शेष हो गया। मुग़लों के इस घरेलू बखेड़े के कारण उनकी शक्ति बहुत मंद पड़ गई थी और अच्छा समय था कि मरहठे अपना बल बढ़ाते, परंतु साहूजी स्वयं लड़कपन से मुग़लों के यहाँ रहा था, अतः वह बड़ा आलसी और आराम पसंद था। यह समझ पड़ने लगा कि महाराष्ट्र शक्ति घरेलू झगड़ों और अकर्मण्यता के कारण नष्ट हो जायगी, परंतु इसी समय (१७१२ ई० में) भाग्यवश साहूजी ने बालाजी विश्वनाथ को अपना पेशवा (प्रधान मंत्री) बनाया। ये महाराज बड़े ही बुद्धिसंपन्न व्यक्ति थे और हर बात में प्रवीण थे। इन्हीं के प्रयत्नों से महाराष्ट्र शक्ति मुग़लों के अधःपतन के साथ ही साथ ऐसी बढ़ी कि मरहठों का पूरा साम्राज्य स्थापित हो गया। इन्होंने सन् १७१६ ई० के लगभग दिल्ली पर आक्रमण करके बादशाह फ़र्रुख़सियर को पदच्युत किया और दूसरे बादशाह को गद्दी पर बैठाया। इनके गुणों और कर्मों से मोहित होकर साहूजी ने पेशवा का पद इनके वंश में स्थिर कर दिया। पेशवा बालाजी विश्वनाथ सन् १७२० ई० में स्वर्गवासी हुए और बाजीराव पेशवा नियत हुए।

बुँदेलों का इतिहास

सूर्यवंश में रामचंद्र और उनके पुत्र कुश के वंश में काशी और कंतित के गहिरवार राजा हुए। इस वंश का पूर्ण वर्णन बहुत से पूर्व पुरुषों के नामों समेत लाल कवि ने अपने छत्र-प्रकाश नामक ग्रंथ में किया है। इसी वंश में महाराज पंचमसिंह उत्पन्न हुए। उनके चारों भाइयों ने उनका राज्य छीन लिया और वे विंध्याचल पर जाकर विंध्यवासिनी देवी की उपासना करने लगे। एक दिन वे अपना ही बलिदान करने को प्रस्तुत हुए। कहा जाता है कि ज्यों ही उन्होंने अपने शरीर में एक घाव लगाया त्यों ही देवीजी ने प्रकट होकर उनका हाथ पकड़ लिया और उन्हें राज्य मिलने का वरदान दिया। उसी समय देवीकृपा से उनके सिर से जो घाव द्वारा रक्तबिंदु गिरा था उससे एक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम बुँदेला पड़ा। अस्तु जो कुछ हो।

बुँदेला का वंश इस प्रकार चला—

सन् १६२७ में चंपतिराय और वीरसिंहदेव शाहजहाँ से लड़ने लगे। चंपतिराय का बड़ा पुत्र सारवाहन

मुगलों द्वारा मारा गया। इस बात का इन्हें बड़ा दुःख हुआ। इसी समय इनकी रानी को स्वप्न हुआ कि मानो सारवाहन कहता है कि मैं फिर तेरी सौति की कोख से पैदा होकर मुग़लों से अपना वैर लूँगा। कुछ दिनों में उनके यहाँ छत्रसाल १६५० ई० में उत्पन्न हुए।

शाहजहाँ ने चंपतिराय पर महावत खाँ, खानजहाँ और अब्दुल्ला के आधिपत्य में तीन सेनाएँ भेजीं। उस समय ये पहाड़ों में छिपे रहे, परंतु उनके कुछ हटते ही फिर निकलकर

उनकी छोटी छोटी टुकड़ियों को इन्होंने हराया। अंत में उन सब को एक साथ ही बड़े विकराल युद्ध में ध्वस्त करके आपने उनकी सेना को खूब ही काटा। शाहजहाँ ने फिर एक सेना भेजी। तब इन्होंने बादशाह की सेवा स्वीकार कर ली और तीन लाख की मालगुज़ारी पर कोंच का परगना पाया। एक बार चंपतिराय दारा के साथ काबुल में लड़ने गये। वहाँ इन्होंने बड़ी वीरता दिखाई, परंतु दारा के चित्त में हर्ष के स्थान पर चंपति से ईर्ष्या उत्पन्न हुई, यद्यपि इन्हीं के कारण उन्हें कई विजय प्राप्त हुई थीं। तब दारा ने ओड़छे के राजा पहाड़-सिंह को नौ लाख की मालगुज़ारी पर कोंच का परगना दे दिया। इस कारण चंपति और दारा में द्रोह हो गया। इस के थोड़े ही दिन पीछे दारा और औरंगज़ेब में राज्यार्थ सन् १६५८ में धौलपुर में घोर युद्ध हुआ। इस युद्ध में चंपतिराय ने औरंगज़ेब का साथ दिया और उसकी सेना के हरौल में रह कर ये लड़े। दारा के हरौल में बूँदीनरेश हाड़ा छत्रसाल थे। इसमें दारा की पराजय हुई और छत्रसाल हाड़ा घोर युद्ध करके मरे। इसी युद्ध का वर्णन भूषण ने छत्रसाल दशक के प्रथम दो छंदों में किया है। इस युद्ध के फलस्वरूप औरंग-ज़ेब ने चंपतिराय को बारह-हज़ारी का मनसब और ऐरछ, शाहज़ादपुर, कोंच और कनार जागीर में दिए। तब चंपति अपने घर चले आए। कुछ दिनों बाद औरंगज़ेब ने कहला भेजा कि अगर घर में बैठे रहोगे, तो मनसब घट जायगा और नुक़-

सान उठाओगे। इस बात पर चंपतिराय को बड़ा क्रोध चढ़ा और ये महाराज मुग़लों से लड़ने लगे। मुग़लों के आक्रमण से चंपति को सब राजपाट छोड़कर भागना पड़ा। ये अपनी बहिन के यहाँ बीमारी की दशा में गए, परंतु जब ज्ञात हुआ कि बहिन के नौकर इन्हें पकड़कर मुग़लों के यहाँ भेजा चाहते हैं, तब सन् १६६४ ई० में आप ने आत्महत्या कर ली।

इसी समय से छत्रसाल को पिता का बदला लेने और खोया हुआ राज्य फिर प्राप्त करने की प्रबल इच्छा हुई। पहले इन्होंने जयसिंह के नीचे मुग़लों की सेवा कर ली और देवगढ़ के घेरा करने में ये बड़ी बहादुरी से घायल हुए पर अच्छा सम्मान न होने से इन्होंने सेवा छोड़कर शिवाजी से मिलना निश्चय किया, क्योंकि इनकी समझ में मुग़लों से

"ऐंड़ एक शिवराज निवाही। करै आपने चित की चाही॥
आठ पातसाही झकझोरे। सूबन बाँधि दंड लै छोरे"॥

(लालकृत छत्रप्रकाश)

इन्होंने शिवाजी से मिलकर अपना सब हाल कहा तो,

"सिवा किसा सुनि कै कही तुम छत्री सिरताज।
"जीति आपनी भूमि को करौ देस को राज॥
"करौ देस को राज छतारे। हम तुमतें कबहूँ नहिं न्यारे॥
"तुरकन की परतीति न मानौ। तुम कै हरि तुरकन गज जानौ॥
"हम तुरकन पर कसी कृपानी। मारि करैंगे कीचक घानी॥
"तुमहूँ जाय देस दल जोरौ। तुरुक मारि तरवारिन तोरौ॥

"छत्रिन की यह वृत्ति सदाई। नित्य तेग की खायँ कमाई ॥
"गाय वेद विप्रन प्रतिपालैं। घाव ऐंड़धारिन पर घालैं ॥
"तुम हौ महावीर मरदाने। करिहौ भूमि भोग हम जाने ॥
"जो इतही तुम को हम राखैं। तौ सब सुजस हमारो भाखैं ॥
"ताते जाय मुगल दल मारौ। सुनिये श्रवननि सुजस तिहारौ॥
"यह कहि तेग मँगाय बँधाई। वीर वदन दूनी द्युति आई" ॥

(लालकृत छत्रप्रकाश)

शिवाजी के आगरे से लौटने से कुछ ही दिन पीछे सन् १६६७ में छत्रसाल उनसे मिले थे। शिवाजी से इस प्रकार प्रोत्साहित होकर छत्रसाल अपने देश में आए और सेना एकत्र करके मुग़लों से लड़ने लगे।

सन् १६७१ ई० के लगभग इन्होंने बहुत सी लड़ाइयाँ जीत कर गढ़ाकोटा का क़िला ले लिया और क्रमशः अपना प्रभुत्व प्रायः समस्त बुंदेलखंड पर जमा लिया। जब इन्होंने दक्षिण से जाता हुआ सौ गाड़ियों भर शाही सामान लूटा, तब औरंगज़ेब ने क्रोध करके तहौवरख़ाँ को एक बड़ी सेना लेकर भेजा, पर सिरावा के युद्ध में छत्रसाल ने उसकी सारी सेना काट डाली। उसने दूसरी सेना लेकर आक्रमण किया और सन् १६८० में वह फिर पराजित हुआ। तदनन्तर छत्रसाल ने अनवरख़ाँ, सदरुद्दीन और हमीदख़ाँ को परास्त किया और बुंदेलखंड के उन राजाओं को भी, जो इनका साथ नहीं देते थे, खूब सताया। सन् १६९० में औरंगज़ेब ने एक बड़ी

सेना के साथ अब्दुस्समद को भेजा, परंतु छत्रसालने वेतवे नदी के किनारे उसे भी पराजित किया। तव वहलोलखाँ गवर्नर और जगतसिंह ने छत्रसाल पर धावा किया, परंतु जगतसिंह मारा गया और वहलोल को भागना पड़ा। वहलोल ने मारे लज्जा के आत्मघात कर लिया। तदनंतर छत्रसाल ने मुरादखाँ को हराया और दलेलखाँ को भी पराजित किया। पीछे आपने मटौंध को घेर कर जीत लिया। फिर सैयद अफ़ग़ान के आधिपत्य में एक महती सेना आई। इससे एक वार छत्रसाल हार गया, परंतु पुनः सेना एकत्र करके बुंदेलराज ने इसे भी पराजित किया। तव शाहकुली इससे लड़ने को भेजा गया, परंतु वह भी हारा।

अव छत्रसाल यमुना और चंवल के दक्षिण ओर के सारे देश का स्वामी वन गया ❀।

सन् १७०७ ई० में वहादुर शाह ने इन्हें वुलाकर उस इलाक़े का स्वामी होना स्वीकार किया। तव इन्होंने वादशाह को लोहगढ़ जीत दिया।

सन् १७२२ ई० में फ़र्रुखाबाद का गवर्नर मुहम्मदखाँ वंगश छत्रसाल से लड़कर सारा देश उजाड़ने लगा। उसने चित्रकूट के पास से युद्धारम्भ किया। महाराज छत्रसाल रीवाँ का वहुत राज्य छीन चुके थे। इसी से रीवाँनरेश महाराज अवधूतसिंह ने भी इस समय वंगश का साथ दिया। इस कुदशा में छत्रसाल ने

❀ इसकी वार्षिक निकासी प्रायः डेढ़ दो करोड़ मुद्रा थी।

(जो अब ७५-७६ वर्ष के बुड्ढे थे) पेशवा बाजीराव को एक पत्र में सब वृत्तांत लिख कर अंत में लिखा—

"जो गति ग्राह गजेंद्र की सो गति जानहु आज।
बाजी जात बुँदेल की राखौ बाजी लाज"॥

इस प्रकार बुँदेलों के बाजी हारने का भय सुन कर पेशवा बाजीराव ने एक महती सेना भेजी और उसकी सहायता से छत्रसाल ने सन् १७२९ में बंगश को परास्त किया। बंगश इस युद्ध में हारा, परंतु मारा नहीं गया।

छत्रसाल ने इस उपकार के बदले बाजीराव को अपना एक तिहाई राज्य दे दिया और शेष अपने दो मुख्य लड़कों में बाँट दिया। इनके प्रायः ५२ लड़कों में केवल हृदयशाह, जगतराज, पद्मसिंह और भारतीचन्द औरस पुत्र थे और शेष चेरियों से उत्पन्न हुए थे। हृदयशाह को पन्ना का राज्य मिला और जगतराज को जैतपुर का। छत्रसाल सन् १७३३ में स्वर्गवासी हुए और अबतक मऊ (छत्रपुर) में उनका विशाल समाधिस्थान बना हुआ है। बुंदेलखंड में अब २२ देशी रियासतें हैं जिनमें निम्नलिखित आठ रियासतों के राजा छत्रसाल वंशोद्भव हैं-जिगनी, पन्ना, लोगासी, सरीला, अजैगढ़, चरखारी, बिजावर और जसो। सन् १७३३ के लगभग महाराज हृदयशाह ने महाराज अवधूतसिंह को हरा कर रीवाँ राज्य पर अधिकार कर लिया। यह अधिकार सन् १७४० तक रह कर समाप्त हो गया और महाराज अवधूतसिंह का राज्य रीवाँ में फिर से दृढ़ हुआ।

शिवराज-भूषण

इस ग्रंथ का नाम शिवराज-भूषण बड़ा ही समीचीन है। इसमें शिवराज का यश वर्णित है; अतः यह उनको भूषित करता है। यह भूषणों (अलंकारों) का ग्रंथ है और इसे भूषणजी ने बनाया है। ये सभी बातें "शिवराज-भूषण" पद से पूर्णतया विदित हो जाती हैं। सब से पहले यह प्रश्न उठता है कि इसका ठीक निर्माण काल क्या है? इतना तो निश्चय है कि यह सन् १६७३ ईसवी में समाप्त हुआ; पर इसके प्रारंभ होने के विषय में निम्नलिखित चार बातें कही जा सकती हैं—

(१) भूषणजी इस ग्रंथ के छंदों को स्फुट रूप से समय समय पर, बिना किसी अलंकारादि के विचार से, बनाते गए; और अंत में इतने छंदों को क्रमबद्ध कर के और कुछ नए छंद जोड़ कर उन्होंने इन्हें ग्रंथ रूप में कर दिया।

(२) उन्होंने इसके छंद अलंकारों के विचार से ही समय समय पर बनाए और फिर उन्हें ग्रंथ रूप में परिणत कर दिया।

(३) अपने आने के समय से ही इस ग्रंथ को इसी रूप में बनाना कवि ने प्रारंभ कर दिया और सन् १६७३ ई० में इसे समाप्त किया।

(४) सन् १६७३ ई० ही में अथवा उसके कुछ ही पहले यह ग्रंथ बनना प्रारंभ हुआ और कुछ ही महीनों में समाप्त हो गया।

इन प्रश्नों के उत्तर देने में निम्नलिखित चक्र से बहुत कुछ सहायता मिल सकती है—

किस सन् की घटना	छन्द नम्बर
१६२७	११, १३
१६४८	२१३
१६५५	२०६
१६५७	७७, १०३, ३०७
१६५८	२१७
१६५६	४२, ६३, ६६, ६६, १०७, २०७, २३६, २५२, ३०५, ३३७
१६६१	२०६
१६६२	१४, २४, २४२, २६१, २८८
१६६३	७७, ६६, १०३, १८६, ३२३, ३३७, ३३८, ३६४
१६६५	२१२, २१३
१६६६	३४, ३५, ३८, ७६, १४८, १८६, १६८, २०४, २०६, २६५, ३०६, ३१०
१६६६	२५८
१६७०	१००, १५५, २००, २१३, २३६, २५६, २८५, ३३४, ३५४, ३५७
१६७१	६३
१६७२	६७, १०३, १०७, १५५, २२५, २२६, २३६, २७५, २६२, ३२०, ३३१, ३३८, ३५५, ३५६, ३५७
१६७३	६६, १६१, २०६, २५४, ३१०, ३२८, ३३७, ३५६, ३५७, ३५८, ३५६

इस चक्र के देखने से विदित होता है कि शिवराज-भूषण में भूषणजी ने सन् १६५७ के ३ छन्द, १६५९ के १०, १६६२ के ५, १६६३ के ८, १६६५ के २, १६६६ के १२, १६७० के १०, १६७२ के १५ छंद और १६७३ के ११ कहे हैं। सन् १६४८, १६५५, १६५८, १६६६, १६६६ तथा १६७१ के भी एक एक छन्द हैं तथा १६७२ के दो।

अब हम शिवराज-भूषण के समय संबंधी उपर्युक्त चारों प्रश्नों पर विचार करते हैं।

(१) यह अनुमान यथार्थ नहीं कहा जा सकता, क्योंकि भूषण के अधिकांश उदाहरणों में एक एक छंद में वही अलंकार कई कई बार आया है और सिवा उसके दूसरा अलंकार स्पष्ट रूप से नहीं आने पाया है। फिर प्रत्येक अलंकार अपने उदाहरण में बड़े ही स्पष्ट रूप से निकलता है और किसी के निकालने में क्लिष्ट कल्पना नहीं करनी पड़ती। अन्य अधिकांश आचार्यों के उदाहरणों में ऐसी स्पष्टता कम पाई जाती है। अतः कोई यह नहीं कह सकता कि भूषणजी के उदाहरण अलंकारों के लिये नहीं बनाए गए थे और उनमें अलंकार आप ही आप निकल आए। वे स्वयं कहते हैं—

"शिव-चरित्र लखि यों भयो कवि भूषण के चित्त।
भाँति भाँति भूषनन सों भूषित करौं कवित्त"॥

(२) यह अनुमान कुछ कुछ यथार्थ जान पड़ता है। इस के कारण पीछे लिखे जायँगे।

(३) यह ग्रंथ इसी रूप में सक्रम नहीं बनाया गया है; क्योंकि यदि सन् १६६७ ई० से इसे भूषणजी लिखने लगते तो छंद नं० ६६ व ९७ में ही सन् १६७३ का वर्णन कैसे आ जाता ? क्योंकि यदि यह मानिए कि सन् १६६७ से सन् १६७३ तक यह ग्रंथ सक्रम बनता रहा, तो यह भी मानना पड़ेगा कि सन् १६७३ में केवल अंत के प्रायः पचास छंद बने होंगे। इसी प्रकार और सब की भी दशा है। अतः यह ज्ञात होता है कि इस ग्रंथ के छंद सिलसिलेवार नहीं बनाए गए हैं; परंतु कुछ अंश में यह विचार यथार्थ भी है, जैसा कि आगे दिखाया जायगा।

(४) यह अनुमान भी ठीक नहीं जँचता। भूषण ने जिस समय जो ग्रंथ या छंद बनाया है, उसी समय की घटनाओं का वर्णन उसमें बाहुल्य से है और यही बात प्राकृतिक भी है। भूषणजी ने शिवराजभूषण के १२ छंदों में शिवाजी के आगरा-गमन का वर्णन किया है और इनमें से बहुतेरे छंद ग्रंथ के प्रारंभ में पाए जाते हैं। ग्रंथ के अंत में सन् १६७२ और १६७३ के वर्णन बहुतायत से हैं। यदि कहिए कि आगरा-गमन को भूषणजी बड़ी भारी बात समझते थे और इसी लिये उसका वर्णन अधिक है, तो इसका उत्तर यह है कि शिवाबावनी में इस घटना के दो ही छंद हैं। फिर बहलोल का युद्ध ऐसा बड़ा न था; परंतु उसके कई छंद भूषण जी ने लिखे हैं। सन् १६७३ की घटनाएँ बड़ी भारी न थीं; परंतु उनका भी वर्णन अधिक है। इससे विदित होता है कि इस ग्रंथ के आदि का

भाग सन् १६७० के पहले लिखा गया और अंत का सन् १६७२ और १६७३ में बना; एवं इसका मध्य भाग सन् १६७० और १६७१ के लगभग बनाया गया।

इन सब विचारों से विदित होता है कि भूषणजी ने यह ग्रंथ सन् १६६७ ई० के लगभग प्रारंभ किया था और इसी क्रम से जो हम आज देखते हैं यह ग्रंथ बना; परंतु कुछ कुछ अलंकारों के उदाहरण उस समय नहीं बनाए गए थे या शिथिलता के कारण पीछे ग्रन्थ से निकाल दिये गये। वे अलंकार पीछे कहे गए। इसी कारण कहीं कहीं आदि में भी सन् १६७० के पीछे तक की घटनाएँ आ गई हैं। कहीं कहीं प्रथम उदाहरण में उस समय की घटनाओं का वर्णन है, और फिर अंत में द्वितीय उदाहरण पीछे की घटनाओं से भरा हुआ रख दिया गया है। कहीं कहीं संभव है कि द्वितीय उदाहरण भूषण जी को ऐसा अच्छा लगा हो कि उन्होंने पहला उदाहरण ग्रंथ से निकाल दिया हो अथवा पहले उदाहरण के पूर्व रख दिया हो। पाठकों को उपर्युक्त चक्र देखने से विदित होगा कि अधिकतर ज्यों ज्यों ग्रंथ बढ़ता गया है, उसी प्रकार सन् भी बढ़ते गए हैं। इन सब विचारों से इस कुल ग्रंथ का एक ही डेढ़ साल में बनना मानना ठीक नहीं जँचता। फिर यदि भूषणजी ग्रन्थ इतने शीघ्र बनाते होते कि डेढ़ साल में इतना बड़ा ग्रन्थ बना डालते, तो अपने शेष कवित्व-काल के ६५ सालों में न जाने कितना बनाते।

छंद नंबर २०७ में करनाटक की चढ़ाई के वर्णन का भ्रम

हो सकता है; परंतु होना न चाहिए; क्योंकि वहाँ शब्द देश जीते नहीं लिखा है, वरन् बिबूँचे है, जिससे आफ़त या गड़बड़ का प्रयोजन है। सन् १६५९ में आपने परनालो लिया और १६६१–६२ में करनाटक में घोर विद्रोह हुआ। बिबूँचे का यही अभिप्राय है। पूर्वी करनाटक शिवाजी ने सन् १६७६–७८ में जीता किंतु पच्छिमी करनाटक में १६७३ के पूर्व लूट खसोट की थी। उसका भी इशारा इसमें समझा जा सकता है।

मुद्रित प्रतियों में प्रायः तीन सौ छंद पाए जाते हैं, पर हमने शिवराज-भूषण की इस प्रति में ३८२ छंद दिए हैं। जितने छंद इस प्रति में बढ़े हैं, उनका मुख्यांश कवि गोविंद गिल्ला-भाईजी की हस्तलिखित प्रति से लिया गया है। गिल्लाभाईजी की प्रति में कई ऐसे अलंकारों के लक्षण और उदाहरण हैं जो भूषणजी की दी हुई अलंकार-नामावली (छंद नं० ३७१–३७९) के बाहर हैं। उन अलंकारों के लक्षणों को हमने भूषणकृत नहीं समझा; परंतु उदाहरणों को "शिवाबावनी" एवं "स्फुट" में रख दिया है। जान पड़ता है कि भूषण के इन कवित्तों में अलंकार निकलते देख लोगों ने इन्हें "शिवराजभूषण" में उन अलंकारों के लक्षण अपनी ओर से जोड़कर रख दिए। इन नए कवित्तों में से दो चार के विषय में हमें भूषण कृत होने में भी संदेह है। संभव है कि उन्हें किसी ने अपनी ओर से बना कर लिख दिया हो, पर शेष छंद अवश्य ही भूषण के प्रतीत होते हैं।

भूषणजी ने युद्ध-प्रधान ग्रंथ होने के कारण इसमें श्री भगवतीजी की एक बड़े ही प्रभावोत्पादक छंद द्वारा स्तुति की है। इस ग्रंथ में कवि ने अधिकांश अलंकारों के लक्षण और उदाहरण दिए हैं और उदाहरणों में विशेषता यह रक्खी है कि प्रत्येक में शिवाजी का यश वर्णित है। इनके पहले किसी कवि ने अपने नायक के ही यशवर्णन में कोई ऐसा ग्रंथ नहीं रचा। ग्रंथ के आरंभ में रायगढ़ का बड़ा ही मनोहर वर्णन है; और अलंकार का बंधन रखकर भी भूषणजी शिवराज के यशवर्णन और तत्कालीन मनुष्यों के वास्तविक भावों के चित्र खींचने में पूर्णतया कृतकार्य हुए हैं। अलंकारों के उदाहरण भी इनके स्पष्ट हैं और एक ही छंद में कभी कभी दो चार बार तक उसी अलंकार के उदाहरण आते हैं। भूषणजी प्रायः सभी अलंकार इस ग्रंथ में लाए हैं, केवल निम्न लिखित छूट गए हैं—

धर्म्म लुप्त से इतर लुप्तोपमा, तद्रूप रूपक, संबंधातिशयोक्ति, पदावृत्ति एवं अर्थावृत्ति दीपक, असदर्थ एवं सदर्थ निदर्शना, समव्यतिरेक, न्यूनव्यतिरेक, प्रस्तुतांकुर, द्वितीय पर्य्यायोक्ति, निषेधाभास, व्यक्ताच्छेप, तृतीय विषम, द्वितीय एवं तृतीय सम, प्रथम अधिक, अल्प, द्वितीय तथा तृतीय विशेष, द्वितीय व्याघात, कारक दीपक, द्वितीय अर्थान्तरन्यास, विकस्वर, ललित, प्रथम एवं तृतीय प्रहर्षण, मुद्रा, रत्नावली, गूढ़ोत्तर, सूक्ष्म, गूढ़ोक्ति, विवृतोक्ति, युक्ति और प्रतिषेध।

अलंकारों की इस नामावली में बहुत से ऐसे हैं जिनमें मुख्य अलंकार का वर्णन हुआ है, परंतु उसके किसी विभाग का नहीं हुआ। ऐसा ग्रंथ के संक्षिप्त बनने के कारण किया गया है। कुछ अलंकार ऐसे हैं जिनके न वर्णित होने का कोई कारण नहीं है। यही कहा जा सकता है कि वे ऐसे विदित अथवा आवश्यक नहीं हैं जिनके वर्णन करने को कवि वाध्य हो।

तद्रूप रूपक का भी वर्णन भूषणजी ने नहीं किया है। विहारी ने भी सैकड़ों रूपक लिखने पर एक भी तद्रूप रूपक नहीं लिखा। वास्तव में तद्रूप रूपक एक निषिद्ध प्रकार का रूपक है। रूपक का मुख्य प्रयोजन है उसी रूप का होना। फिर कोई वस्तु किसी द्वितीय की पूर्ण प्रकारेण अनुरूप तभी हो सकती है जब उन दोनों वस्तुओं में कुछ भी भेद न हो। अतः मुख्यशः अभेद रूपक ही शुद्ध रूपक है। जब दो पदार्थों में विभिन्नता विद्यमान है, जैसा कि तद्रूप रूपक में होता है, तब रूपक श्रेष्ट कैसे हो सकता है?

भूषण महाराज के भ्रम विकल्प एवं सामान्य के उदाहरण अशुद्ध हो गये हैं। इनके भ्रम में गड़बड़ हो ही गया है। विकल्प में संदेह ही संदेह रहना चाहिए, निश्चय न होना चाहिए।

(शि० भू० छं० २४९)

मोरँग जाहु कि जाहु कुमाऊँ सिरीनगरै कि कवित्त बनाये।

....

भूषन गाय फिरौ महि मैं बनिहै चित चाह शिवाहि रिझाये॥

इस छंद में भूपण ने अंत में निश्चय कर दिया; सो अलंकार बन बना कर विगड़ गया; परंतु यहाँ इनका दूपण क्षम्य है; क्योंकि इनका अलंकार बन चुका था, तथापि इन्होंने स्वयं उसे नायक के कारण विगाड़ दिया।

सामान्य=सादृश्य के कारण जहाँ भिन्न वस्तुओं में भेद न जान पड़े। (शि० भू० छंद नं० ३०५ देखिए)। इसमें तोपों की चमक का चपला की भाँति चमकने से भेद खुल गया और अलंकार बिगड़ गया।

भूपणजी ने छंद नं० २६४ व २६७ में अर्थांतरन्यास और प्रौढ़ोक्ति के लक्षण कई और कवियों के विरुद्ध लिखे हैं। आपने छंद नं० ३७९ में लिखा है कि मैंने अपने लक्षण अलंकार ग्रंथ देखकर और "निज मतो" से बनाए हैं, सो यहाँ उनका मत समझना चाहिए। शिव० भूपण नं० ६०, १४६ और २५५ में भी ऐसे ही लक्षण हैं।

इस महाकवि ने लुप्तोपमा, उत्प्रेक्षा, चंचलातिशयोक्ति, असंगति, विरोधाभास, विरोध और पूर्वरूप आदि के बड़े ही उत्कृष्ट उदाहरण दिये हैं। ध्यानपूर्वक देखने और हठपूर्वक बात करने से इनके कई आलंकारिक उदाहरणों में दोप दिखलाया जा सकता है। वास्तव में भूपण अलंकारों के भारी आचार्य न होकर काव्योत्कर्प में महान् हैं। आचार्य्यता में मतिराम की विशेपता है।

शिवराज भूपण में कवि ने अलंकारों ही पर पूर्ण ध्यान दिया

है; अतः युद्धप्रधान ग्रंथ होने पर भी पूर्ण वीररस के बहुत अच्छे उदाहरण इस ग्रंथ में नहीं मिलते। हाँ, भयानक तथा रौद्र रसों के उत्तम उदाहरण भी यत्र तत्र देख पड़ते हैं, मुख्यशः भयानक रस के, जिस (रस) के वर्णन में भूषण महाराज बड़े पटु हैं। इन्होंने शिवाजी के दल का वर्णन इतना नहीं किया है जितना कि शत्रुओं पर उसकी धाक का। इसी हेतु इनके ग्रंथ में भयानक रस का बहुत अधिक समावेश है। रसों के उदाहरण शिवाबावनी में अधिक उत्कृष्ट देख पड़ते हैं। भूषणजी अमृतध्वनि खूब अच्छी बना सकते थे। अन्य कवियों की अमृतध्वनियों में निरर्थक शब्द बहुत आ जाते हैं, परंतु भूषणजी के छंदों में ऐसा नहीं है

सब बातों पर विचार करने से विदित होता है कि "शिवराज-भूषण" एक बड़ा ही प्रशंसनीय ग्रंथ है। इसमें प्रायः समस्त सत्य घटनाओं ही का वर्णन है और शिवाजी का शील गुण आद्योपांत एक रस निर्वाह कर दिया गया है। इतिहास देखने से जो जो गुण शिवाजी में पाए जाते हैं, उन सब का पूर्ण विवरण इस ग्रंथ में मिलता है। हाँ, एक में अवश्य विभेद है; और वह इस प्रकार है कि इतिहास से प्रकट होता है कि शिवाजी भवानी के बड़े भक्त थे और प्रायः समस्त बड़े कार्य उन्हीं की आज्ञा से करते थे, परंतु भूषणजी ने इन्हें केवल शिवभक्त भी बताया है। शिवाजी के शैव होने के विषय में छन्द नं० १४, १५८, २३६ और ३२६ देखिए। शिवाजी शिव तथा भवानी दोनों के भक्त थे, ऐसा इतिहास में आया है।

हमारे भारतवर्ष में पृथ्वीराज के पश्चात् चार स्वतंत्र राजे बड़े प्रभावशाली एवं पराक्रमी हुए, अर्थात् महाराज हम्मीर देव, महाराणा प्रतापसिंह, महाराज शिवाजी और महाराज रणजीत सिंह। इन सब में हम लोगों से दूरतम वासी शिवाजी ही थे; तथापि एतद्देशीय साधारण हिंदू समाज में सबसे अधिक प्रसिद्ध वे ही महाराज हैं। इस असाधारण प्रख्याति का कारण यही भूषण जी का ग्रंथ है। यद्यपि महाराज रणजीत सिंह के सब पीछे होने के कारण उनका नाम लोग यहाँ जानते हैं, तथापि उनकी भी विजय-यात्राओं का हाल यहाँ बहुत कम मनुष्यों पर विदित है; परंतु शिवाजी की लड़ाइयों का समाचार ग्राम ग्राम तथा घर घर पूछ लीजिए।

एक यह भी प्रश्न है कि "शिवराज-भूषण" कब समाप्त हुआ। छंद नं० ३८० में भूषणजी ने संवत् १७३० बुध सुदि १३ को इसका समाप्त होना लिखा है। हमारी प्रार्थना पर महामहोपाध्याय श्री पंडित सुधाकर जी ने १७३० का पूर्ण पंचांग बनाकर हमारे पास भेज दिया था जिसके लिये हम उनके अत्यंत कृतज्ञ हैं। इससे विदित होता है कि श्रावण और कार्तिक मास में शुक्ला त्रयोदशी बुधवार को उक्त संवत् में पड़ी थी। कार्तिक में १४ दंड ५५ पल वह तिथि बुध के दिन थी और श्रावण में ३६ दंड ४० पल। जान पड़ता है कि कार्तिक मास में ग्रन्थ समाप्त हुआ था, क्योंकि कुआर कार्तिक तक की घटनाएँ उसमें कथित हैं।

श्रीशिवाबावनी

जैसा कि हम ऊपर लिख चुके हैं, यह कोई स्वतंत्र ग्रंथ नहीं, अथच भूषण के बावन छंदों का संग्रह मात्र है। मुद्रित प्रतियों में शिवराजभूषण के छंद नं० २ और ५६ एवं स्फुट काव्य के छन्द नं० २, ४, ७ और ८ भी इसी ग्रंथ में सम्मिलित हैं; परंतु हमने प्रथम दो को अन्य ग्रंथ के छंद होने के कारण और शेष चार को अन्य पुरुषों की प्रशंसा के छन्द होने के कारण शिवा· बावनी से निकाल दिया। इसमें तो शिवाजी ही की प्रशंसा के छन्द होने चाहिएँ; परन्तु इन चारों में सुलंकी, अवधूतसिंह, साहूजी और शंभाजी का यश वर्णित है। इस ग्रंथ का संग्रह होने के कारण हमने ऐसा करने में कोई दूषण भी नहीं समझा। हमने वर्तमान ग्रंथ के छंद नं० १, २८, ३१, ३८, ४०, ४१ और ५० स्फुट कविता से निकाल कर इस ग्रंथ में रख दिए हैं। इनमें से छंद नं० ३८ व ४० को छोड़कर शेष कवि गोविंद गिल्ला भाई की प्रति से मिले हैं।

शिवाबावनी की मुद्रित प्रतियों में कोई क्रम नहीं था, अतः हमने ऐतिहासिक घटनाओं तथा साहित्यिक कथनों के विचार से पूर्वापर के अनुसार इसे क्रमबद्ध कर दिया है। इसमें बहुत सा वर्णन शिवराज के अभिषेकानंतर का है। यह समय ऐसा था कि जब शिवाजी बीजापुर तथा गोलकुण्डा को भली भाँति पद-दलित कर चुके थे और ये दोनों राज्य उनके प्रभुत्व को स्वीकार करके ५ लाख तथा ३ लाख रुपए वार्षिक कर उन्हें देने लगे थे।

इसी कारण इस ग्रंथ में इन दोनों बादशाहियों का स्वल्प रूप से कथन हुआ है और मुख्यांश में शिवाजी के दिल्ली से झगड़े का वर्णन है।

इस ग्रंथ के छंदों के स्वतंत्रतापूर्वक निर्मित होने के कारण इसमें प्राबल्य और गौरव विशेष आए हैं, और रसों के पूर्ण उदाहरण भी बहुत पाए जाते हैं; परंतु यहाँ भी भयानक रस का प्राधान्य है। रौद्र रस के छंद भी यत्र तत्र दृष्टिगोचर होते हैं, तथापि इसमें शुद्ध वीर रस के दो ही चार छन्द हैं। इसमें भूषण ने शत्रुओं की दुर्गति का बड़ा सुंदर चित्र खींचा है और शिवराज के प्रताप और आतंक के वर्णन भी बड़े ही विशद हैं।

यह छोटा सा ग्रंथ बड़ा ही मनोहर है और इसके छंद कहीं कहीं शिवराजभूषण के छंदों से भी अधिक प्रभावोत्पादक हैं। इसकी जहाँ तक प्रशंसा की जाय, थोड़ी है।

बावनी में कही हुई घटनाओं का चक्र इतिहासानुसार नीचे लिखा जाता है—

किस सन् की घटना	छंद नंबर
१६५५	३०
१६५८	१४, १५
१६५९	२७, ३०, ३३
१६६३	२८
१६६६	१६, १७
१६६९	२०, २२
१६७०	२७
१६७२	२५, १६
१६७४	३४ (अभिषेक)
१६७५	३६
१६७७	३२, ४४, ४५

शिवाबावनी के विषय में बहुत लोगों का यह भी मत है कि जब भूषण पहले पहल शिवाजी के पास गए और उन्हें "इंद्र जिमि जंभ" वाला छंद सुनाया, तब परम प्रसन्न होकर उन्होंने कहा— "फिर कहो" (शि० भू० छं० नं० ५६)। इस पर भूषण ने एक अन्य छंद पढ़ा। पुनः "और कहो" की आज्ञा पाकर एक और छंद सुनाया। इसी प्रकार एक एक करके ५२ बार ५२ छंद पढ़ कर वे थक गए। वही ५२ छंद शिवाबावनी के नाम से प्रसिद्ध हुए। यह मत किसी अंश में शुद्ध नहीं है; कारण यह कि इस ग्रंथ में करनाटक की चढ़ाई का भी वर्णन है जो सन् १६७६-७८ ई० में हुई थी। अतः इस मतानुसार यह सिद्ध होता है कि भूषण पहले पहल शिवाजी के यहाँ सन् १६७८ के पश्चात् गए थे ; परंतु ये स्वयं लिखते हैं कि इन्होंने संवत् १७३० (अर्थात् सन् १६७३ ईसवी) में शिवराजभूषण ग्रंथ समाप्त किया। फिर इस बावनी में एक छंद सुलंकी ("हृदयराम सुत रुद्र") और एक अवधूत-सिंह की प्रशंसा में लिखा था जिससे प्रत्यक्ष प्रतीत होता है कि वह शिवाजी को ग्रंथरूप में कदापि नहीं सुनाई गई। इसके स्वतंत्र ग्रंथ होने के विरुद्ध यह भी प्रमाण है कि इसका वंदनावाला छंद ही शिवराजभूषण से लिया गया था, एवं दो एक और भी छंद ऐसे ही थे। इसमें आद्योपांत कोई प्रबंध भी नहीं है, और न किसी ने इसे स्वतंत्र ग्रंथ कहा ही है। यह उत्कृष्ट ग्रंथ है और हिंदी में इसके जोड़ के बहुत ग्रंथ न मिलेंगे।

छत्रसाल-दशक

जान पड़ता है कि भूषण महाराज ने छत्रसाल के विषय में बहुत से छंद बनाए थे; क्योंकि उन्होंने सन् १६८० से सन् १७०५ तक सिवाय छत्रसाल के और किसी का अधिकता से यश वर्णन नहीं किया। उन्हीं छन्दों में से आठ घनाक्षरी और दो दोहे इस ग्रंथ में रक्खे गए हैं; और दो घनाक्षरी बूँदी नरेश महाराज छत्रसाल हाड़ा विषयक इसमें हैं। इसकी मुद्रित प्रतियों में राव राजा बुद्धसिंह विषयक एक छंद भी था जो अब हमने स्फुट काव्य के तीसरे नंबर पर रख दिया है। उसके स्थान पर छंद नंबर ९ इसमें स्फुट कविता से लाकर हमने रक्खा है।

इस ग्रंथ का भी क्रम हमने इतिहास के विचार से पूर्वापर क्रमानुसार कर दिया है। बूँदी नरेश के दोनों छंद प्रथम रख देने का कारण भी स्पष्ट है। यद्यपि वे सन् १७१० के लगभग बनाए गए थे, तथापि उनमें घटना सन् १६५८ की वर्णित है। तृतीय छंद हमारे अनुमान में सन् १६७५ में बनाया गया था और उसी सन् में चतुर्थ और पंचम छंद बने (बुँदेलों के इतिहास संबंधी भूमिकांश देखिए)। छंद नं० ६ सन् १६९० एवं नंबर सात १७०० की घटनाओं से संबंध रखता है। छंद नंबर आठ और नौ संभवतः सन् १७०८ में बने और नंबर दस सन् १७११ के लगभग बना।

इस ग्रंथ के छंद भूषण की कविता में सर्वोत्कृष्ट हैं, और एक भी छंद सिवाय उत्तम के मध्यम श्रेणी तक का इसमें नहीं है। भूषणने शिवराज और छत्रसाल सरीखे भारतमुखोज्वल-कारी युगल मित्रों का वर्णन करके देशवासियों और हिंदी रसिकों का बड़ा उपकार किया है। यह बात प्रसिद्ध है कि भूषणजी जब महाराज शिवराज के यहाँ से सन्मानित हो छत्रसाल के यहाँ पधारे, तो इन्होंने कविजी का बहुत आदर सत्कार किया और चलते समय यह कह कर कि "अब हम आप को क्या विदाई दे सकते हैं !" उनकी पालकी का डंडा स्वयं अपने कंधे पर रख लिया ! तब भूषणजी अत्यंत प्रसन्न हो चट पालकी से कूद पड़े और "बस महाराज ! बस" कहते हुए उनकी प्रशंसासूचक कविता तत्काल बना चले। वेही कवित्त छत्रसाल-दशक के नाम से प्रसिद्ध हुए; परंतु जान पड़ता है कि भूषणजी ने इस समय कोई और ही छंद बनाए होंगे। इस ग्रंथ के छंद किसी ग्रंथ रूप में नहीं बने क्योंकि न तो इनमें वंदना है, न सन् संवत् का ब्योरा और न कोई क्रम विशेष; वरन् ये स्फुट कवित्त मात्र हैं और बाद को लोगों ने इन छंदों में भूषणकृत छत्रसाल विषयक दो एक और छंद मिलाकर "छत्रसाल दशक" नामक १०–१२ छंदों का "ग्रन्थ" पूरा कर दिया, क्योंकि इसमें छत्रसालजी बूँदी नरेश के भी दो छंद हैं, जिनको छत्रसाल बुंदेला के ग्रंथ में न होना चाहिए था। यह छोटा सा ग्रन्थ ओज-प्राबल्य में एकदम अद्वितीय है।

स्फुट काव्य

इसमें भूषण के ५४ छंद (जो हमें मिले) लिखे गए हैं। इसमें कोई ऐतिहासिक क्रम नहीं रक्खा गया है; क्योंकि प्रथम नंबर पर शिवाजी की प्रशंसा का छंद रखना हमें भला मालूम पड़ा।

इन छंदों के विषय में विशेष हमें कुछ वक्तव्य नहीं है। जैसे प्रभावपूरित भूषणजी के और छंद हुआ करते हैं, वैसेही ये भी हैं। स्फुट काव्य के संबंध में हमें केवल निम्नलिखित छंद पर विचार करना है—

मालती सवैया

"बालपने में तहौवरखान को सैन समेत अँचै गयो भाई।
ज्वानी में रुंडी औ खुंडी हने त्यों समुद्र अँचै कछु वार न लाई॥
वैस बुढ़ापे कि भूँख बढ़ी गयो बंगस वंस समेत चबाई।
खाये मलिच्छन के छोकरा पै तवौ डोकरा को डकार न आई॥"

यह छंद मुद्रित प्रतियों में भूषण के स्फुट छंदों में लिखा हुआ है। इसमें छत्रसाल का वर्णन है; क्योंकि तहौवरखाँ, समुद्र (अब्दुस्सम्मद) और बंगश से वेही तीस वर्ष, चालीस वर्ष और उन्नासी वर्ष की अवस्थाओं में क्रमशः लड़े थे। बंगश का युद्ध सन् १७२९ में हुआ था, सो यदि यह छंद भूषणकृत मानें तो उनकी पूरी अवस्था ९४ साल से कम नहीं मान सकते। अतः हमें कुछ संदेह है कि यह छंद भूषणकृत नहीं है। भूषणजी

छत्रसाल से कई साल बड़े थे। वे बुँदेला महाराज को "डोकरा" कभी न कहते। यह छंद किसी छोटी अवस्था के कवि ने बनाया है। इसमें भूषण का नाम भी नहीं है।

भूषण की कविता का परिचय

हम भूषण महाशय के चारो ग्रंथों के विषय में अलग अलग अपने विचार प्रकट कर चुके। अब चारो ग्रंथ मिला कर इनकी समस्त रचना पर जो कुछ विशेष कथनीय है, वह नीचे लिखा जाता है।

भाषा—इनकी भाषा विशेषतया ब्रजभाषा है, जैसी कि उस समय के प्राय: सभी कवियों की थी। जान पड़ता है कि उस समय के कुछ महाराष्ट्रवासी भी हिंदी भाषा को भली भाँति समझते थे, नहीं तो भूषण की कविता का ऐसा आदर शिवाजी की सभा में कैसे होता? युद्धकाव्य लिखने के कारण भूषणजी को ब्रजभाषा के साथ प्राकृत मिश्रित भाषा भी लिखनी पड़ी है, तथापि इन्होंने उस समय के अन्य युद्ध-काव्य रचयिताओं से बहुत कम इस भाषा का प्रयोग किया है। यह भूषण के कवित्व-शक्ति-संपन्न होने का प्रमाण है। वीर कविता में अन्य कवियों को प्राकृत भाषा का अधिक प्रयोग करना पड़ा है। फिर अन्य कवियों की युद्ध कविता में माधुर्य्य और प्रसाद गुणों की बड़ी न्यूनता रहती है; परंतु भूषण महाशय इन गुणों को भी अपनी कविता में बहुतायत से ला सके हैं।

प्राकृतवत् भापा और व्रजभापा के अतिरिक्त भूपण ने कहीं कहीं बुंदेलखंडी तथा खड़ी वोली का भी प्रयोग किया है।

प्राकृतवत् भापा के उदाहरणार्थ शि०भू० छंद नं० १४७ और खड़ी वोली के उदाहरणार्थ नं० १६१ तथा २०९ देखिए।

भूषणजी ने अपनी कविता में यत्र तत्र फ़ारसी के असाधारण शब्द रक्खे हैं, यथा—जावता करन हारे व तुजुक (शि० भू० नं० ३८), दरियाव (शि० भू० नं० १०८), ग़ाज़ी, जशन, तुजुक व इलाम (शि० भू० नं० १९८), मुहीम (शि० भू० नं० १८०), वेइलाज (शि० भू० नं० २७६), गुस्लख़ाना, सिलहख़ाना, हरमख़ाना, शुतुरख़ाना, करंजख़ाना व ख़िलवतख़ाना (शि० भू० नं०३६१) इत्यादि। इससे विदित होता है कि भूपणजी फ़ारसी भी जानते थे; परंतु अच्छी तरह नहीं, क्योंकि उपर्युक्त उदाहरणों में इन्होंने जाव्रता करन हारे, इलाम तथा वेइलाज का प्रयोग वेमहाविरे किया है। उपर्युक्त उदाहरणों के अतिरिक्त निम्नलिखित छन्दों में फ़ारसी के असाधारण शब्द आए हैं। इनमें कई स्थानों पर शब्दों का अशुद्ध प्रयोग है:—शिवराज-भूषण छंद नंबर ३४, १०३, ११४, १५९, २०९, २४२, २५८, २८३, २९९, ३१५, ३६०, शिवाव्रावनी छंद नंबर २, ६, १०, १४, १७, २०, २१,२२, २३, २९, ३०, ३३, ३४, ४०, ४१, छत्रसाल-दशक, छंद नंबर १०।

भूषणजी ने कहीं कहीं असाधारण एवं विकृत रूप के शब्द भी लिखे हैं; यथा—छिया (१०), कुरुख़ (३४), कहाव (५१), जोब (५२, १४२, १९८), धरवो (१५५ बुंदेलखंडी

भाषा), छंद नंबर ३५४, ३५५, ३५६, ३५७ का वृहदंश, खोम (३६०), जंपत (१५), चकत्ता, खुमान, अमाल (७३), गारो (१८६), ऐल (शिवा बा० नं० २), बप (शि० बा० नं० १५), इत्यादि।

उपर्युक्त उदाहरणों में जहाँ केवल अङ्क लिखे हैं और ग्रंथ का नाम नहीं लिखा है, वहाँ शिवराजभूषण वाले छंदों के नंबर समझने चाहिएँ। इतने ग्रंथ और विशेष करके युद्ध वर्णन में यदि उन्होंने इतने अथवा कुछ और शब्दों का अव्यवहृत एवं विकृत रूप में समावेश किया, तो आश्चर्य की बात नहीं है, वरन् आश्चर्य तो यह है कि भूषण ने इतने कम शब्द मरोड़ कर अपना काम कैसे चला लिया।

यदि इस कवि के कुल शब्द गिने जायँ तो अन्य अनेक ग्रंथ रचनेवालों की अपेक्षा इसका शब्द समूह बड़ा ठहरेगा। अँगरेज़ी के सुप्रसिद्ध कवि शेक्सपियर ने इंगलैंड के हर एक कवि से अधिक शब्दों का प्रयोग किया है और यह उसकी कविता का एक बड़ा गुण समझा जाता है। यही गुण भूषण में भी विद्यमान है। इनकी कविता में अनुप्रास यद्यपि बहुतायत से आए हैं, तथापि वीरताप्रधान ग्रंथों के रचयिता होने के कारण इन पर कोई दोषारोपण नहीं कर सकता। फिर इन्होंने पद्माकरजी की भाँति अनुप्रास एवं यमक का स्वाँग भी नहीं बनाया है। उदाहरण ये हैं—शिवराजभूषण में छंद नंबर १, ३८, ४२, ४८, ५६, ६८, ७३, ७७, ८३, १०१, ११०, १३०, १३३, १३४, १६१, १६२, १६६,

१८९, २१५, २२६, २४७, २५४, २६६, ३३६, ३४०, ३५१, ३५४, से ३५९ तक, ३६०, ३६१, ३६४, शिवाबावनी में छंद नंबर २, ३, ६, ८, २६, ३७, ३८, ४०, ४२, ४३, ४५, ४८, छत्रसालदशक के छंद नंबर १, ३, ४, ८।

भूषणजी ने कुल मिलाकर दस प्रकार के छंद लिखे हैं जिनके नाम नीचे लिखे जाते हैं। शिवराज भूषण के जिस नंबर के छंद के नोट में छंद विशेष का लक्षण दिया है, उसका ब्योरा ब्रैकेट में यहाँ लिख दिया गया है।

छंदों के नाम ये हैं

मनहरण (१), छप्पय (२), दोहा (३), मालती सवैया (१५), हरिगीतिका (१६), लीलावती (१३६), किरीटी सवैया (३२०), अमृतध्वनि (३५४), माधवी सवैया (३६८), और गीतिका (३७१)। भूषण ने अपने ग्रंथों का मुख्यांश मालती सवैया और मनहरण में लिखा है। अलंकारों के लक्षण ये दोहे में लिखते थे। छप्पय भी कुछ अधिकता से पाए जाते हैं। शेष छंदों का प्रयोग बहुत कम हुआ है। उस समय के कवियों में इसी प्रकार के छंद लिखने का कुछ नियम सा पड़ गया था, जो प्राचीन प्रणाली के कवियों में आज तक चला आता है।

भूषणजी पदांत में विश्राम चिह्न रहित छंद बहुत कम लिखते थे; परंतु शि० भू० के छंद नंबर ३४९, ३६३ में ऐसा हुआ है। इसी को अँगरेजी में Run-on-line कहते हैं। भूषण की कविता में विश्राम चिह्नों पर विशेष ध्यान देना चाहिए। कोई कोई छंद

ऐसे हैं कि जिनमें विश्रामों पर ध्यान न देने से अर्थ में गड़बड़ पड़ सकती है। उदाहरण, शिवराजभूषण छंद नंबर १, ३, ४०, ४८, ८१, १०७, २४७, ३०९, ३६६, ३८१ इत्यादि। कुल बातों पर ध्यान देने से विदित होता है कि भूषण की भाषा तथा शब्दयोजना की रीति बहुत ही प्रशंसनीय है।

भूषण महाराज ने विषय और विशेषतया नायक चुनने में बड़ी बुद्धिमत्ता से काम लिया है। शिवाजी और छत्रसाल से महानुभावों के पवित्र चरित्रों का वर्णन करनेवाले की जहाँ तक प्रशंसा की जाय, थोड़ी है। शिवाजी ने एक ज़िमींदार और बीजापुराधीश के नौकर के पुत्र होकर चक्रवर्ती राज्य स्थापित करने की इच्छा को पूर्ण सा कर दिखाया और छत्रसाल बुँदेला ने जिस समय मुग़लों का सामना करने का साहस किया था, उस समय उनके पास केवल पाँच सवार और पचीस पैदल थे। इसी "सेना" से इस महानुभाव ने दिल्ली का सामना करने की हिम्मत की और मरते समय अपने उत्तराधिकारियों के लिये दो करोड़ वार्षिक मुनाफ़े का स्वतंत्र राज्य छोड़ा।

भूषण महाराज अन्य कवियों की भाँति ऐसे छंद कम बनाते थे जो केवल नायक का नाम बदल देने से किसी की प्रशंसा के हो सकते हों। इनकी कविता में सहस्रों घटनाओं का समावेश है। हर स्थान पर इन्होंने कितने ही ऐतिहासिक व्यक्तियों और स्थानों का वर्णन छंदों में किया है। इतने लोगों के नाम काव्य में ये महाशय लाए हैं कि कितने ही के विषय में अनेक भारी भारी

ऐतिहासिक ग्रंथ ढूँढ़ने पर भी किसी तरह का पता लगाए नहीं लगता। मनुष्यों के नाम लिखने में प्रायः उनके पिता का नाम, जाति और वासस्थान का भी पता भूषणजी लिख दिया करते थे। आपने प्रबंधध्वनि (Allusions) भी बहुत रक्खी है।

ऐतिहासिक घटनाएँ लिखने के साथ ही साथ आप की सत्य-प्रियता भी विशेष सराहनीय है। यद्यपि शिवाजी ने इन्हें लाखों रुपये दिए, तथापि इन्होंने उनके हारने तक का वर्णन किसी न किसी प्रकार कर ही दिया; और जो बातें उनकी सत्यता एवं महत्व के प्रतिकूल थीं, उन्हें भी कह दिया है (शि० भू० छंद नं० २१२, २१३, देखिए)। इसी प्रकार जब ये महाशय छत्रसाल के यहाँ बैठे थे, तब भी इन्होंने कहा कि "साहू को सराहौं कै सराहौं छत्रसाल को"। इनके चित्त में साहू का ख्याल अधिक था और छत्रसाल का उनके बाद। इस विचार को इन्होंने स्वयं छत्रसाल तक पर प्रकट करने में संकोच नहीं किया। कमाऊँ महाराज के यहाँ भी अपनी अप्रसन्नता प्रकट कर दी। इसको स्वतंत्रता भी कह सकते हैं; परंतु सत्यप्रियता का भी इन बातों में बहुत कुछ अंश है। इन्होंने शिवाजी के शत्रुओं को उनसे मेल करने की बहुत सलाह दी है। शि० भू० नंबर १५०, २६१, २७६, २७९, ३१२ तथा शि० बा० नं० ३१ देखिए।

भूषण महाराज ने घटनाओं के साथ कभी कभी ख़याली अथवा भड़कीला वर्णन कर दिया है; पर ऐसी बातों को उन्होंने सत्य बातों की भाँति नहीं कहा है और न उन्हें असत्य प्रमाणित

करके उनकी सत्यप्रियता के प्रतिकूल कुछ कहना ही चाहा है। वे केवल कविता का चमत्कार दिखाने और शत्रुओं का उपहास करने के निमित्त कही गई हैं। उदाहरण—शिवराजभूपण के छंद नंबर ८९, ९०, ९३, ९४, ९६, १०५, २०९, २२८, २६३, २७०, २७६, ३२३, ३२४, व शिवावावनी के छंद नं० १३, २९, ४१।

भूपणजी ने शिवावावनी के छंद नंबर १२ में अमीर औरतों के विषय में कहा है कि "किसमिस जिनको अहार" एवं "नास-पाती खातीं ते वनासपाती खाती हैं"। नासपाती अथवा किसमिस का आहार कोई बड़ी वात नहीं है। या तो भूपण ने ये वातें मज़ाक़ में कही हैं या उस समय नासपाती और किस-मिस वहुमूल्य और अमीरपसंद वस्तुएँ होंगी।

भूपणजी ने कई जगह "गुसलखाना" का वर्णन किया है (शि० भू० नं० ३४, ७९, २०४, २०९, २६५, व शि० वा० नं० १६ देखिए) परंतु साफ़ साफ़ कहीं नहीं कहा कि गुसलख़ाने में क्या हुआ। यह भी कई जगह कहा गया है कि दरवार में जाकर शिवाजी ने औरंगजेव को सलाम नहीं किया (शि० भू० नं० १८६, १९८, ३०९ शि० वा० छंद नंवर १६)। एक उपन्यास में हमने यह देखा है कि औरंगजेव ने जव सुना कि शिवाजी का इरादा उसे सलाम करने का नहीं है, तो उसने फाटक में आरा-इश के कई सामान लगा कर उसे ऐसा छोटा कर दिया कि विना सर झुकाये कोई मनुष्य उसके भीतर घुस न सके। इस पर शिवाजी ने तनकर अपना छाता इतना वाहर निकाल दिया

कि सिर शेष देह के पीछे हो गया। तब उसने पहले अपना पैर अंदर रख के कुल देह अंदर निकाल कर तब सर फाटक के भीतर किया जिससे कि उसे सिर झुकाना नहीं पड़ा। टॉड राजस्थान में लिखा है कि सिरोही के महाराज ने लगभग सन् १६८० ई० में औरंगजेब के ही राजत्व काल में बिलकुल ऐसा ही किया। इससे विदित होता है कि उस समय भी दरबार में जाकर अकड़ के कारण सलाम न करना संभव था। इसी प्रकार मारवाड़ के प्रसिद्ध अमरसिंह ने शाहजहाँ के सामने उसके मुसाहब सलाबतखाँ को दरबार ही में मारडाला था। तब शाह-जहाँ मारे डर के ज़नाने में भाग गया था। अतः शिवाजी ने सलाम न किया हो तो कोई आश्चर्य नहीं। फिर भी तकारुब तक में सलाम किया जाना लिखा है। भूषणजी जब अपने नायक की ख्याति बढ़ाने को कोई असंभव अथवा असत्य बात कहते थे, तो उसे एकाध बार दबी ज़बान कहकर छोड़ देते थे (शि० भू० नं० ६२) और बार बार बड़ा जोर देकर नहीं कहते थे। फारस के अब्बास शाह से शिवाजी से कभी लड़ाई नहीं हुई; अतः एक बार कहकर फिर भूषण ने उसका नाम भी न लिया; परंतु इस गुसलखाने के विषय में कई छंद बड़े जोर के कहे हैं और यही हालत सलाम की है। इतिहास भी इन बातों का बहुत कुछ समर्थन करता है। भूषण के कथन में केवल एक स्थान पर इतिहास से प्रतिकूलता पाई जाती है और वह यह है कि इतिहासों ने शिवाजी को भवानी का भक्त माना है और

भूषण ने शिव का (शि० भू० नं० १४, १५८, २३६, ३२६, देखिये)। इसके विषय में एक वहुत वड़ा आश्चर्य यह होता है कि भूषणजी स्वयं भवानी के भक्त थे (शि० भू० नं० २ देखिए) और कहा जाता है कि उनके पिता के चार पुत्र भवानी ही की कृपा से हुए थे। तव यदि शिवाजी भी भवानी के भक्त होते तो भूषण ऐसा क्यों न कहते ? भूषण ने शिवाजी को सिवाय शिव के और किसी का भक्त नहीं वताया है। इधर कई इतिहासों के अतिरिक्त स्वयं रानड़े महोदय ने उन्हें भवानी का भक्त कहा है। हमारे अनुमान में भूषण ने किसी गुप्त कारण से (जैसे शिवाजी की आज्ञा से) अपनी कविता में भवानी का वर्णन नहीं किया। शिवाजी भवानी और शिव दोनों के भक्त थे।

भूषण ने शिवाजी की और वड़ाइयों में उन्हें अवतार भी माना है (शि० भू० नं० ११, १२, ७५, ८७, १०४, १४२, १६६, २२८, २९५, ३१३, ३४८, ३८१, देखिए)। यों तो प्रत्येक मनुष्य में आत्मा परमेश्वर का अंश है, और इसलिये हर आदमी अवतार कहा जा सकता है; परंतु भूषण ने शिवाजी को कई वार हरि का अवतार कहा है। ऐसा करने में भूषण ने ठकुरसोहाती को सीमा के पार पहुँचा दिया। शि० भू० नं० ३२६ में शिवराज का वहुत ही यथार्थ वर्णन पाया जाता है।

इनकी कविता की उद्दंडता दर्शनीय है। इन्होंने शिवाजी की चढ़ाइयों का वड़ा उद्दंड एवं शत्रुओं पर उनके प्रभाव का वड़ा भयानक वर्णन किया है।

उत्तम छंद

भूषणजी की कविता में बहुत से उत्तम छंद हैं। हम उनके परमोत्कृष्ट छंदों की एक सूची नीचे देते हैं। इनमें से कई छंदों में उद्दंडता भी पाई जायगी। शिवराजभूषण के उत्तम छन्द १६ से २३ तक, ३५, ३७, ३८, ४२, ४८, ५६, ६८, ८७, ९७, ९९, १००, १२३, १२५, १३०, १३४, १५०, १७३, १७६, १८२, १८६, २००, २०६, २०७, २२६, २४५, २४७, २५२, २५४, २५८, २७५, २८८, २९०, २९३, २९५, ३०१, ३०५, ३०७, ३१०, ३२६, ३२८, ३३१, ३३२, ३३४, ३४८, ३५०, ३६०, ३६१, ३७०। शिवाबावनी के छंद २, ३, ६, १७, २३, २४, २६, २७, ३२, ३५, ३७, ३८, ३९, ४०, ४२, ४३, ४४, ४५, ४६, ४७, ४८, ४९, ५०, ५१। छत्र-साल दशक के छंद १ से १० तक सभी।

स्फुट काव्य के छंद २, ८, १४, १६, १७, १८, १९, २०, २२, २३, २८, २९, ३४, ३५, ४४, ४६, ४८।

जातीयता

भूषण महाराज को जातीयता का सदैव बड़ा ध्यान रहता था (शि० भू० नं० १०, १२, ६१, ६९, ७३, १३०, १४३, १४६, २३६, २४५, २५८, २७५, २९३, ३३६, ३३७। शि० वा० नं० २०, २१, २२, २५, ४८, ५१, ५२,। छत्र० दशक नं० ६ स्फुट नं० २१)। इनके जातीयता विषयक इतने छंद होते हुए भी किसी ने शि० वा० छंद नं० ४६ में "हिंदुवानो हिंदुन को हियो हहरत है" लिख

दिया था। भूषण की लेखनी से ऐसे घृणित शब्द निकलने से "दहिलाने दहिलन हियो दहरत है" यथार्थ समझ पड़ता है। भूषण जी पूरे जातीय (National) कवि थे और टेनिसन की भाँति इन्हें भी प्रतिनिधि कवि (Representative poet) कहना चाहिए। जातीयता, जातिगौरव और हिंदूपने का जितना इन्हें ध्यान रहता था, उतना हिंदी के अधिकांश कवियों को नहीं था। इसका एक भारी प्रमाण यह भी है कि इन्होंने छत्रसाल बुँदेला के सुप्रसिद्ध पिता चंपतिराय पर (जिन्होंने कुछ दिनों के लिये औरंगजेब की सेवा स्वीकार कर ली थी) एक भी कवित्त नहीं बनाया, पर उनके प्रतिद्वंद्वी छत्रसाल हाड़ा पर दो कवित्त कहे हैं; क्योंकि हाड़ा महाराज औरंगजेब से लड़े थे। औरंगजेब से भूषणजी इस कारण विशेष नाराज थे कि वह हिन्दुओं को सताता था।

यद्यपि वर्त्तमान समय की दृष्टि से इस कवि की मुसलमानों के प्रति कटूक्तियाँ अनुचित एवं विषगर्भित ज्ञात होती हैं, तथापि हम लोगों को इनकी कविता को इस दृष्टि से न जाँचना चाहिए। उस समय औरंगजेब के अधम वर्ताव के कारण हिंदू मुसलमानों में मूषक मार्जार की भाँति स्वाभाविक शत्रुता थी। अतः इन्होंने चाहे जो कुछ कहा, उस समय वह अनुचित न था। फिर उस काल में शत्रुओं के विषय में परम कटु शब्द कहने की कुछ रीति सी पड़ गई थी, यहाँ तक कि मुसलमान इतिहासकार शिवाजी एवं मुसलमानों के अन्य शत्रुओं के विषय में

साधारणतः यों लिखा करते थे कि "वह कुत्ता खाँ साहब से पूना में लड़ा", "उस कुत्ते ने" अमुक स्थान पर अमुक खाँ साहब से लड़कर पराजय पाई। "उस कुत्ते ने" फलाँ साहब सूबा को बड़ी बहादुरी से लड़ कर पराजित किया। मुसलमान इतिहास-लेखकों ने एक महारानी तक के विषय में लिखा है कि "उस स्थान के कुल कुत्ते उस कुतिया पर बड़ी भक्ति रखते थे"। इस प्रकार के वर्णन ईलियट-कृत मुसलमान समय के इतिहास के मुसलमानी इतिहासों के उल्थाओं में प्रायः पाए जायँगे। जब उस काल के इतिहास लेखक ऐसे सभ्य थे, तब कवियों से कोई कहाँ तक आशा कर सकता है? भूषणजी की कविता में जहाँ देखिए, शिवाजी की विजयों से हिंदुओं का प्रभुत्व बढ़ता देख पड़ता है। जिन दो एक हिंदुओं से शिवाजी का युद्ध भी हुआ, उनके विषय में इन्होंने यही कहा कि "हिंदु बचाय बचाय यही अमरेस चँदावत लौं कोउ टूटै"। शिवाजी ने राजा जयसिंह से युद्ध न करके अपनी हार मान ली और उन्हें अपने कुछ गढ़ दिए; परंतु युद्ध करके हिंदू-खून नहीं बहाया। इस पर यद्यपि शिवाजी की पराजय हुई, तथापि भूषण की राय में उसका यश वर्द्धित हुआ।

"तैं जयसिंहहिं गढ़ दिये शिव सरजा जस हेत"।

फिर यद्यपि शाहजी मुसलमानों के नौकर थे, तथापि इन्होंने उनके राजपद की प्रशंसा न करके उन्हें—

"साहस अपार हिंदुवान को अधार धीर सकल सिसौ-

दिया सपूत कुल को दिया" (शि० भू० नं० १०) कहा है। नौकरी के विषय में केवल इतना इशारा है कि "शाहि निजाम सखा भयो"।

इनके नायक छत्रसाल थे, तथापि इन्होंने उनके पिता चंपतिराय पर एक भी छंद न बनाया, क्योंकि वे धौलपुर में औरंगजेब की ओर से लड़े थे जो हिंदुओं का घोर शत्रु था। उसी युद्ध में छत्रसाल हाड़ा यद्यपि चंपति के प्रतिकूल लड़े थे, तो भी इन्होंने चंपति की प्रशंसा न करके छत्रसाल हाड़ा की प्रशंसा की; क्योंकि वे महाराज हिंदुओं के शत्रु (औरंगजेब) के प्रतिकूल लड़े थे। वास्तव में भूषण की कविता के नायक हिंदू हैं। जो मनुष्य हिंदुओं के पक्ष में लड़ता था, उसी का भूषण ने वर्णन किया है, चाहे वह शिवराज हो या छत्रसाल या राववुद्ध या अवधूतसिंह या शंभाजी या साहूजी। इनको जातीयता का ऐसा ध्यान था कि इन्होंने शिवाजी के हिंदू शत्रु उदयभानु आदि तक का प्रभावपूरित वर्णन किया है, यद्यपि वह मुसलमान हो चुका था।

परिणाम

इन महाशय की कविता में कोई कहने योग्य दोष नहीं है। भाषा कवियों में इनका स्थान बहुत ऊँचा है और इनकी भाँति सम्मान कविता से किसी का नहीं हुआ। वास्तव में युद्धकाव्य करने में इन्होंने बड़ी ही कृतकार्य्यता पाई है। युद्ध का ऐसा उत्तम वर्णन किसी कवि ने नहीं किया।

भूषण के विषय में शिवसिंह सेंगर का मत यह है—"रौद्र, वीर, भयानक ये तीनों रस जैसे इनके काव्य में हैं, ऐसें और कवि लोगों की कविता में नहीं पाये जाते"—(इन्होंने) "ऐसे ऐसे शिवराज के कवित्त वनाये हैं जिनके वरावर किसी कवि ने वीर यश नहीं वना पाया।" इनकी युद्ध कविता के विषय में इतना अवश्य कहा जा सकता है कि इन्होंने सर वाल्टर स्काट की भाँति किसी युद्ध का पूरा वर्णन नहीं किया। स्यात् इनका ध्यान इस ओर कभी आकृष्ट नहीं हुआ, नहीं तो जव ये महाराज शिवराज के साथ रहा करते थे और कितने ही युद्ध इन्हों ने अपने नेत्रों से देखे होंगे, तव उनका वर्णन करना इन जैसे वड़े कवि के लिये कितनी वात थी! यह हिंदी साहित्य का दुर्भाग्य था कि इन महाशय ने इस ओर ध्यान नहीं दिया। आज कल कतिपय महाराष्ट्र महानुभाव हिंदी की अच्छी सेवा कर रहे हैं, सो मानों उनके उत्साह वर्द्धनार्थ भूषण ने पहले ही से हिंदी में महाराष्ट्र-कुल-चूड़ामणि महाराज शिवाजी का यश वर्णन कर रक्खा है। जैसे अपने नायकों की प्रशंसा में भूषण ने केवल कोरी वड़ाई न करके सत्य घटनाओं का वर्णन किया है, वैसे ही यदि अन्य कविगण भी करते तो हिंदुओं की ओर से भी भारतवर्ष का यथार्थ इतिहास लिखने में कोई कठिनाई न पड़ती। इस कवि की नरकाव्य करने में कुछ ऐसी हथौटी सी वँध गई थी कि जिसका यह यश वर्णन करता था, उसका रोम रोम प्रफुल्लित हो जाता था। इसी कारण इनका हर जगह असाधारण सत्कार होता था।

सब मिला कर निष्कर्ष यह निकलता है कि भूषण महाराज का काव्य वास्तव में हिंदी साहित्य का भूषण है। स्थिर लक्षणानुसार चाहे इनकी कविता को कोई महा-काव्य संस्कृत रीति ग्रंथों में न कह सके; परंतु तो भी इन्हें हम बिना महा-कवि कहे नहीं रह सकते।

हमारा ग्रंथ-संपादन

भूषणजी की इस ग्रंथावली के संपादन करने में हमने निम्न-लिखित पुस्तकों से विशेष सहायता ली है—

(१) भूषण ग्रंथावली, बंगवासी प्रेस, कलकत्ता।
(२) शिवराजभूषण, नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ।
(३) ,, ,, पूनावाली प्रति।
(४) ,, ,, निर्णयसागर प्रेस, बम्बई।
(५) श्री शिवाबावनी व छत्रसालदशक (व स्फुट कविता) श्री कल्पतरु प्रेस, बम्बई।
(६) शिवराजभूषण, बारावंकी में मुद्रित।
(७) ,, ,, हस्तलिखित स्वर्गीय पं० युगलकिशोर जी मिश्र के पुस्तकालय गंधौली (सीतापुर) की प्रति।
(८) ,, ,, हस्तलिखित स्वर्गीय कवि गोविंद गिल्ला भाई जी काठियावाड़ के पुस्तकालय की।
(९) ग्रैंट डफ़ कृत महाराष्ट्र जाति का इतिहास।
(१०) रानडे महोदय-कृत महाराष्ट्र शक्ति का अभ्युदय।

(११) टॉड-कृत राजस्थान ।
(१२) शिवसिंह-सरोज ।
(१३) बुंदेलखंड गजेटियर ।
(१४) ईलियट-कृत मुसलमानों के समय का इतिहास ।
(१५) लाल कवि कृत छत्र-प्रकाश ।
(१६) हंटर कृत भारतीय इतिहास ।
(१७) बर्नियर के ग्रंथ में औरंगज़ेब का हाल ।
(१८) प्रो० यदुनाथ सरकार कृत औरंगज़ेब तथा शिवाजी ।
(१९) केलूसकर तथा तकाखव कृत शिवाजी ।
(२०) मध्य भारत, रीवाँ, पन्ना, ओरछा, छतरपुर, बाँदा तथा हमीरपुर के गजेटियर ।
(२१) मुंशी श्यामलाल-कृत बुन्देलखंड का इतिहास ।
(२२) नंदकुमार देव कृत वीरकेसरी शिवाजी ।

इन सब में केलूसकर महाशय कृत शिवाजी का ग्रंथ बहुत ही प्रशंसनीय तथा सर्वश्रेष्ठ है ।

सप्तम और अष्टम ग्रंथों से और विशेषतया अष्टम से हमें बहुत सहायता मिली है । छंद सब से अधिक गिल्ला भाई जी वाली प्रति में मिले, परंतु सब से शुद्ध प्रति पं० युगलकिशोरजी वाली पाई गई । तो भी कहना ही पड़ता है कि बहुत शुद्ध कोई भी प्रति न थी और कतिपय तो महा नष्ट भ्रष्ट थीं । अतः हमें अनेक छंद अपनी ओर से सब प्रतियों को मिला कर एवं अपने कंठस्थ छंदों द्वारा संशोधित करने पड़े । कतिपय छंद किसी भी

प्रति में शुद्ध नहीं मिले। ऐसी दशा में विवश होकर हमें वे छंद अपनी ओर से शुद्ध करने पड़े हैं।

स्वर्गीय कविवर गोविंद गिल्ला भाईजी के प्रति हम कहाँ तक कृतज्ञता प्रकाश करें कि जिन महाशय ने हम लोगों से भेंट न होने पर भी अपनी अमूल्य हस्तलिखित प्रति कृपा करके हमारे पास भेज दी और कई महीनों तक उसे हमारे पास रहने दिया। पंडित युगलकिशोरजी हमारे निकटस्थ भतीजे ही थे; अतः उनके धन्यवाद के विषय में हमें मौनावलंबन ही उचित है।

सहृदय पाठकों को ग्रन्थावलोकन से विदित हो गया होगा कि इसमें शब्दों के लिखने में उनको शुद्ध संस्कृत के स्वरूप में न लिख कर परिवर्तित हुए हिंदी रूप में लिखा गया है। यथा— स्रम (श्रम), सकति (शक्ति); भूपन (भूषण); दुग्ग (दुर्ग); छिति (क्षिति) इत्यादि।

इसके विषय में हमें केवल यही वक्तव्य है कि भाषा में जो रूप अच्छा समझा जाता है और जो रूप भूषणजी एवं अन्य कविगण पसंद करते हैं, वही लिखा गया है। भाषा के कविगण केवल श्रुतिकटु बचाने एवं श्रुतिमाधुर्य्य लाने के लिये ऐसा किया करते हैं और इसमें कोई दूषण भी नहीं। इस प्रकार कविगण प्रायः निम्नलिखित वर्ण अपने काव्य में न आने देने का प्रयत्न करते हैं—ट वर्ग, व, श, ड़, ऋ, क्ष, युक्त वर्ण, आधी रेफ इत्यादि।

हमारे विचार में तो भाषा में इन संस्कृत व्याकरण संबंधी

झगड़ों के हटा देने से कोई दोष नहीं। फ़ारसी में स्वाद, से, सीन, ज़ो, ज्वाद, ज़ाल, ज़े, अलिफ़, ऐन आदि के व्यवहार में जो कठिनाइयाँ पड़ती हैं, वे सब पर विदित हैं। भाषा में ऐसी बातों के स्थिर रखने की कोई आवश्यकता नहीं मालूम होती। हमें "कार्य्य, मर्म्म, लङ्क, मञ्च, कण्ठ, अन्त, कवि" इत्यादि को हिंदी (देवनागरी) में कार्य या कारज, मर्म या मरम, लंक, मंच, कंठ, अंत, कवि," लिखने में कोई विशेष हानि नहीं प्रतीत होती। भाषा की लिखावट सुगम होनी चाहिए। यदि कोई मनुष्य बिना भाष्य पर्यंत पढ़े देवनागरी लिपि तथा हिंदी भी न लिख सके तो वह सर्वव्यापिनी कैसे हो सकती है?

हमने इस संस्करण में अपनी टिप्पणियाँ दे दी हैं। कदाचित् वे हमसे भी कम हिंदी-परिचित महाशयों के काम आवें और हमारा साल डेढ़ साल का श्रम सुफल हो जाय। हर्ष का विषय है कि केवल २० वर्ष के अन्दर हमारे इस ग्रन्थ को चतुर्थ संस्करण का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। भूषण महाराज की कविता ऐसे ही आदर के योग्य है भी। अब यह पंचम संस्करण पाठकों के सामने उपस्थित किया जाता है।

४-४-१९०७
६-१-२२
३०-६-२६
२८-१०-३८

श्यामबिहारी मिश्र
शुकदेवबिहारी मिश्र
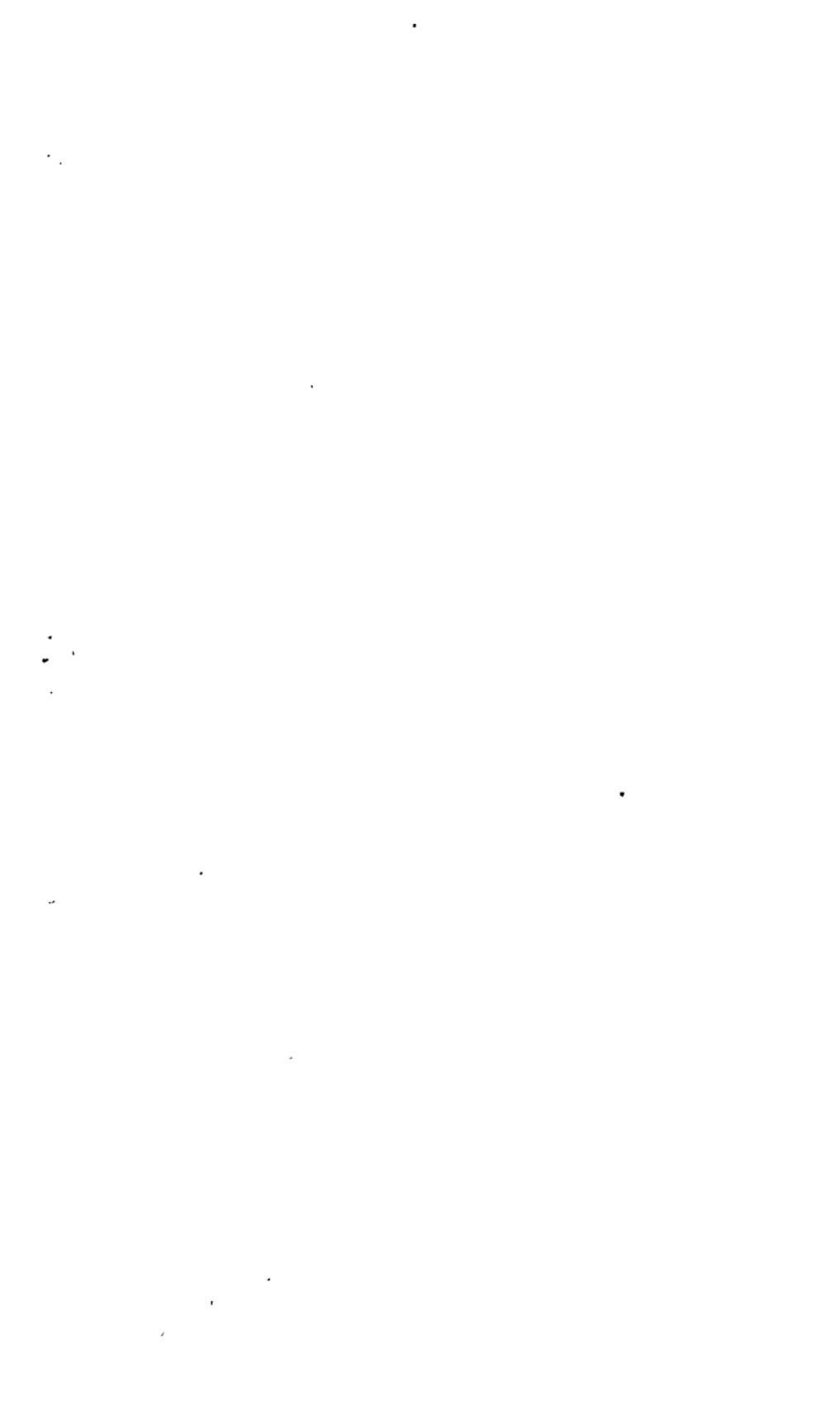
भूषणग्रंथावली

शिवराज-भूषण

मंगलाचरण

कवित्त शुद्ध घनाक्षरी अथवा मनहरण[1]

विकट अपार भव पंथ के चले को स्रम हरन करन बिजना से ब्रह्म ध्याइए। यहि लोक परलोक सुफल करन कोकनद से चरन हिए आनि कै जुड़ाइए॥ अलि कुल कलित कपोल, ध्यान ललित, अनंद रूप सरित मैं भूषन अन्हाइए। पाप तरु भंजन बिघन गढ़ गंजन जगत मनरंजन द्विरदमुख गाइए॥ १॥

---

१ यह उस दंडक का नाम है जिसमें इकतीस वर्ण होते हैं, लघु गुरु का कोई क्रम नहीं होता, केवल अंतिम वर्ण अवश्य गुरु होता है, जिसमें सोलहवें वर्ण पर प्रथम यति होती है और अंत के वर्ण पर द्वितीय। देवजी के मतानुसार १४ वें अथवा १५ वें वर्ण पर भी यति हो सकती है, पर वे मध्यम एवं अधम यतियाँ हैं।

छप्पय अथवा षटपद[1]

जै जयंति जै आदिसकति जै कालि कपर्दिनि।
जै मधुकैटभ छलनि देवि जै महिप विमर्दिनि॥
जै चमुंड[2] जै चंड मुंड भंडासुर खंडिनि।
जै सुरक्त जै रक्तबीज बिड्डाल विहंडिनि॥
जै जै निसुंभ सुंभद्दलनि भनि भूषन जै जै भननि।
सरजा समत्थ सिवराज कहँ देहि बिजै जै जग-जननि॥ २॥

दोहा[3]

तरनि[4] जगत जलनिधि तरनि[5] जै जै आनँद ओक।
कोक कोकनद सोकहर, लोक लोक आलोक[6]॥ ३॥

अथ राजवंश वर्णन

राजत है दिनराज को वंस अवनि अवतंस।
जामैं पुनि पुनि अवतरे कंसमथन प्रभु अंस॥ ४॥

---

१ इस छंद में ६ पद होते हैं जिनमें प्रथम चार काव्य छंद और अंतिम दो उल्लाला होते हैं। काव्य छंद में प्रत्येक पद २४ कला (मात्रा) का होता है और उसकी ११ वीं कला पर प्रथम यति होती है। पद चार होते हैं। उल्लाला छंद २८ कला का होता है जिसमें प्रथम यति १५ वीं कला पर होती है।

२ चामुंडा देवी जी। बिडाल की कथा दुर्गा में है और भंडासुर की उपपुराण में।

३ "प्रथम कला तेरह धरौ पुनि गेरह गनि लेहु। पुनि तेरह गेरह गनौ दोहा लच्छन एहु"॥ लघु अक्षर की एक कला (मात्रा) होती है और गुरु की दो।

४ सूर्य। ५ नौका। ६ रोशनी अथवा दर्शन।

महावीर ता वंस मैं भयो एक अवनीस ।
लियो बिरद "सीसौदिया"[१] दियो ईस को सीस ॥५॥
ता कुल मैं नृपबृंद सब उपजे बखत बुलंद ।
भूमिपाल तिन मैं भयो बड़ो "माल मकरंद"[२] ॥६॥
सदा दान किरवान मैं जाके आनन अंभु[३] ।
साहि निजाम[४] सखा भयो दुग्ग देवगिरि खंभु ॥७॥
ताते सरजा[५] बिरद भी सोभित सिंह प्रमान ।

---

१ "सीसोदिया" क्षत्रिय सभी क्षत्रियों के सिरमौर हैं। इसी वंश के क्षत्रिय उदयपुर एवं नैपाल में राज्य करते हैं। इनका हाल "टाड" कृत "राजस्थान" में देखने योग्य है। इनके पूर्व पुरुष "सीसौद" निवासी थे, जिससे इनकी यह अल्ल पड़ी।

२ किसी किसी प्रति में इनका नाम "मालमकरंद" लिखा है; पर शुद्ध यही माल मकरंद है, क्योंकि इतिहास में इनका नाम "मालो जी" दिया है। इनका जन्मकाल सन् १५५० था।

३ पानी। दान और कृपाण (बहादुरी) में जिसके मुँह पर सदा पानी (आब) रहता है।

४ निजामशाही बादशाह। मालो जी निजामशाही बादशाह के सहायक और मित्र थे।

५ मालोजी का "सर जाह" खिताब था, इसी से "सरजा" निकला। प्रयोजन लब्धप्रतिष्ठ से है। भूषण इसे सिंह के अर्थ में भी लिखते हैं; क्योंकि वह भी बन का राजा है।

रन-भू-सिला सु भौंसिला[1] आयुषमान खुमान[2] ॥८॥

भूषन भनि ताके भयो भुव-भूषन नृप साहि[3]।

रातौ दिन संकित रहैं साहि सबै जग माहि ॥९॥

कवित्त—मनहरण

एते हाथी दीन्हें मालमकरंद जू के नंद जेते गनि सकति

---

१ शिवाजी के घराने की "भौंसिला" उपाधि थी।

२ भूषणजी शिवराज को "सरजा, भौंसिला, खुमान" इत्यादि नामों से पुकारते हैं; सो इन उपाधियों की यहाँ पर उन्होंने व्युत्पत्ति सी की है।

३ शाहजी, महाराज शिवराज के पिता। भूषण जी महाराज शिवाजी को उदयपुर के सुप्रसिद्ध "सीसौदिया" कुलोद्भव बतलाते हैं और यह ठीक भी जान पड़ता है। यद्यपि सुनते हैं कि आज कल कुछ अदूरदर्शी लोग भ्रमवश शिवाजी के वंशज महाराज कोल्हापुर को क्षत्रिय तक मानने में आनाकानी करते हैं, जिसका पूरा बखेड़ा हो उठ खड़ा हुआ है; पर टाड-कृत "राजस्थान" में इनके वंश का "सीसौदिया" घराने से यों संबंध लिखा है—

"अजयसी (महाराजा उदयपुर सन् १३०१ ईसवी), सुजन जी, दलीप जी, सिव जी, भोरा जी, देवराज, उग्रसेन, माहोल जी, खैलो जी, जनको जी, सत्तो जी, संभा जी, शिवा जी।" (इंडियन पबलिकेशन सोसायटी, कलकत्ता द्वारा सन् १८९९ ई० में बंगाल प्रेस में मुद्रित प्रति की जिल्द १ पृष्ठ २८२ देखिए) इसमें शिवाजी के पिता का नाम संभा जी और मालो जी का माहोल जी लिखा है; कदाचित् उन महानुभावों के ये उपनाम हों। शाह जी सन् १५९४ में उत्पन्न होकर जनवरी १६६४ में स्वर्गवासी हुए।

विरंच हू की न तिया[1] । भूषन भनत जाकी साहिवी सभा के देखे लागैं सब और छितिपाल छिति मैं छिया[2] ।। साहस अपार हिंदुवान को अधार धीर, सकल सिसौदिया सपूत कुल को दिया । जाहिर जहान भयो साहिजू खुमान वीर साहिन को सरन सिपाहिन को तकिया ।। १० ।।

दोहा

दसरथ जू के राम भे वसुदेव के गोपाल ।
सोई प्रगटे साहि के श्री सिवराज भुवाल ।। ११ ।।
उदित होत सिवराज के मुदित भये द्विजदेव ।
कलियुग हट्यो मिट्यो सकल म्लेच्छन को अहमेव ।। १२ ।।

कवित्त—मनहरण

जा दिन जनम लीन्हो भू पर भुसिल[3] भूप ताही दिन[4] जीत्यो अरि उर के उछाह को । छठी छत्रपतिन को जीत्यो भाग अनायास जीत्यो नामकरन मैं करन प्रवाह को ।। भूषन भनत बाल लीला गढ़कोट जीत्यो साहि के सिवाजी करि चहूँ चक्क

---

१ विरंचि हू की तिया न=सरस्वती भी नहीं ।

२ अत्यन्त मैले, तिरस्करणीय ।

३ अर्थात् भौंसिला ।

४ महाराज शिवाजी का जन्म काल १० अप्रैल सन् १६२७ और मृत्युकाल ५ अप्रैल सन् १६८० था ।

चाह को। बीजापुर गोलकुंडा जीत्यो लरिकाइ ही में ज्वानी आए जीत्यो दिलीपति पातसाह को ॥

दोहा

दच्छिन के सब दुग्ग जिति दुग्ग सहार विलास।
सिव सेवक सिव गढ़पती कियो रायगढ़ बास[1] ॥ १४ ॥

अथ रायगढ़ वर्णन

मालती सवैया[2]

जा पर साहि तनै सिवराज सुरेस कि ऐसि सभा सुभ साजै। यों कवि भूषन जंपत[3] है लखि संपति को अलकापति लाजै ॥ जा मधि तीनिहु लोक कि दीपति ऐसो बड़ो गढ़राय,

---

१ राजगढ़ को शिवाजी ने म्होरवुध पहाड़ी पर १६४७ ई० में बसाया था और १६६५ में उन्हें वह जयसिंह को दे देना पड़ा। शिवाजी के पश्चात् मरहठों ने इसे १६९२ ई० में फिर से जीत लिया। सन् १६६२ ई० में शिवाजी ने राजगढ़ छोड़ कर रायगढ़ को अपना वासस्थान बनाया। यह कदाचित् रायगढ़ ही का वर्णन है—भूमिका देखिए। यहीं शिवाजी अंत तक रहे।

२ इसमें सात भगण और दो अंतिम अक्षर गुरु होते हैं। इसका रूप यह है ("मुनिभगग" ऽ॥ऽ॥ऽ॥ऽ॥ऽ॥ऽ॥ऽ॥ऽऽ)। भगण में एक गुरु और दो लघु अक्षर होते हैं। कड़ाई से देखने पर बहुत कम सवैया शुद्ध निकलेंगी; परन्तु छंद बिगड़ने में गुरु अक्षर को भी मृदु उचारण से लघु करके पढ़ लिया जाता है।

३ जपता है, बार बार कहता है।

बिराजै। वारि पताल सी माची मही अमरावति की छवि ऊपर छाजै ॥ १५ ॥

हरिगीतिका छंद[1]

मनिमय महल सिवराज के इमि रायगढ़[2] मैं राजहीं।
लखि जच्छ किन्नर असुर सुर गंधर्व हौंसनि साजहीं ॥
उत्तंग मरकत[3] मंदिरन मधि बहु मृदंग जु बाजहीं।
घन-समै[4] मानहु घुमरि करि घन घनपटल[5] गलगार्जहीं[6] ॥१६॥

मुकतान की झालरिन मिलि मनि-माल छज्जा छाजहीं।
संध्या समै मानहुँ नखत गन लाल अंबर राजहीं ॥
जहँ तहाँ ऊरध उठे हीरा किरन घन समुदाय हैं।
मानो गगन तंबू तन्यो ताके सपेत तनाय हैं ॥१७॥

---

१ इसका लक्षण यों है "जहँ पाँच चौकल बहुरि षट कल अंत यक गुरु आनिए। बर बिरति नव मुनि भानु पर रचि कला सो रवि ठानिए।" इसमें २८ कला होती हैं और अंत का अक्षर गुरु होता है। सोलहवीं कला पर पहली यति और जैसा कि सभी छंदों में होता है, अंत में दूसरी यति पड़ती है।

२ छं० नं० १४ देखिए। ३ नीलम।

४ समय पर अर्थात् ठीक समय अथवा वर्षा काल में।

५ तह, पर्त।

६ गल=गले से अर्थात् जोर से। ग्राम्य भाषा में "गलगंजौ" का अर्थ प्रसन्नतापूर्वक बोलने का लिया जाता है; सो भी यहाँ पर ठीक उतरता है।

भूपन भनत जहँ परसि के मुनि पुहुपरागन[1] की प्रभा।
प्रभु पीत पट की प्रगट पावत सिंधु मेघन की सभा॥
मुख नागरिन के राजहीं कहुँ फटिक महलन संग में।
विकसंत कोमल कमल मानहु अमल गंग तरंग में॥१८॥
आनंद सों सुंदरिन के कहुँ बदन इंदु उदोत हैं।
नभ सरित के प्रफुलित कुमुद मुकुलित कमल कुल होत हैं॥
कहुँ बावरी सर कूप राजत बद्धमनिसोपान हैं।
जहँ हंस सारस चक्रवाक विहार करत सनान हैं॥१९॥
कितहूँ बिसाल प्रवाल जालन जटित अंगनि भूमि हैं।
जहँ ललित बागनि द्रुमलतनि मिलि रहे झिलँमिलि झूमि है॥
चंपा चमेली चारु चंदन चारिहू दिसि देखिए।
लवली[3] लवंग यलानि[4] केरे लाखहों लगि लेखिए॥ २० ॥
कहुँ केतकी कदली करौंदा कुंद अरु करवीर[5] हैं।
कहुँ दाख[6] दाड़िम[7] सेव कटहल तूत अरु जंभीर हैं॥
कितहूँ कदंब कदंब[8] कहुँ हिंताल[9] ताल तमाल[10] हैं।

---

१ पुष्पराग, पुखराग अथवा पुखराज। २ झिलमिला (हिलता हुआ) प्रकाश।
३ कोमल वल्कला, नेवाड़ी, एक फूल वृक्ष।
४ एला; इलायची। ५ कनेर। ६ मुनक्का। ७ अनार।
८ समूह।
९ पूगरोट वृक्ष।
१० आबनूस।

पीयूष तें मीठे फले कितहूँ रसाल[1] रसाले[2] हैं ।। २१ ।।
पुन्नाग[3] कहुँ कहुँ नागकेसरि कतहुँ बकुल असोक हैं ।
कहुँ ललित अगर गुलाब पाटल[4] पटल[5] बेला थोक हैं ।।
कितहूँ नेवारी माधवी[6] सिंगारहार[7] कहूँ लसैं ।
जहँ भाँति भाँतिन रंग रंग विहंग आनँद सों रसैं ।।२२।।

पट्पद

लसत विहंगम बहु लवनित[8] बहु भाँति बाग महँ ।
कोकिल कीर कपोत केलि कल कल करंत तहँ ।।
मंजुल महरि मयूर चटुल[9] चातक चकोर गन ।
पियत मधुर मकरंद[10] करत झंकार भृंग घन ।।
भूषन सुवास फल फूल युत छहुँ ऋतु बसत बसंत जहँ ।
इमि रायदुग्ग राजत रुचिर सुखदायक सिवराज कहँ ।।२३।।

---

१ आम का पेड़ ।
२ रसीला ।
३ देववल्लभ; एक बड़ा पुष्पवृक्ष ।
४ गोला विरंग, एक लाल और सफ़ेद फूल ।
५ पर्दा ।
६ चंद्रवल्ली, एक लता ।
७ हरसिंगार, एक पुष्पवृक्ष ।
८ सलोने ।
९ चंचल ।
१० पुष्परस । पराग ।

दोहा

तहँ नृप रजधानी[1] करी जीति सकल तुरकान।
शिव सरजा रुचि दान में कीन्हों सुजस जहान ॥२४॥

अथ कविवंश वर्णन

देसन देसन तें गुनी आवत जाचन ताहि।
तिनमें आयो एक कवि भूषन कहियतु जाहि ॥ २५ ॥
द्विज[2] कनौज कुल कस्यपी रतनाकर सुत धीर।
बसत तिविक्रमपुर सदा तरनितनूजा तीर ॥ २६ ॥
बीर बीरवर[3] से जहाँ उपजे कवि अरु भूप।
देव बिहारीश्वर जहाँ विश्वेश्वर तद्रूप ॥ २७ ॥
कुल सुलंक चितकूटपति साहस सील समुद्र।
कवि भूषन पदवी दई हृदयराम सुत रुद्र[4] ॥ २८ ॥

---

१ सन् १६६२ से मरण पर्यन्त शिवाजी की राजधानी रायगढ़ में रही।

२ इन दोहों से स्पष्ट है कि भूषण जी कान्यकुब्ज ब्राह्मण, कश्यपगोत्री (त्रिपाठी) श्री रत्नाकरजी के पुत्र, त्रिविक्रमपुर में यमुना जी के किनारे रहते थे जहाँ बीरबलजी हो गए थे और विहारीश्वर ग्रामदेव थे। इसकी विशेष व्याख्या भूमिका में देखिए।

३ राजा बीरबल मौज़ा अकबरपुर बीरबल ज़िला कानपुर में उत्पन्न हुए थे। यह अकबरपुर तहसील अकबरपुर नहीं वरन् एक और गाँव यमुनाजी के किनारे है। भूमिका देखिए।

४ "हृदयराम" सुत "रुद्र" के विषय में स्फु० का० छं० नं० २ का नोट देखिए। गहोरा चित्रकूट से १२ मील पर है। हृदयराम गहोरा के शासक

सिव चरित्र लखि यों भयो कवि भूषन के चित्त।
भाँति भाँति भूषननि[1] सों भूषित करौं कवित्त ॥ २९ ॥
सुकविन हूं की कछु कृपा समुझि कविन को पंथ।
भूषन भूषनमय[1] करत "शिवभूषन सुभ ग्रंथ ॥ ३० ॥
भूषन सब भूषननि मैं उपमहि उत्तम चाहि।
याते उपमहि आदि दै बरनत सकल निबाहि ॥ ३१ ॥

अथ ग्रंथ प्रारंभ

उपमा

लक्षण—दोहा

जहाँ दुहुन की देखिए सोभा बनति समान।
उपमा भूषन ताहि को भूषन कहत सुजान ॥ ३२ ॥
जा को बरना कीजिए सो उपमेय प्रमान।
जाकी सरवरि कीजिए ताहि कहत उपमान[2] ॥ ३३ ॥

थे। इनके राज्य में १०४३½ ग्राम थे जिनकी वार्षिक आय बीस लाख रुपए थी। इनका राज्य सन् १६७१ के लगभग बुन्देला महाराज छत्रसाल ने छीन लिया था। रुद्र भी राजा हुए या नहीं, सो अज्ञात है। भूमिका देखिए।

१ अलंकारों।

२ यदि कहें "मुख चंद्र सार मनोहर है" तो "मुख" उपमेय होगा और "चंद्र" उपमान। उपमा में वाचक और धर्म (गुणादि) भी होते हैं सो यहाँ "सा" वाचक है और "मनोहर" धर्म।

उदाहरण—मनहरण दंडक

मिलतहि कुरुख[1] चकत्ता[2] को निरखि कीन्हों सरजा सुरेस ज्यों दुचित ब्रजराज को। भूषन कुमिस[3] गैरमिसिल[4] खरे किए को किये म्लेच्छ मुरछित करि कै गजराज को॥ अरे ते गुसुलखाने बीच ऐसे उमराय लै चले मनाय महराज सिवराज को। दावदार निरखि रिसानो दीह दलराय जैसे गड़दार[5] अड़दार[6] गजराज को॥ ३४॥

अन्यच्च—मालती सवैया

सासता[7] खाँ दुरजोधन सो औ दुसासन सो

---

१ कुरुख कीन्हों=मुँह बिगाड़ दिया, क्रोधांध कर दिया।

२ चगताई के वंशज अर्थात् औरंगजेब को।

३ बुरे बहाने से।

४ अनुचित साथियों में (पंज हज़ारियों की पंक्ति में)।

५ वे सोंटेमार लोग जो मस्त हाथी को पुचकार कर आगे बढ़ाते हैं।

६ ऐंड़दार, मस्त। इन दो पदों का आशय यह है कि शिवाजी को गुसलखाने में अड़ते (अर्थात् ठिठकते) देख (औरंगजेब पर जोखिम आ जाने के भय से) दरबार के अमीर उमरा लोग उसे (अर्थात् शिवाजी को) यों मना ले चले जैसे किसी दावदार मस्त हाथी को मस्ताया हुआ देख सोंटेमार लोग पुचकार कर आगे ले चलते हैं। गुसलखाने के विषय पर भूमिका देखिए। यह घटना सन् १६६६ ईसवी की है।

७ शाइस्ताखाँ दिल्ली का एक बड़ा सरदार था। चाकन को जीतता हुआ वह पूना को विजय करके वहीं ठहरा। ५ अपरैल की रात को शिवाजी केवल २००

जसवंत निहास्यो । द्रोन सो भाऊ करन्न करन्न सो और

योद्धाओं के साथ उसके महल में तरकीब से घुस गए और गड़बड़ में इन्होंने कई यवनों तथा शाइस्ताखाँ के लड़के को मार डाला। शाइस्ताखाँ जान बचाने को खिड़की से बाहर कूदने लगा। कि शिवाजी ने दौड़ कर उसे एक तलवार मारी जिससे उसका सिर तो बच गया, पर एक हाथ की कुछ उँगलियाँ कट गईं, किन्तु वह भाग गया। लौटते हुए हजारों दुश्मनों के बीच से शिवाजी केवल उन्हीं २०० आदमियों के साथ मशाल जलाए सिंहगढ़ चले गए। यह सन् १६६३ ईसवी का हाल है। शाइस्ताखाँ औरंगजेब का मामा था और पीछे बंगाल का गवर्नर हुआ था।

१ जसवंतसिंह मारवाड़ के महाराज थे। ये शाइस्ताखाँ के साथ सन् १६६३ ई० में दक्षिण गये थे। कहते हैं कि ये गुप्त रीत्या शिवाजी से मिल गए थे और इन्हीं की सलाह से शाइस्ताखाँ की दुर्गति हुई। पहले तो औरंगजेब ने शाइस्ताखाँ व जसवंत सिंह दोनों को वापस बुला लिया था, परंतु पीछे से शाइस्ताखाँ को बंगाल का गवर्नर करके भेज दिया और जसवंत को शाहजादा मुअज़्ज़म की मातहती में फिर दक्खिन भेजा। जसवंतसिंह ने सन् १६६३ ई० में सिंहगढ़ घेरने का नाम मात्र प्रयत्न किया था, परंतु फिर उसे छोड़ दिया। (देखो शिवावावनी छं० २८ "जाहिर है जग में जसवंत लियो गढ़ सिंह मैं गीदर बानो")। इन्हें सन् १६६५ में औरंगजेब ने वापस बुला लिया। १६८० में शरीरान्त काबुल की मुहीम में हुआ।

२ बूँदी के छत्रसाल (बुंदेलखंड के नामी छत्रसाल नहीं) के पुत्र भाऊसिंह। इतिहास में इनका किसी प्रसिद्ध युद्ध में शिवाजी से लड़ना नहीं पाया जाता, तो भी दक्षिण में ये औरंगजेब की ओर अवश्य गए थे और अप्रसिद्ध युद्धों में शिवाजी से यह जरूर लड़े थे। ये बूँदी की गद्दी पर सन् १६५८ में बैठे थे और सन् १६८२ में औरंगाबाद में इनका शरीरान्त हुआ।

३ बीकानेर के महाराज रायसिंह के पुत्र महाराज करन सन् १६३२ ई० में गद्दी पर बैठे और लगभग १६७४ तक राज्य करते रहे। इनका दो हजारी मनसब था।

सवै दल सो दल भाखो ॥ ताहि विगोय सिवा सरजा भनि भूषन औनि छता यों पछाखो। पारथ कै पुरुषारथ भारथ जैसे जगाय जयद्रथ[1] माखो ॥ ३५ ॥

लुप्तोपमा

लक्षण–दोहा

उपमा वाचक पद, धरम, उपमेयो, उपमान।
जामैं सो पूर्णोपमा लुप्त[2] घटत लौं मान ॥ ३६ ॥

उदाहरण–(धर्मलुप्ता)–मालती सवैया

पावक तुल्य असीतन को भयो, मीतन को भयो धाम सुधा को[3]। आनँद भो गहिरो समुदै कुमुदावलि तारन को बहुधा को ॥ भूतल माहिं बली सिवराज भो भूषन भाखत शत्रु सुधा[4] को। बंदन[5] तेज त्यों चंदन[6] कीरति साजे सिंगार वधू बसुधा को ॥ ३७ ॥

अन्यच्च मनहरण

आए दरबार बिललाने छरीदार देखि जापता करनहारे

---

१ जयद्रथ दुर्योधन का बहनोई था। उसे अर्जुन ने शकटव्यूह के अंदर घुस कर मारा था।

२ बहुतों ने आठ लुप्तोपमायें मानी हैं और किसी किसी ने १५ तक।

३ चंद्र पर उक्ति।

४ फुजूलियात, वाहियात बातें, झूठ। ५ ईंगुर।

६ चाँदनी अथवा शीतल।

नेक हू न मनके[1]। भूपन भनत भौंसिला के आय आगे ठाढ़े बाजे भए उमराय तुजुक[2] करन के ॥ साहि रह्यो जकि, सिव साहि रह्यो तकि, और चाहि रह्यो चकि, वने ब्योंत अनबन के। ग्रीपम के भानु सो खुमान को प्रताप देखि तारे सम तारे गए मूँदि तुरकन के ॥ ३८ ॥

अनन्वय

लक्षण—दोहा

जहाँ करत उपमेय को उपमेयै उपमान ।
तहाँ अनन्वै कहत हैं भूपन सकल सुजान ॥ ३९ ॥

उदाहरण—मालती सवैया

साहि तनै सरजा तव द्वार प्रतिच्छन दान कि दुंदुभि बाजै। भूपन भिच्छुक भीरन को अति भोजहु ते बढ़ि मौजनि साजै। राजन को गन, राजन ! को गनै ? साहिन मैं न इती छवि छाजै। आजु गरीवनेवाज मही पर तो सो तुही सिवराज बिराजै ॥ ४० ॥

प्रथम प्रतीप

लक्षण—दोहा

जहँ प्रसिद्ध उपमान को करि वरनत उपमेय ।
तहँ प्रतीप उपमा कहत भूपन कविता प्रेय ॥ ४१ ॥

---

1 चाप न की, छिके तक नहीं। 2 अदब।

उदाहरण-मालती सवैया

छाय रही जितही तितही अतिही छवि छीरधि रंग करारी ।
भूषन सुद्ध सुधान के सौधनि[1] सोधति सी धरि ओप उज्यारी ॥
यों तम तोमहि चाबिकै चंद चहूँ दिसि चाँदनि चारु पसारी ।
ज्यों अफजल्लहि[2] मारि मही पर कीरति श्री सिवराज बगारी ॥४२॥

द्वितीय प्रतीप

लक्षण-दोहा

करत अनादर वर्न्य[3] को, पाय और उपमेय ।
ताहू कहत प्रतीप जे भूषन कविता प्रेय ॥४३॥

उदाहरण-दोहा

शिव ! प्रताप तव तरनि सम, अरि पानिप हर मूल ।
गरब करत केहि हेत है, बड़वानल तो तूल[4] ॥४४॥

तृतीय प्रतीप

लक्षण-दोहा

आदर घटत अवर्न्य[5] को, जहाँ वर्न्य के जोर ।

---

1 महलों को ।

२ यह बीजापुरी सरदार था । विशेष हाल छंद नं० ६३ के नोट में देखिए। इस अवसर पर शिवाजी के साथ प्रधान लोगों में तानाजी मलूसरे, यशा जी कंक और जीव महालय थे । हाल सन् १६५९ ई० का है ।

३ उपमेय । ४ तुल्य । यहाँ एक ही गुण कहे जाने और उसकी भी निन्दा हो जाने से विरसता हो गई है । यदि कई गुण होते और अन्य उनमें से एक ही एक में सम या अधिक होते तो विरसता न आती ।

५ उपमान ।

तृतिय प्रतीप बखानहीं तहँ कविकुलसिरमोर ॥ ४५ ॥

उदाहरण-दोहा

गरब करत कत चाँदनी हीरक छीर समान ।
फैली इती समाज गत कीरति सिवा खुमान ॥ ४६ ॥

चतुर्थ प्रतीप

लक्षण-दोहा

पाय बरन उपमेय को, जहाँ न आदर और ।
कहत चतुर्थ प्रतीप हैं, भूपन कवि सिरमौर ॥ ४७ ॥

उदाहरण-कवित्त मनहरण

चंदन मैं नाग, मद भरयो इंद्र नाग, विष भरो सेसनाग कहै उपमा अवस को ? भोर ठहरात न कपूर बहरात, मेघ सरद उड़ात बात लागे दिसि दस को ॥ शंभु नील ग्रीव, भौंर पुंडरीक ही बसत, सरजा सिवा जी सन भूषन सरस को ? छीरधि मैं पंक, कलानिधि मैं कलंक, याते रूप एक टंक ए लहैं न तव जस को ॥ ४८ ॥

पंचम प्रतीप

लक्षण-दोहा

हीन होय उपमेय सों नष्ट होत उपमान ।
पंचम कहत प्रतीप तेहि भूपन सुकवि सुजान ॥ ४९ ॥

उदाहरण-कवित्त मनहरण

तो सम हो सेस सो तो वसत पताल लोक ऐरावत गज सो तो इंद्र लोक सुनिये। दुरे हंस मानसर ताहि मैं कैलास धर सुधा सुरवर सोऊ छोड़ि गयो दुनिये॥ सूर दानी सिरताज महाराज सिवराज रावरे सुजस सम आजु काहि गुनियें ? भूपन जहाँ लौं गनौं तहाँ लौं भटकि हारयों लखिये कछू न केती बातें चित चुनियै ॥ ५० ॥

अपरंच-मालती सवैया

कुंद कहा पय वृंद कहा अरु चंद कहा सरजा जस आगे ?। भूपन भानु कृसानु कहा[1] खुमान प्रताप महीतल पागे ?॥ राम कहा द्विजराम कहा वलराम कहा रन मैं अनुरागे ?। बाज कहा मृगराज कहा अति साहस मैं सिवराज के आगे ?॥५१॥

यों सिवराज को राज अडोल कियो सिव जो[2] कहा ध्रुव[3] धू[4] है ?। कामना दानि खुमान लखे न कछू सुर-रूख न देव-गाऊ है ? भूषन भूपन मैं कुल भूपन भौंसिला भूप धरे सव भू है। मेरु कछू न कछू दिगदंति न कुंडलि[5] कोल कछू न कछू है॥ ५२ ॥

---

१ कहा अब।

२ जो अब।

३ निश्चय करके।

४ ध्रुव नक्षत्र।

५ सर्प; यहाँ शेष जी।

उपमेयोपमा

लक्षण–दोहा

जहाँ परस्पर होत हैं उपमेयो उपमान।
भूषन उपमेयोपमा ताहि बखानत जान ॥ ५३ ॥

उदाहरण–कवित्त मनहरण

तेरो तेज, सरजा समत्थ ! दिनकर सो है, दिनकर सोहै तेरे तेज के निकर सो। भौंसिला भुवाल ! तेरो जस हिमकर सोहै हिमकर सोहै तेरे जस के अकर[1] सो ॥ भूषन भनत तेरो हियो रतनाकर सो रतनाकरौ है तेरे हिय सुखकर सो। साहि के सपूत सिव साहि दानि ! तेरो कर सुरतरु सोहै, सुरतरु तेरे कर सो ॥५४॥

मालोपमा

लक्षण–दोहा

जहाँ एक उपमेय के होत बहुत उपमान।
ताहि कहत मालोपमा भूषन सुकवि सुजान ॥ ५५ ॥

उदाहरण–कवित्त मनहरण

इन्द्र जिमि जंभ पर बाड़व सुअंभ पर रावन सदंभ पर रघुकुल राज है। पौन बारिवाह[2] पर संभु रतिनाह पर ज्यों सहस-

---

1 आकर, कान (खानि)।

२ बादल।

वाह पर राम द्विजराज है ॥ दावा द्रुम दंड पर चीता मृगझुण्ड पर भूपन वितुंड पर जैसे मृगराज है। तेज तम अंस पर कान्ह जिमि कंस पर त्यों मलिच्छ वंस पर सेर सिवराज है ॥ ५६ ॥

ललितोपमा

लक्षण–दोहा

जहँ समता को दुहुन की लीलादिक पद होत।
ताहि कहत ललितोपमा सकल कविन के गोत ॥ ५७ ॥
विहसत, निदरत, हँसत जहँ छवि अनुसरत वखानि।
सत्रु मित्र इमि औरऊ लीलादिक पद जानि ॥ ५८ ॥

उदाहरण–कवित्त मनहरन

साहि तनै सरजा सिवा की सभा जामधि है मेरुवारी सुर की सभा को निदरति है। भूपन भनत जाके एक एक सिखर ते केते धौं नदी नद की रेल[1] उतरति है। जोन्ह को हँसति जोति हीरा मनि मंदिरन कंदरन में छवि कुहू[2] कि उछरति है। ऐसो ऊँचो दुरग महावली[3] को जामैं नखतावली सों वहस दिपावली धरति है ॥ ५९ ॥

---

१ रेला, वड़ा वहाव।

२ अमावस्या की (अर्थात् कंदरों से अमावस्या की छवि उछल जाती है या आगे निकलती है, अर्थात् उनका अँधेरा दूर हो जाता है)।

३ वड़ा वलवान अर्थात् शिवराज।

रूपक

लक्षण–दोहा

जहाँ दुहुन को भेद नहिं बरनत सुकवि सुजान।
रूपक भूपन ताहि को भूपन करत बखानं[1] ॥ ६० ॥

उदाहरण–छप्पय (समाभेद रूपक)

कलिजुग जलधि अपार उद्धसधरम्म उम्मिं[2] मय। लच्छनि लच्छ मलिच्छ कच्छ अरु मच्छ मगर चय ॥ नृपति नदीनद वृंद होत जाको मिलि नीरस। भनि भूपन सब भुम्नि घेरि किन्निय सुअप्प बस ॥ हिंदुवान पुन्य गाहक बनिक तासु निवाहक साहि सुवं[3]। वर बादवान किरवान धरि जंस जहाज सिवराज तुव ॥ ६१ ॥

साहिन मन समरत्थ जासु नवरंग[4] साहि सिरु। हृदय जासु अब्बास[5] साहि बहुबल बिलास थिरु ॥ एदिल[6] साहि

---

१ भूपणजी ने रूपक का वही लक्षण दिया है जो अन्य कवियों ने "अभेद रूपक" का। जहाँ उपमान से अभेदता या तद्रूपता देने के लिये उपमेय का रूप रचा जावे, वहाँ रूपक होता है।

२ ऊर्मि, लहर। ३ सुत।

४ औरंगजेब, दिल्ली का सुप्रसिद्ध बादशाह।

५ यह उस समय फ़ारस का बादशाह था। इसीसे इसको "हृदय" कहा गया है। इसका शाहजहाँ और औरंगजेब से मेल और लिखा पढ़ी थी।

६ आदिलशाह बीजापुर के बादशाहों की पदवी थी। इनके यहाँ शिवाजी के पिता साहजी भौंसिला नौकर थे; पर शिवाजी ने युद्ध ठान दिया और इन्हें खूब ही छकाया।

कुतुब्बे[1] जासु जुग भुज भूषन भनि । पाय म्लेच्छ उमराय काय तुरकानि आन गनि ॥ यह रूप अवनि अवतार धरि जेहि जालिम जग दंडियव । सरजा सिव साहसखग्ग धरि कलिजुग सोइ खल खंडियव ॥ ६२ ॥

अपरंच—कवित्त मनहरन

सिंह[2] थरि जाने बिन जावली जँगल भठी हठी गज एदिल पठाय करि भटक्यो । भूषन भनत देखि भभरि भगाने सब हिम्मत हिये मैं धरि काहुवै न हटक्यौ ॥ साहि के सिवाजी गाजी सरजा समत्थ महा मदगल अफजलै[3] पंजा बल पटक्यो ।

---

१ कुतुबशाह गोलकुंडा के "बादशाह" की पदवी थी । दक्षिण में पाँच खुदमुख्तार "बादशाहियाँ" थीं; अर्थात् बीदर, अहमदनगर, एलिजपुर, बीजापुर और गोलकुंडा । प्रथम तीन को मुगलों ने पहले ही जीत लिया और अंतिम दो को १६८८ ई० में छीन लिया । इनको शिवाजी ने खूब ही सताया था ।

२ जावली देश के जंगल को सिंह के रहनेवाली भट्ठी न जान कर हठी आदिल-शाह हाथी रूपी अफ़जलखाँ को भेज कर चूक गया । थरि=सिंह की भट्ठी ।

३ अफ़ज़लखाँ एक बीजापुरी सरदार था और आदिल शाह की ओर से शिवाजी से लड़ने गया था । युद्ध के पहले ही अफ़ज़ल खाँ ने शिवाजी के पिता को अपना मित्र बतला कर उनसे कहला भेजा कि "तुम हमारे मित्र-पुत्र अर्थात् भतीजे हो; इससे हम से अकेले आकर मिलो । फिर चाहे लड़ना चाहे साथ करना" । शिवाजी यह विचार कर कि कदाचित् अफ़ज़ल कोई छल करे, सादे कपड़ों के नीचे

ता बिगिर ह्वै करि निकाम निज धाम कहँ आकुत[2] महाउत सुआँकुस लै सटक्यौ ।। ६३ ।।

रूपक के दो अन्य भेद (न्यूनाधिक)

लक्षण—दोहा

घटि बढ़ि जहँ बरनन करै करिकै दुहुन अभेद ।
भूषन कवि औरो कहत द्वै रूपक के भेद ।। ६४ ।।

उदाहरण—कवित्त मनहरण (न्यूनाभेद रूपक)

साहि तनै सिवराज भूषन सुजस तव बिगिर कलंक चंद उर आनियतु है । पंचानन एक ही बदन गनि तोहि गजानन गज बदन बिना बखानियतु है ।। एक सीस ही सहससीस कला करिबे को दुहूँ दृग सों सहस दृग मानियतु है । दुहूँ कर सों सहसकर मानियतु तोहि दुहूँ बाहु सों सहसबाहु जानियतु है ।। ६५) ।।

जिरहबख़्तर पहिन कर और व्याघ्रनख छिपा कर उससे मिलने गए । अफ़ज़ल ने भेंटने के बहाने से शिवाजी को बग़ल में जोर से दबा कर कटार से मारना चाहा, पर शिवाजी बच गए । उन्होंने व्याघ्रनख से अफ़ज़ल की पसली नोच ली (छंद नं० २५२ देखिए) और तलवार से उसका काम तमाम किया । उन्होंने पहले ही से अपनी सेना लगा रक्खी थी, सो एक दम वह अफ़ज़ल की फ़ौज पर टूट पड़ी और उसे तितर बितर कर दिया । यह घटना सन् १६५९ ईस्वी की है ।

१ बग़ैर, बिना ।

२ याक़ूत ख़ाँ इतिहास में कई थे । एक याक़ूत ख़ाँ शाहजहाँ का सरदार था । यहाँ बीजापुरी सरदार उस सिद्दी क़ासिम याक़ूत ख़ाँ से प्रयोजन है जो सन् १६७१ में शिवाजी की सेना से दंडराजपुर में लड़ा था ।

(अधिकाभेद रूपक)

जेते हैं पहार भुव माहिं पारावार तिन सुनि कै अपार कृपा गहे सुख फैल हैं। भूषन भनत साहि तनै सरजा के पास आइबे को चढ़ी उर हौंसनि की ऐल[1] हैं॥ किरवान बज्र सों बिपच्छ करिबे के डर आनि कै कितेक आए सरन की गैल हैं। मघवा[2] मही मैं तेजवान सिवराज बीर कोट करि सकल सपच्छ किए सैल हैं॥ ६६ ॥*

परिणाम

लक्षण—दोहा

जहँ अभेद करि दुहुन सों करत और स्वै[3] काम।
भनि भूषन सब कहत हैं तासु नाम परिनाम॥ ६७ ॥

उदाहरण—मालती सवैया

भौंसिला भूप बली भुव को भरु भारी भुजंगम सों भुज लीनों। भूषन तीखन तेज तरन्नि सों बैरिन को कियो पानिप हीनो॥ दारिद दौं[4] करि वारिद सों दलि त्यों धरनीतल

---

१ ऐल = झुंड (ग्राम्य भाषा "अहिलो")।

२ इंद्र ने पहाड़ों के पंख वज्र से काट डाले थे, उसी पर उक्ति है।

* इसी भाँति सम, अधिक और न्यून तद्रूप रूपक भी होते हैं जो भूषण ने नहीं लिखा है।

३ करता।

४ दौरहा, सूखे जंगल में चारों तरफ से लगने वाली आग। (दरिद्र रूपी दौरहा को गज (दान) रूपी मेघ से नाश करके)।

सीतल कीनो। साहितनै कुल चंद सिवा जस-चंद सों चंद कियो छवि छीनो ॥ ६८ ॥

अन्यच्च—कवित्त मनहरण

वीर विजैपुर के उजीर निसिचर गोलकुंडावारे घूघू ते उड़ाए हैं जहान सों। मंद करी मुखरुचि चंद चकता की, कियो भूषन भूषित द्विज चक्र खानपान सों॥ तुरकान मलिन कुमुदिनी करी है हिंदुवान नलिनी खिलायो विविध विधान सों। चारु सिव नाम को प्रतापी सिव साहि सुव तापी सब भूमि यों कृपान भासमान सों ॥ ६९ ॥ *

उल्लेख

लक्षण—दोहा

कै बहुतै कै एक जहँ एक वस्तु को देखि।
बहु विधि करि उल्लेख हैं सो उल्लेख उलेखि ॥ ७० ॥

(बहुतों द्वारा उल्लेख) उदाहरण—मालती सवैया

एक कहैं कलपद्रुम है इमि पूरत है सब की चित चाहै।
एक कहैं अवतार मनोज को यों तन मैं अति सुंदरता है॥
भूषन एक कहैं महि इंदु यों राज विराजत बाढ्यो महा है।
एक कहैं नरसिंह है संगर एक कहैं नरसिंह सिवा है ॥७१॥

---

* परिणाम और रूपक में भेद दिखलाने में कुछ आचार्यों में मतभेद है। भूषण साहित्य दर्पण और सर्वस्वकार पर चले हैं। इनका मत है कि यदि उपमान की क्रिया हो तो परिणाम है और यदि उपमेय की हो तो रूपक। इतरों का विचार है कि उपमान की क्रिया होने से रूपक और उपमेय वाली से परिणाम है। यहाँ धर्म क्रिया रूप उपमान का है।

पुनरपि यथा—मनहरण दंडक

कवि कहैं करन,[1] करनजीत[2] कमनैत, अरिन के उर माहि कीन्ह्यो इमि छेद है। कहत धरेस सब धराधर सेस ऐसो और धराधरन को मेट्यो अहमेव है॥ भूषन भनत महाराज सिवराज तेरो राज काज देखि कोऊ पावत न भेव है। कहरी यदिल, मौज लहरी कुतुब कहैं, बहरी निजाम के जितैया कहैं देव है॥ ७२॥

(एक द्वारा उल्लेख)

पैज प्रतिपाल भूमिभार को हमाल[3] चहुँ चक्क को अमाल[4] भयो दंडक जहान को। साहिन को साल भयो ज्वाल को जवाल भयो हर को कृपाल भयो हार के विधान को॥ वीर रस ख्याल सिवराज भुवपाल तुव हाथ को विसाल भयो भूषन बखान को? तेरो करवाल भयो दच्छिन को ढाल, भयो हिंदु को दिवाल, भयो काल तुरकान को॥ ७३॥

स्मृति

लक्षण—दोहा

सम सोभा लखि आन की सुधि आवति जेहि ठौर।
स्मृति भूषन तेहि कहत हैं भूषन कवि सिरमौर॥ ७४॥

---

१ कर्ण (बड़ा दानी था)।

२ अर्जुन जिसने कर्ण जैसे महावीर को जीत लिया।

३ बोझ उठानेवाला, हामिल।

४ आमिल, हाकिम।

५ स्मृति में अप्रसंगी से प्रसंगी का स्मरण आता है।

उदाहरण—मनहरण दंडक

तुम सिवराज ब्रजराज अवतार आजु तुमही जगत काज पोषत भरत हौ। तुम्हैं छोड़ि याते काहि विनती सुनाऊँ मैं तुम्हारे गुन गाऊँ तुम ढीले क्यों परत हौ ?॥ भूषन भनत वहिकुल[1] मैं नयो गुनाह नाहक समुझि यह चित मैं धरत हौ। और बाँभनन देखि करत सुदामा सुधि मोहिं देखि काहे सुधि भृगु की करत हौ ? ॥ ७५ ॥

भ्रम +

लक्षण-दोहा

आन वस्तु को आन मैं होत जहाँ भ्रम आय।
तासों भ्रम सब कहत हैं, भूषन सुकवि बनाय॥ ७६ ॥

उदाहरण-मालती सवैया

पीय पहारन पास न जाहु यों तीय बहादुर सों कहैं सोपै।
कौन बचै है नवाब तुम्हैं भनि भूषन भौंसिला भूप के रोपै ?।

---

1 उस (ब्राह्मण अर्थात् भृगु जी के) कुल में। भूषण कहते हैं कि मुझपर ब्राह्मण कुल में उत्पन्न होने का नया गुनाह आप लगाते हैं और विष्णु के अवतार होने के कारण मुझ पर आप नाराज़ होते हैं, क्योंकि भृगु ने विष्णु को लात मारी थी।

+ भ्रान्तिमान में भ्रम मात्र है तथा उल्लेख में स्थापित गुण सच्चाई के कारण यथार्थता भी लिये हुये रहता है।

[1]बंदि सइस्तखँहू को कियो जसवंत से भाऊ करन्न[2] से दोपै। सिंह सिवा के सुवीरन सों गो अमीर न बाचि गुनीजन घोपै[3] ॥ ७७ ॥

संदेह +

लक्षण-दोहा

कै यह कै वह यों जहाँ होत आनि संदेह।
भूपन सो संदेह है या में नहिं संदेह ॥ ७८ ॥

उदाहरण-कवित्त मनहरण

आवत गुसुलखाने ऐसे कछु त्योर ठाने जाने अवरंग जू के प्रानन को लेवा है। रस खोटे[4] भए ते अगोट आगरे में सातों

---

१ इस छंद में भ्रमालंकार निकलता नहीं है, हाँ खोंचतान से कह सकते हैं कि शाइस्ता खाँ में बन्दी होने का भ्रम हो गया, यद्यपि वे बन्दी नहीं हुए थे वरन् केवल भगाये गये थे। भ्रान्तिमान में सादृश्य के कारण प्रस्तुत में अप्रस्तुत का धोखा होता है।

२ करणसिंह बीकानेर के महाराज थे। ये दो हजारी थे। इनका युद्ध शिवाजी से सन् १६५७ में अहमदनगर में हुआ था। ये कारतलब खाँ तथा खान दौरां नौशेरी खाँ के साथ सेनानायक थे।

३ घोषणा करता है।

+ सन्देह में समता के कारण उपमेय में उपमान का संशय कई प्रकार से किया जाता है किन्तु निश्चय किसी पर नहीं होता।

४ रस खोटा होना (औरंगजेब ने जिन वादों से शिवाजी को बुलाया था उनका पालन न होने से रस जाता रहा) और आगरे में लप्पाझप्पी कर शिवाजी ने औरंगजेब की सातों चौकियाँ लाँघ कर रेवा (नर्मदा नदी) पार आ उसी को अपने राज्य की सीमा बनाया।

चौकी डाँकि आनि घर कीन्हीं हद रेवा है॥ भूषन भनत वह चहूँ चक्र चाहि कियो पातसाहि चकता की छाती माहिं छेवा है। जान्यो न परत ऐसे काम है करत कोऊ गंधरब देवा है कि सिद्ध है कि सेवा है॥ ७९॥

शुद्ध अपन्हुति = शुद्धापन्हुति*

लक्षण-दोहा

आन बात आरोपिए साँची बात दुराय।
शुद्धापन्हुति कहत हैं भूषन सुकवि बनाय॥ ८०॥

उदाहरण—मनहरण दंडक

चमकती चपला न, फेरत फिरंगैं[1] भट इंद्र को न चाप रूप बैरष[2] समाज को। धाए धुरवा न, छाए धूरि के पटल, मेघ गाजिबो न बाजिबो है दुन्दुभि दराज को॥ भौंसिला के डरन डरानी रिपुरानी कहैं, पिया भजौ, देखि उदौ पावस के साज को। घन की घटा न, गज घटनि सनाह साजे भूषण भनत आयो सेन सिवराज को॥ ८१॥

---

* सभी प्रकार की अपन्हुति में आहार्य्यता रहती है। शुद्धापन्हुति में मुख्य उपमेय का निषेध होकर अतथ्य उपमान का स्थापन होता है।

१ शायद भाला या विलायती तलवार।

२ झंडी।

हेतु अपन्हुति = हेत्वपन्हुति

लक्षण—दोहा

जहाँ जुगुति सों आन को कहिए आन उपाय।
हेतु अपन्हुति कहत हैं ताकहँ कवि-समुदाय ॥८२॥

उदाहरण—दोहा

सिव सरजा के कर लसै सो न होय किरवान।
भुज भुजगेस भुजंगिनी भखति पौन अरि प्रान ॥८३॥

पुनरपि—कवित्त मनहरण

भाखत सकल सिव जी को करवाल पर भूषन कहत यह करि कै विचार को। लीन्हो अवतार करतार के कहे तें कालि म्लेच्छन हरन उद्धरन भुव भार को॥ चंडी ह्वै घुमंडि अरि चंड मुंड चाबि करि पीवत रुधिर कछु लावत न बार को। निज भरतार भूत भावन की भूख मेटि भूषित करत भूतनाथ भरतार को ॥ ८४ ॥

पर्य्यस्त अपन्हुति = पर्य्यस्तापन्हुति [२]

लक्षण—दोहा

वस्तु गोय ताको धरम आन वस्तु में रोपि।
पर्य्यस्तापन्हुति कहत कवि भूषन मति ओपि ॥ ८५ ॥

---

१ कारण कहकर। अन्य आचार्य्य इसमें कारण का कथन प्रकट रूप से करते हैं, किन्तु भूषन ने दोनों उदाहरणों में कारण को प्रकट न करके व्यंग्य मात्र रक्खा है।

२ इस अलंकार में सिवाय लक्षण में दी हुई बातों के यह भी आवश्यक है कि एक पद दोहरा कर आवे। कवि के उदाहरण में यह बात विद्यमान है; पर लक्षण से छूट रही है। इसमें किसी वस्तु का धर्म निषेधित हो कर अन्य वस्तु में वर्णित होता है और प्रायः कुछ पद दोहरा कर आते हैं।

उदाहरण—दोहा

काल करत कलिकाल मैं नहिँ तुरकन को काल।
काल करत तुरकान को सिव सरजा करवाल ॥८६॥

पुनरपि—कवित्त मनहरण

तेरे ही भुजान पर भूतल को भार कहिवे को सेसनाग दिगनाग हिमाचल है। तेरो अवतार जग पोसन भरनहार कछु करतार को न तामधि अमल है॥ साहिन मैं सरजा समत्थ सिवराज कवि भूषन कहत जीबो तेरोई सफल है। तेरो करवाल करै म्लेच्छन को काल बिनु काज होत काल बदनाम धरातल है॥ ८७॥

भ्रांत अपन्हुति = भ्रांतापन्हुति

लक्षण—दोहा

संक आन को होत ही जहँ भ्रम कीजै दूरि।
भ्रांतापन्हुति कहत हैं तहँ भूषन कवि भूरि॥८८॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

साहितनै सरजा के भय सों भगाने भूप मेरु मैं लुकाने ते लहत जाय वोत[1] हैं। भूषन तहाऊँ मरहटपति के प्रताप पावत न कल अति कौतुक उदोत हैं॥ "सिव आयो सिव आयो" संकर के आगमन सुनि कै परान ज्यों लगत अरि गोत[2] हैं।

---

१ ओक, घर।

२ गोत्र।

"सिव सरजा न यह सिव है महेस" करि योंहीं उपदेस जच्छ रच्छक से होत हैं ॥ ८९ ॥

पुनः—मालती सवैया

एक[1] समै सजि कै सब सैन सिकार को आलमगीर सिधाए। "आवत है सरजा सम्हरौ" एक ओर ते लोगन बोल जनाए॥ भूपन भो भ्रम औरँग के सिव भौंसिला भूप कि धाक धुकाए। धायकै "सिंह" कह्यो समुझाय करौलनि[2] आय अचेत उठाए॥ ९० ॥

छेक अपन्हुति = छेकापन्हुति = कहिमुकरी

लक्षण—दोहा

जहाँ और को संक करि, साँच छिपावत बात।
छेकापन्हुति कहत हैं भूपन कवि अवदात ॥९१॥

* उदाहरण—दोहा

तिमिर वंस हर अरुन कर आयो, सजनी भोर?
सिव सरजा, चुप रहि सखी, सूरज-कुल-सिरमोर ॥९२॥
दुरगहि वल पंजन प्रबल सरजा जिति रन मोहिं।
औरँग कहै देवान सों सपन सुनावत तोहिं ॥९३॥
सुनि सु उजीरन यों कह्यो "सरजा, सिव महराज?"
भूपन कहि चकता सकुचि "नहिं, सिकार मृगराज" ॥९४॥

---

१ भयानक रस। २ शिकार खेलानेवाले।

* इसमें वक्ता अपने ही कथन का सच्चा प्रयोजन छिपाकर असत्य का कथन करता है।

कैतव अपन्हुति = कैतवापन्हुति

लक्षण—दोहा

जहँ कैतव[1], छल, व्याज मिसि इन सों होत दुराव।
कैतवपन्हुति ताहि सों भूषन कहि सतिभाव ॥ ९५ ॥

उदाहरण—कवित्त दंडक (मनहरण)

साहिन[2] के सिच्छक सिपाहिन के पातसाह संगर में सिंह कैसे जिनके सुभाव हैं। भूषन भनत सिव सरजा की धाक ते वै काँपत रहत चित गहत न चाव हैं॥ अफजल की अगति सासता की अपगति वहलोल[3] विपति सों डरे उमराव हैं। पक्का मतो

---

१ धोखा।

२ भयानक रसपूर्ण। कवि गोविंद गिल्ला भाई जी की हस्तलिखित प्रति में यह छंद पर्यायोक्ति के उदाहरण में दिया गया है, पर अन्य सभी प्रतियों में कैतवापन्हुति ही के उदाहरण में पाया जाता है।

३ बहलोल खाँ सन् १६३० ई० में निजामशाही बादशाह के यहाँ था और शाहजहाँ बादशाह की सेना इसे न दबा सकी। सन् १६६१ में इसने बीजापुर सरकार की सेवा ग्रहण कर ली और शिवाजी से युद्ध करने को यह भेजा गया। इस बीच में सिद्दी जौहर नामक सेनापति बीजापुर सरकार से बिगड़ खड़ा हुआ और बहलोल ने (जिसका पूरा नाम अब्दुलकरीम बहलोल खाँ था) उसे परास्त किया। मार्च सन् १६७३ में इसे खवास खाँ वजीर ने शिवाजी से लड़ने को भेजा। पहले इसने पनाले पर मरहठों को मुगलों की सहायता से हराया; किन्तु पीछे से उसी युद्ध में स्वयं शिवाजी ने आकर इसे हराकर पनाला छीन लिया। थोड़े ही दिनों में पनाला वापस लेने को यह फिर मरहठों से लड़ने गया; परंतु मरहठों ने इसे घेर कर खूब ही

करिकै मलिच्छ मनसव छोड़ि मक्का ही के मिसि[1] उतरत दरियाव हैं ॥ ९६ ॥

साहि तनै सरजा खुमान सलहेरि[2] पास कीन्हों कुरुखेत

तंग किया और बड़ो कठिनाई से इसका पिंड छोड़ा (उन्होंने इसे वास्तव में बंदी नहीं बना पाया जैसा कि छंद नं० ३५ में लिखा है)। फरवरी, मार्च सन् १६७४ में इसे शिवाजी के सेनापति हंसाजी मोहिते ने जेसारी पर हराया। सन् १६७५ में बहलोल के इशारे से खवास खाँ मार डाला गया और उसके ठौर बहलोल बीजापुर के नाबालिग बादशाह का वली (Regent) बनाया गया। इसने खानजहाँ बहादुर को परास्त कर मुगलों से मेल किया। सन् १६७७ में शिवाजी ने कुतुबशाह से मेल किया जिसमें एक शर्त यह भी थी कि बहलोल बीजापुर के राज्याधिकार से हटा दिया जाय। इस पर बहलोल मुगल सरदार खानजहाँ बहादुर को साथ ले कुतुबशाह पर चढ़ धाया, पर उसे मदन्न पंत ने, जो कुतुबशाह का वजीर था, घोर युद्ध करके परास्त किया। छंद नं० १६१ और २१९ देखिये। सन् १६७७ में यह मरा भी।

१ शिवाजी मक्का जानेवाले सैयदों को प्रायः नहीं सताते थे।

२ सलहेरि के किले को शिवाजी के प्रधान मंत्री मोरोपंत ने १६७१ ई० में जीत लिया था। तभी से इस पर शिवाजी का अधिकार हुआ। दूसरे ही साल १६७२ ई० में दिल्ली के सेनापति दिलेरखाँ (जिसे लोग दलेल खाँ भी कहते हैं) और खाँ जहाँबहादुर ने इसे घेरा और शिवाजी ने मोरोपंत और प्रतापराव गूजर के आधिपत्य में एक महती सेना उनसे लड़ने को भेजी। ये सेनापति स्वयं तो न लड़े पर इन्होंने इखलास खाँ को एक बहुत बड़ी सेना सहित लड़ने को भेजा। इस बड़े ही विकट संग्राम में मुगलों को बड़ी हानि पहुँचो और उनके मुख्य सेनानायकों में से २२ मारे गए और अनेक बंदी हुए एवं समस्त सेना एकदम तितर बितर हो गई। तभी तो भूषण जी ने इसका ऐसा भयंकर वर्णन भी किया है (छंद नं० २२६, २९२, ३३१, ३५५ एवं शिवाबावनी के नं० २५ व २६)।

खीझि मीर अचलन सों। भूषन भनत बलि करी है अरीन धर धरनी पै डारि नभ प्रान दै वलन सों॥ अमर[1] के नाम के बहाने गो अमरपुर चंदावत लरि सिवराज के दलन सों। कालिका प्रसाद के बहाने ते खवायो महि बाबू उमराव राव पसु के छलन सों॥ ९७॥

उत्प्रेक्षा

लक्षण—दोहा

आन बात को आन मैं चहँ संभावन[2] होय।
वस्तु, हेतु, फलयुत कहत उत्प्रेक्षा है सोय॥९८॥

उदाहरण। उक्त विषया वस्तूत्प्रेक्षा[3]—मालती सवैया

दानव आयो दगा करि जावली[4] दीह भयारो महामद भारयौ।

---

१ अमरसिंह चंदावत भी इसी युद्ध में मारा गया था। यह भारी सरदार था। भूषण जी ने बराबर इसके विषय में सम्मानपूर्वक लिखा है और शिवाजी की प्रशंसा करते हुए यहाँ तक कहा है कि "हिंदु बचाय बचाय यही अमरेस चँदावत लौं कोइ टूटै" (छंद नं० १५५, २२५, २३६, २७५, देखिए) मेवाड़ (उदयपुर) के प्रसिद्ध चंदा जी के वंशधर लोग "चंदावत" कहलाते हैं।

२ समझाना। उत्प्रेक्षा में उपमेय का वस्तु, हेतु या फल रूप में बनावटी (आहार्य्य) संशय-ज्ञान उपमान कोटि में प्रबल होता है। यह संभावना जनु, मनु, मानो आदि वाचकों द्वारा होती है। जहाँ ये वाचक लुप्त रूप में होते हैं वहां गम्योत्प्रेक्षा होती है। जहाँ यह संशय ज्ञान उपमान कोटि में प्रबल न होकर समभाव मात्र में रहे, वहाँ सन्देहमान अलंकार होता है।

३ उक्त विषया वस्तूत्प्रेक्षा में उत्प्रेक्षा का विषय कथित होता है। उदाहरण में कवि मयंद द्वारा गयन्द का पछारा जाना कहता भर है, किन्तु जानता है कि बात वह है नहीं तो भी आरोप उसी का करता है।

४ अफ़ज़ल खाँ जावली में मारा गया था।

भूषन बाहुबली सरजा तेहि भेंटिबे को निरसंक पधार्‌यो ॥ बीछू के घाय गिरे अफजल्लहि ऊपर ही सिवराज निहार्‌यो । दाबि यों बैठो नरिंद अरिंदहि मानो मयंद गयंद पछार्‌यो ॥ ९९ ॥

साहि तनै सिवसाहि निसा मैं निसाँक लियो गढ़सिंह[1] सोहानौ। राठिवरो को सँहार भयो लरिकै सरदार गिर्‌यो

---

1 इसका नाम पहले कोंडाने था; पर जब यह किला १६४७ में शिवाजी के अधिकार में आया, तब उन्होंने इसका नाम सिंहगढ़ रख दिया। १६६५ में शिवाजी ने इसे जयसिंह को दे दिया। यह सह्याद्रि पर्वतमाला के पूर्वी किनारे पर था जहाँ से पुरंदर पहाड़ी दक्षिण (Deccan) की ओर मुड़ जाती है। यह बड़ा ही अभेद्य दुर्ग था; पर शिवाजी को दबकर इसे जयसिंह को देना ही पड़ा। सन् १६७० ई० की माघ बदी ९ की रात को इसे फिर जीत लेने के लिये शिवाजी के बहादुर सरदार वीरवर तानाजी ने तैयारी की। इस अवसर पर शिवाजी ने, जो किलेदार उदयभानु राठौर की बहादुरी को भली भाँति जानते थे, अपने दरबार में पान का बीड़ा रख कर अपने सरदारों से कहा था कि 'कौन ऐसा वीर है जो यह बीड़ा उठावे और उदयभानु से लड़कर सिंहगढ़ छीन ले?' किसी की हिम्मत न पड़ी पर तानाजी ने बीड़ा उठाया। यह बात सुनकर उसके भाई सूर्याजी ने उसे समझाया कि उदयभानु बड़ा वीर है पर जब तानाजी ने एक न मानी तब सूर्या भी उसके साथ हो लिया और दोनों भाई सेना सहित किले पर जा टूटे। तीन सौ मरहठे किले के ऊपर पहुँच गए और तब उदयभानु को इसका पता लगा। बस फिर क्या था, घोर युद्ध प्रारंभ हुआ जिसमें उदयभानु के साथी भाग निकले। तब उदयभानु ने तानाजी को द्वंद्व युद्ध के लिये ललकारा और बहादुरी के जोश में तानाजी अपने साथियों को पीछे छोड़ अकेला ही उससे जा भिड़ा पर दुर्भाग्यवश लड़ कर मर गया। तब तो बड़े वेग से तानाजी के मामा शेलर ससैन्य जा टूटा और उसने सारी सेना का काम ही तमाम कर दिया तथा

उदैभानौ[1] ॥ भूषन यों घमसान भो भूतल घेरत लोथिन मानो मसानौ। ऊँचे[2] सुछज्ज छटा उचटी प्रगटी परभा परभात की मानौ ॥ १०० ॥

पुनरपि—कवित्त मनहरण

दुरजनदार भजि भजि वेसम्हार चढ़ीं उत्तर पहार[3] डरि सिवजी नरिंद ते। भूषन भनत बिन भूषन बसन, साधे भूखन पियासन हैं नाहन को निंदते॥ बालक अयाने बाट बीचही बिलाने कुम्हिलाने मुख कोमल अमल अरबिंद ते। दृगजल[4] कज्जल कलित बढ़्यो कढ़्यो मानो दूजा सोत तरनितनूजा को कलिंद[5] ते ॥१०१॥

अनुक्तविषया*वस्तूत्प्रेक्षा—यथा दोहा

महाराज सिवराज तव सुघर धवल धुव कित्ति।
छबि छटान सों छुवति सी छिति अंगन दिग भित्ति ॥१०२॥

किला मरहठों के हाथ लगा। तब शिवाजी ने यह समाचार सुना, तब उन्होंने बड़े शोक में आकर कहा कि "गढ़ तो मिला पर हाय! सिंह (ताना जी) जाता रहा।" यह किला तब से सदा शिवाजी के पास रहा।

१ उदयभानु किलेदार जिसका हाल पिछले पृष्ठ के नोट में लिखा गया है।

२ इस युद्ध में तानाजी मलूसरे किले के छज्जों से आँगन में ससैन्य कूदा था।

३ हिमाचल।

४ भयानकरसपूर्ण। उस समय की कठोरता को देखिए कि कोमलचित्त ब्राह्मण होकर भी भूषण जी को बेचारे बालकों पर भी दया न आई और उनकी महा दुर्गति का आप कैसे आनन्दपूर्व्वक वर्णन कर रहे हैं।

५ वह पहाड़ जिससे यमुनाजी निकली हैं। इसीसे उनका नाम कालिंदी है।

* अनुक्तविषया में उत्प्रेक्षा का विषय अकथित रहता है। यहाँ मुख्यता कीर्तिवाली

सिद्ध विषया*हेतूत्प्रेक्षा—कवित्त मनहरण

लूट्यो खानदौरा[1] जोरावर[2] सफजंग[3] अरु लह्यो कारतलबखाँ[4] मनहुँ अमाल हैं। भूषन भनत लूट्यो पूना मैं सइस्तखान[5] गढ़न मैं लूट्यो त्यों गढ़ोइन[6] को जाल है॥ हेरि हेरि कूटि सलहेरि बीच सरदार घेरि घेरि लूट्यो सब कटक कराल है।

चांदनी की है, किन्तु कवि ने चांदनी न कह कर केवल कीर्ति की छवि का पृथ्वी, आंगन आदि का छूना कहा है।

* हेतूत्प्रेक्षा में अहेतु को हेतु कर के कहते हैं। सिद्ध विषया में अहेतु सम्भव है किन्तु असिद्ध विषया में असम्भव। कवि ने केवल सिद्ध विषया कही है।

१ खानदौराँ को शाहजहाँ ने १६३४ ई० में दक्षिण का सूबेदार नियत किया था। बादशाह की ओर से उसने बीजापुरवालों से युद्ध कर लाभदायक संधि की। बाद को औरंगजेब ने इसे इलाहाबाद का किला जीतने भेजा। इसका नाम नौशेरी खाँ था (छंद नं० ३०७ देखिए) पर मुगलों के लिये अनेक किले जीतने पर इसे खानदौराँ की पदवी मिली। यह सन् १६५० में अहमदनगर में शिवाजी से लड़ा।

२ यह नाम इतिहास में नहीं मिलता। या तो यह शब्द विशेषण मात्र है अथवा इस नाम का कोई साधारण सरदार होगा।

३ और ४ कारतलबखाँ सन् १६५४ में अहमदनगर पर शिवाजी से लड़ा था। किसी किसी प्रति में पाठकार के स्थान पर मार है, पर शुद्ध कार ही समझ पड़ता है। सफजंग का नाम छत्र-प्रकाश में छत्रसाल जी से लड़नेवालों में लिखा है। यह दिल्ली का सरदार था और इसका ठीक नाम सफदरजंग था। इसका कोई युद्ध शिवाजी से नहीं मिलता।

५ शाइस्ता खाँ (छंद नं० ३५ नोट देखिए)।

६ गढ़पतियों अथवा किलेदारों को।

मानो हय हाथी उमराव करि साथी अवरंग डरि सिवाजी पै भेजत रिसाले[1] है ॥ १०३ ॥

सिद्धविषया*फलोत्प्रेक्षा—मनहरण दंडक

जाहि पास जात सो तौ राखि ना सकत याते तेरे पास अचल सुप्रीति नाधियतु है। भूषन भनत सिवराज तव कित्ति सम और की न कित्ति कहिवे को काँधियतु है ॥ इंद्र कौ अनुज तैं उपेंद्र अवतार याते तेरो बाहुबल लै सलाह साधियतु है। पाय तर आय नित निडर बसायवे को कोट बाँधियतु मानो पाग बाँधियतु है ॥ १०४ ॥

दोहा

दुवन सदन सब के बदन सिव सिव आठौ याम।
निज बचिबे को जपत जनु तुरकौ हर को नाम ॥१०५॥

गमगुप्तोत्प्रेक्षा (गम्योत्प्रेक्षा)

लक्षण—दोहा।

मानो इत्यादिक वचन आवत नहिं जेहि ठौर।
उत्प्रेक्षा गम गुप्त सो भूषण कहत अमौर ॥१०६॥

---

१ इरसाल, खिराज, या जो किसी के पास भेजा जावे।

* फलोत्प्रेक्षा में अफल फल कहा जाता है, जो सिद्ध विषया में सम्भव और असिद्ध विषया में असम्भव होता है। कवि ने असिद्ध विषया नहीं कही है।

उदाहरण—मनहरण

देखत ऊँचाई उदरत[1] पाग; सूधी राह चोस हूँ में चढ़ें ते जे साहस निकेत हैं। सिवाजी हुकुम तेरो पाय पैदलन सलहेरि परनालो[2] ते वै जीते जनु[3] खेत हैं॥ सावन भादों की भारी कुहू की अँध्यारी चढ़ि दुग्ग पर जात मावलीदल[4] सचेत हैं। भूषन भनत ताकी बात मैं बिचारी तेरे परताप रवि की उज्यारी गढ़ लेत हैं॥१०७॥

पुनः दोहा

और गढ़ोई नदी नद सिव गढ़पाल दरयाव[6]।
दौरि दौरि चहुँओर ते मिलत आनि यहि भाव॥१०८॥

---

१ गिरती है, उतरती है।

२ यह किला १६५९ के अंत में शिवाजी के अधिकार में आया। बीजापुर की ओर से सिद्दी जौहर ने इसे मई १६६० में फिर छीन लेने के विचार से घेरा, पर वह सफल मनोरथ न हुआ। तब स्वयं बीजापुराधीश ने १६६१ में इसे घेर कर जीत लिया; परंतु शिवाजी ने इसे मार्च १६७३ ई० में फिर से छीनकर अपने अधिकार में कर लिया। सन १६७६ में एक बार शिवाजी ने इसे फिर खोया और जीता।

३ जैसे साफ मैदान हो, अर्थात् इतने ऊँचे किलों पर पैदल गण यों चढ़ गए जैसे कोई समथल भूमि पर दौड़े।

४ पहाड़ी देश के रहनेवाले शिवाजी के पैदल सिपाही।

५ इस छंद में गम्योत्प्रेक्षा अलंकार बहुत साफ नहीं है, किन्तु निकल आता है।

६ समुद्र।

रूपकातिशयोक्ति *

लक्षण—दोहा

ज्ञान करत उपमेय को जहँ केवल उपमान।
रूपकातिशय-उक्ति सो भूषन कहत सुजान॥ १०९॥

उदाहरण—मनहरण दंडक

वासव से बिसरत बिक्रम की कहा चली, बिक्रम लखत बीर बखत-बुलंद के। जागे तेजवृंद सिवा जी नरिंद मसनंद माल मकरंद कुलचंद साहिनंद के॥ भूषन भनत देस देस वैरि नारिन मैं होत अचरज घर घर दुख दंद के। कनकलतानि¹ इंदु, इंदु माहिं अरविंद, झरैं अरविंदन ते बुंद मकरंद के॥ ११०॥

भेदकातिशयोक्ति

लक्षण—दोहा

जेहि थर आनहि भाँति की बरनत बात कछूक।
† भेदकातिसय-उक्ति सो भूषन कहत अचूक॥१११॥

---

* भूषण ने अतिशयोक्ति के छः भेदों में सापन्हवातिशयोक्ति नहीं कही है।

1 सोने की बौंड़ी (सी देह) में चंद्रमा (सा मुख), चंद्रमा (से मुख) में कमल (से नेत्र) और कमल (जैसे नेत्रों) से मकरंद (के समान आँसू) बूँद झर रही हैं।

† इसमें वर्ण्य में कुछ अन्तर दिखलाया जाता है।

उदाहरण—कवित्त मनहरण

श्री नगर[१] नयपाल जुमिला[२] के छितिपाल भेजत रिसाल[३] चौर गढ़ कुही बाज की। मेवार[४] ढुँढ़ार[५] मारवाड़[६] औ बुँदेलखंड[७] झारखंड[८] बाँधौ धनी[९] चाकरी इलाज की॥ भूषन जे पूरब पछाँह नरनाह ते वै ताकत पनाह दिलीपति सिरताज की। जगत को जैत वार जीत्यो अवरंगजेब न्यारी रीति भूतल निहार सिवराज की ११२

१ काश्मीर की राजधानी।

२ इस नाम के किसी स्थान का पता नहीं चलता। एक स्थान जलना था जो औरंगाबाद के पूरब की ओर जयदेव राय मनसबदार दिल्ला के देश में बसा था। अथवा यह फारसी शब्द जुमला (अर्थात् सब कहीं के) हो सकता है।

३ इरसाल, खिराज।

४ उदयपुर की रियासत।

५ रियासत अंबर अर्थात् जयपुर।

६ रियासत जोधपुर।

७ इसमें अब चार सरकारी ज़िले झाँसी, बाँदा, हमीरपुर और जालौन, एवं ज़िला इलाहाबाद की तीन तहसीलें और २०-२२ देशी रियासतें हैं। छत्रसाल के पिता चंपतिराय ने कुछ दिनों मुग़लों की सेवा स्वीकार की थी और बुंदेलखंड के अन्य सरदार भी औरंगजेब के वशीभूत हो गए थे। इसका विस्तृत हाल भूमिका में देखिए।

८ उड़ीसा में गोंडवाने के पूरब में है। इस उड़ीसा को काशी कहते हैं, क्योंकि यहाँ पहले संस्कृत की बड़ी चर्चा थी।

९ बांधव का राजा। भूषण जी का तात्पर्य यह है कि इतने इतने नामी देशों के राजा महाराजा औरंगजेब को कर देते, उसकी सेवा तक स्वीकार करते एवं उसकी शरण में रहते थे, पर शिवाजी का ढंग कुछ न्यारा ही था। वे बादशाह की बिलकुल परवा न करते और उनसे सदा लड़ाई झगड़ा करते थे।

अक्रमातिशयोक्ति

लक्षण—दोहा

जहाँ हेतु अरु काज मिलि होत एक ही साथ।
अक्रमातिसय-उक्ति सो कहि भूषन कविनाथ ॥ ११३ ॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

उद्धत अपार तव दुंदुभी धुकार संग लंघैं पारावार वाल बृंद रिपुगन के। तेरे चतुरंग के तुरंगन के रँगेरज[1] साथही उड़ात रजपुंज[2] हैं परन[3] के ॥ दच्छिन के नाथ सिवराज! तेरे हाथ चढ़ैं धनुप के साथ गढ़ कोट दुरजन के। भूषन असीसैं, तोहिं करत कसीसैं[4] पुनि बानन के साथ छूटैं प्रान तुरकन के ॥ ११४ ॥

चंचलातिशयोक्ति

लक्षण—दोहा

जहाँ हेतु चरचाहि मैं काज होत ततकाल।
चंचलातिसय-उक्ति सो भूषन कहत रसाल ॥ ११५ ॥

---

१ घोड़ों के धूल से रंग जाने से अर्थात् धावे के लिये चलने ही से।

२ राज्यश्री का ढेर।

३ शत्रुओं के। इस पद में पूर्ण भयानक रस है।

४ कशिश करते ही अर्थात् वाण खींचते ही।

उदाहरण—दोहा

आयो आयो सुनत ही सिव सरजा तुव नावँ ।
वैरि नारि दृग जलन सों बूड़ि जात अरि गावँ ॥ ११६ ॥

अन्यच्च—कवित्त मनहरण

गड़नेर[1] गढ़[2] चाँदा[3] भागनेर[4] बीजापुर नृपन कि नारी
रोय हाथन मलति हैं । करनाट[5] हबस[6] फिरंगहू[7] विलायत[8]

---

१ व २ गड़नेर अर्थात् नगरगढ़ नामक एक देश कड़ा मानिकपुर के समीप था जिसमें पहाड़ियाँ और जंगल बहुत थे । इसे मुगलों ने १५६० में जीत लिया ।

३ इसे मरहठों ने अपने अधिकार में कर लिया था और अंत को कर्नल ऐडम्स ने उनसे मई सन् १८१८ में जीत लिया ।

४ भागनेर अर्थात् भागनगर को गोलकुंडावाले मुहम्मद कुतुबुल्मुल्क ने अपनी प्रिय पत्नी भागमती के नाम पर चार मील पर बसाया था । यही वर्त्तमान हैदराबाद शहर है ।

५ करनाटक पर शिवाजी ने १६७६–७८ ई० में धावा किया । यहाँ पर उस धावे का कथन नहीं है; वरन् केवल आतंक का है । कर्नाटक दो थे, एक पूर्वी और दूसरा पश्चिमी । पूर्वी कर्नाटक पर सन् १६७६–७८ में धावा हुआ, किन्तु पश्चिमी पर सन् १६७२ के पूर्व कई बार लूट पाट तथा धावे हुए ।

६ हबशियों का स्थान अबिसीनिया ।

७ योरप अथवा बाहर का देश फिरंगाना ।

८ मुसल्मानों की विलायत (अफ़ग़ानिस्तान, तुर्किस्तान, फारस इत्यादि) ।

चलख[1] रूम[2] अरितिय छतियाँ दलति हैं ॥ भूषन भनत साहि तनै सिवराज एते मान तव धाक आगे दिसा उवलति हैं। तेरी चमू चलिवे की चरचा चले ते चक्रवर्तिन की चतुरंग चमू विचलति हैं ॥ ११७ ॥

अत्यंतातिशयोक्ति*

लक्षण—दोहा

जहाँ हेतु ते प्रथम ही प्रगट होत है काज।
अत्यंतातिसयोक्ति सो कहि भूषन कविराज ॥११८॥

उदाहरण–कवित्त मनहरण

मंगन मनोरथ के प्रथमहि दाता तोहिं कामधेनु कामतरु सो गनाइयतु है। याते तेरे गुन सब गाय को सकत कवि, बुद्धि अनुसार कछु तऊ गाइयतु है ॥ भूषन भनत साहि तनै सिवराज निज बखत बढ़ाय करि तोहि ध्याइयतु है। दीनता को डारि औ अधीनता बिडारि दीह दारिद को मारि तेरे द्वार आइयतु है ॥११९॥

पुनः—दोहा

कवि तरुवर सिव सुजसरस सींचे अचरज मूल।
सुफल होत है प्रथम ही पीछे प्रगटत फूल[3] ॥१२०॥

---

१ अफगानिस्तान का एक प्रसिद्ध शहर।

२ टरकी।

* कवि ने सम्बन्धातिशयोक्ति नहीं कही है।

३ फूलना, प्रसन्नता। श्लेष में कथन है।

सामान्य विशेष

लक्षण–दोहा

कहिवे जहँ सामान्य* है कहैं जु तहाँ विशेष।
सो सामान्य विशेष है वरनत सुकवि अशेष ॥१२१॥

उदाहरण–दोहा

और नृपति भूपन कहैं करैं न सुगमौ काज।
साहि तनै सिव सुजस तो करै कठिनऊ आज ॥१२२॥

पुनः—मालती सवैया

जीति लई वसुधा सिगरी घमसान घमंड कै वीरन हू की। भूषन भौंसिला छीनि लई जगती उमराव अमीरन हू की ॥ साहि-तनै सिवराज कि धाकनि छूटि गई धृति धीरन हू की। मीरन के उर पीर बढ़ी यों जु भूलि गई सुधि पीरन हू की ॥१२३॥

तुल्ययोगिता

लक्षण–दोहा

तुल्यजोगिता तहँ धरम जहँ वरन्यन[1] को एक।
कहूँ अवरन्यन[2] को कहत भूपन वरनि विवेक ॥१२४॥

वर्ण्यों का साधर्म्य–उदाहरण–मनहरण दंडक[3]

चढ़त तुरंग चतुरंग साजि सिवराज चढ़त प्रताप दिन दिन अति

---

* 'राम रघुवंशी थे' में राम विशेष हैं तथा रघुवंशी सामान्य, क्योंकि बहुतेरे लोग रघुवंशी हो सकते थे।

१ उपमेयों का।

२ उपमानों का।

३ उदाहरण नं० १२५ में आवृत्ति दीपक अलंकार भी आता है।

जंग मैं। भूषन चढ़त मरहट्टन के चित्त चाव खग्ग खुलि चढ़त है अरिन के अंग मैं॥ भौंसिला के हाथ गढ़ कोट हैं चढ़त अरिजोट है चढ़त एक[1] मेरु गिरि सृंग मैं। तुरकान गन व्योमयान हैं चढ़त विनु मान है चढ़त वदरंग[2] अवरंग मैं॥१२५॥

अवर्ण्यों का साधर्म्य—अन्यच्च—दोहा

सिव सरजा भारी भुजन भुव भरु धस्यो सभाग।
भूषन अव निहचिंत हैं सेसनाग दिगनाग॥१२६॥

द्वितीय—लक्षण दोहा

हित अनहित को एक सो जहँ वरनत व्यवहार।
तुल्यजोगिता और सो भूषन ग्रंथ विचार॥१२७॥

हिताहित उदाहरण—कवित्त मनहरण

गुनन[3] सों इनहूँ को वाँधि लाइयतु पुनि गुनन[4] सों उनहूँ को वाँधि लाइयतु है। पाय[5]गहि इनहूँ को रोज ध्याइयतु अरु पाय[6]गहि उनहूँ को रोज ध्याइयतु है॥ भूषन भनत

१ अरिन के जोड़े एक होकर अर्थात् बहुत से अरि साथ साथ।

२ विनमान औरँग में बदरंग चढ़ता है।

३ गुण-अर्थात् अपने अच्छे गुणों के कारण।

४ रस्सियों से।

५ पैर छूकर।

६ पाकर, पकड़ कर।

महराज सिवराज रस रोस तो हिये मैं एक भाँति पाइयतु है। दोहाई[1] कहे ते कबि लोग ज्याइयतु अरु दोहाई[2] कहे ते अरि लोग ज्याइयतु है ॥१२८॥

दीपक

लक्षण–दोहा

बर्न्य अबर्न्यन को धरम जहँ बरनत हैं एक।
दीपक ताको कहत हैं भूषन सुकबि बिबेक ॥१२९॥

उदाहरण–मालती सवैया

कामिनि कंत सों जामिनि चंद सों दामिनि पावस मेघ घटा सों। कीरति दान सों सूरति ज्ञान सों प्रीति बड़ी सनमान महा सों॥ भूषन भूषन सों तरुनी नलिनी नव पूषनदेव[3] प्रभा सों। जाहिर चारिहु ओर जहान लसै हिंदुवान खुमान सिवा सों ॥१३०॥

दीपकावृत्ति

लक्षण–दोहा

दीपक पद के अरथ जहँ फिरि फिरि करत बखान।
आवृति दीपक तहँ कहत भूषन सुकवि सुजान ॥१३१॥

---

१ दोहा (छंद) कहने से।

२ दोहाई करने से; शरण आने से।

३ सूर्य देवता।

अर्थावृत्ति दीपक–उदाहरण—दोहा

सिव सरजा तव दान को करि को सकत बखान ?
बढ़त नदीगन दान जल उमड़त नद गजदान ॥ १३२ ॥

पदावृत्ति दीपक—मालती सवैया

चक्रवती चकता चतुरंगिनि चारिउ चापि लई दिसि चंका। भूप दरीन दुरे भनि भूषन एक अनेकन वारिधि नंका॥ औरँग साहि सों साहि को नंद लरो सिव साहि बजाय कै डंका। सिंह की सिंह चपेट सहै गजराज सहै गजराज को धंका ॥ १३३ ॥

पदार्थावृत्ति दीपक–मनहरण दंडक

अटल रहे हैं दिगअंतन के भूप धरि रैयति को रूप निज देस पेस करि कै। राना[1] रह्यो अटल बहाना करि चाकरी को बाना तजि भूषन भनत गुन भरि कै॥ हाड़ा[2] रायठौर[3] कछवाहे[4] गौर[5] और रहे अटल चकत्ता को चमाऊ[6] धरि डरि कै। अटल सिवाजी रह्यो दिल्ली को निदरि धीर धरि ऐंड़ धरि तेग धरि गढ़ धरि कै॥ १३४ ॥

---

१ महाराणा उदयपुर।

२ हाड़ा क्षत्रिय बूँदी और कोटा में राज्य करते हैं।

३ जोधपुर के महाराज।

४ कछवाहे अर्थात् कुशवंशी क्षत्रिय जैसे अम्बर (जयपुर) वाले।

५ गौरों की रियासत छोटी थी जिसकी राजधानी सुपुर (राजपूताना) में थी। सिंधिया ने उसके वृहदंश पर कब्जा कर लिया। पृथ्वीराज के समय में गौर राजाओं का बड़ा मान और प्रभुत्व था। ६ चँवर।

प्रतिवस्तूपमा *

लक्षण-दोहा

वाक्यन को जुग होत जहँ एकै अरथ समान।
जुदो जुदो करि भाषिए प्रति वस्तूपम जान॥ १३५॥

उदाहरण—लीलावती छंद[1]

मद जल धरन द्विरद बल राजत, बहु जल धरन जलद छवि साजै। पुहुमि धरन फनि नाथ लसत अति, तेज धरन ग्रीषम रवि छाजै॥ खरग धरन सोभा तहँ राजत, रुचि भूषन गुन धरन समाजै। दिल्लि दलन दक्खिन दिसि थंभन, ऐंड़[2] धरन सिवराज विराजै॥ १३६॥

दृष्टांत †

लक्षण-दोहा

जुग वाक्यन को अरथ जहँ प्रतिविंबित सो होत।
तहाँ कहत दृष्टांत हैं भूषन सुमति उदोत॥ १३७॥

---

* इस में दो वाक्यों की गति एक सी होती है तथा दोनों के भिन्न धर्मों या क्रियाओं का अर्थ एक ही होता है। ये उपमान और उपमेय मूलक भी होते हैं। इसके वाक्य स्वतन्त्र होते हैं तथा आगे आने वाले निदर्शना के अस्वतन्त्र।

१ इसका लक्षण यह है—"लघुगुरु को नहँ नेम नहिं वत्तिस कल सब जान। तरल तुरंगम चाल सो लीलावती वखान॥"

२ "ऐंड़ एक सिवराज निवाही। करै आपने चित्त कि चाही। आठ पातसाही झकझोरै। सूबन पकरि दण्ड लै छोरै॥" (छत्रप्रकाश)।

† प्रतिवस्तूपमा और दृष्टान्त में उपमेय वाक्य और उपमान वाक्य में बिंबप्रतिबिंब

उदाहरण—दोहा

सिव ! औरंगहि जिति सकै और न राजा राव ।
हत्थिमत्थ पर सिंह बिनु आनन घालै घाव ॥ १३८ ॥
चाहत निरगुन सगुन को ज्ञानवंत गुनधीर ।
सकल भाँति निरगुन गुनिहि सिवा नेवाजत वीर ॥१३९॥

पुनः—मालती सवैया

देत तुरी गन गीत सुने बिनु देत करी गन गीत सुनाए ।
भूषन भावत भूप न आन जहान खुमान कि कीरति गाए ॥
मंगन को भुवपाल घने पै निहाल करै सिवराज रिझाए । आन
ऋतैं बरसैं सरसैं उमड़ैं नदियाँ ऋतु पावस पाए[1] ॥ १४० ॥

निदर्शना[2]

लक्षण-दोहा

सदृश वाक्य जुग अरथ को करिए एक अरोप ।
भूषन ताहि निदर्शना कहत बुद्धि दै ओप ॥ १४१ ॥

उदाहरण-मालती सवैया

मच्छहु कच्छ मैं कोल नृसिंह मैं बावन मैं भनि भूषन जो है ।

भाव रहता है; परन्तु पहले में धर्म का वस्तु प्रतिवस्तु भाव (एक धर्म का जुदे शब्दों में दो जगह होना) होता है तथा दृष्टान्त में धर्म का बिंब प्रतिबिंब भाव होते हुए भी दोनों धर्म पृथक् हैं । दृष्टान्त में वाक्य के दोनों भागों में उपमेय उपमान का सम्बन्ध रहता है, बिंबप्रतिबिंब रूप धर्म और वाक्य दोनों में आते हैं, तथा वाचक लुप्त रहता है ।

१ इस छंद से विदित होता है कि भूषणजी ने शिवराज से बहुत कुछ दान पाया था ।

२ निदर्शना चार प्रकार की होती है, किन्तु भूषण ने केवल प्रथम निदर्शना का कथन किया है ।

जो द्विजराज मैं जो रघुराम मैं जोत्र कह्यो वलरामहु को है ॥ बौद्ध मैं जो अरु जो कलकी महँ विक्रम हूवे को आगे सुनो है। साहस भूमि-अधार सोई अब्र श्री सरजा सिवराज में सो है ॥१४२॥

अपरंच—कवित्त मनहरण

कीरति सहित जो प्रताप सरजा मैं वर मारतंड माँझ तेज चाँदनी सो जानी मैं। सोहत उदारता औ सीलता खुमान मैं सो कंचन मैं मृदुता सुगंधता वखानी मैं ॥ भूषन कहत सब हिंदुन को भाग फिरै चढ़ेते कुमति चकता हू की निसानी मैं। सोहत सुवेस दान कीरति सिवा मैं सोई निरखी अनूप रुचि मोतिन के पानी मैं ॥ १४३ ॥

अन्यच्च—दोहा

औरन को जो जनम है, सो याको यक रोज।
औरन को जो राज सो, सिव सरजा की मौज ॥ १४४ ॥
साहिन सों रन माँडिबो कीवो सुकवि निहाल।
सिव सरजा को ख्याल है औरन को जंजाल ॥ १४५ ॥

व्यतिरेक[1]

लक्षण—दोहा

सम छबिवान दुहून मैं, जहँ वरणत बढ़ि एक।
भूषण कवि कोविद सबै, ताहि कहत व्यतिरेक ॥ १४६ ॥

---

१ इसमें अन्य कवि प्रायः उपमेय उपमान का भी संबंध जोड़ते हैं। इनके भी उदाहरणों मे यह बात प्रस्तुत है। पहले उदाहरण में प्रतीप की मुख्यता हो गई है, किन्तु दूसरे में व्यतिरेक स्पष्ट है। इसके सम, अधिक और न्यून भेद भूषण ने नहीं कहे हैं।

उदाहरण—छप्पय

त्रिभुवन मैं परिसिद्ध एक अरि वल वह खंडिय।
यहि अनेक अरि वल विहंडि रन मंडल मंडिय ॥
भूषण वह ऋतु एक पुहुमि पानिपहि बढ़ावत।
यह छहु ऋतु निसि दिन अपार पानिप सरसावत ॥
सिवराज साहि सुव सत्थ नित हय गय लक्खन संचरइ।
थक्कइ गयंद थक्कइ तुरंग किमि सुरपति सरवरि करइ ॥१४७॥

पुनरपि—कवित्त मनहरण

दारुन दुगुन दुरजोधन[1] ते अवरंग भूषन भनत जग राख्यो छल मढ़ि कै। धरम धरम, बल भीम, पैज अरजुन, नकुल अकिल, सहदेव तेज चढ़ि कै ॥ साहि के सिवाजी गाजी, कर्‌यो आगरे मैं चंड पांडवनहू ते पुरुपारथ सुबढ़ि कै। सूने लाखभौन ते कढ़े वै पाँच राति, तैंजु द्योस लाख चौकी ते अकेलो आयो कढ़ि कै ॥१४८॥

सहोक्ति

लक्षण—दोहा

वस्तुन को भासत जहाँ, जन रंजन सह भाव।

---

1 दुर्योधन ने छल से पांडवों को लाक्षागृह में जलाने का प्रबंध किया था। सो धर्मराज के धर्म, भीमसेन के बल, अर्जुन की पैज, नकुल की बुद्धि और सहदेव के तेज से पांडवों का उद्धार हुआ। इसी पर उक्ति करके कवि शिवाजी के दिल्ली से निकल आने पर उनकी तुलना पाँचों भाइयों से करता है।

ताहि सहोक्ति बखानहीं, जे भूपन कविराव * ॥१४९॥

उदाहरण—मनहरण दंडक

छूट्यो है हुलास आमखास एक संग छूट्यो हरम सरम एक संग विनु ढंग ही। नैनन[1] ते नीर धीर छूट्यो एक संग छूटी सुख रुचि मुख रुचि त्योही विन रंग ही॥ भूपन बखाने सिवराज मरदाने तेरी धाक विललाने न गहत बल अंग ही। दक्खिन को सूबा पाय दिली के अमीर तजैं उत्तर की आस जीव आस एक संग ही॥१५०॥

विनोक्ति

लक्षण—दोहा

विना कछू जहँ बरनिए कै हीनो कै नीक।
ताको कहत विनोक्ति हैं कवि भूपन मति ठीक॥१५१॥

अभाव से भलाई—उदाहरण—दोहा

सोभमान जग पर किए सरजा सिवा खुमान।
साहिन सौं विनु डर अगड़[2] विनु गुमान को दान॥१५२॥

पुनः—मालती सवैया

को कविराज विभूपन होत विना कवि साहितनै को कहाए ?। को कविराज सभाजित होत सभा सरजा के विना गुन गाए ?॥ को कविराज भुवालन भावत भौंसिला के मन

---

* सहोक्ति में साथ के कारण एक शब्द का अनेक स्थानों पर अन्वय (आरोप) किया जाता है।

1 भयानक रसपूर्ण। 2 अकड़।

में विनु भाए ? । को कविराज चढ़ै गज वाजि सिवाजि कि मौज मही विनु पाए ? ॥ १५३ ॥

अन्यच्च—कवित्त मनहरण

विना लोभ को विवेक विना भय युद्ध टेक साहिन सों सदा साहि तनै सिरताज के। विना ही कपट प्रीति विना ही कलेस जीति विना ही अनीति रीति लाज के जहाज के॥ सुकवि समाज विन अपजस काज भनि भूपन भुसिल[1] भूप गरिवनेवाज के। विना ही वुराई ओज विना काज घनी फौज विना अभिमान मौज राज सिवराज के॥ १५४ ॥

अभाव से हीनता

कीरति को ताजी करी वाजि चढ़ि लूटि कीन्हीं भई सब सेन विनु वाजी विजैपुर[2] की। भूपन भनत भौंसिला भुवाल धाक ही सों धीर धरवी[3] न फौज कुतुब के धुर की॥ सिंह उदैभान विन अमर सुजान विन मान विन कीन्ही साहिवी त्यों दिलीसुर की। साहिसुव महावाहु सिवाजी सलाह विन कौन पातसाह की न पातसाही मुरकी॥ १५५ ॥

समासोक्ति

लक्षण—दोहा

वरनन[4] कीजै आन को ज्ञान आन को होय।

---

१ भौंसिला। २ वीजापुर। ३ धरेगी (बुंदेलखंडी वोली)।

४ प्रस्तुत के वर्णन में जहाँ अप्रस्तुत की सचाई ज्ञात हो, वहाँ समासोक्ति अलंकार होता है।

समासोक्ति भूषन कहत कवि कोबिद सब कोय ॥१५६॥

उदाहरण—दोहा

बड़ो डील लखि पील[1] को सबन तज्यो बन थान ।
धनि सरजा तू जगत मैं ताको ह्रस्यो गुमान ॥ १५७ ॥

तुही साँच द्विजराज है तेरी कला प्रमान ।
तो पर सिव किरपा करी जानत सकल जहान ॥ १५८ ॥

अपरंच—कवित्त मनहरण

उत्तर पहार बिघनोल[2] खँडहर[3] झारखंडहू[4] प्रचार चारु केली है बिरद की । गोर[5] गुजरात अरु पूरब पछाँह ठौर जंतु जंगलीन की बसति मारि रद की ॥ भूषन जो करत न जाने बिनु घोर सोर भूलि गयो आपनी ऊँचाई लखे कद की । खोइयो प्रबल मदगल गजराज एक सरजा सों बैर कै बड़ाई निज मद की ॥ १५९ ॥

---

१ हाथी, यहाँ औरंगजेब ।

२ इसका नाम बिदहर या बिदनूर भी था । यह मंगलोर (मैसूर) के पास इसी नाम के प्रांत की राजधानी थी । इसे शिवाजी ने सन् १६६४ में जीता ।

३ चंबल और नर्मदा के बीच सुल्तानपुर के समीप एक क़स्बा ।

४ छंद नं० ११२ का नोट देखिए ।

५ गोर नामक शहर अफ़ग़ानिस्तान में था जहाँ से शिहाबुद्दीन ग़ोरी आया था ।

परिकर-परिकरांकुर

लक्षण—दोहा

साभिप्राय बिसेषननि भूषन परिकर मान।
साभिप्राय विसेष्य ते परिकर अंकुर जान॥ १६०॥

उदाहरण—परिकर—कवित्त मनहरण

बचैगा न समुहाने बहलोलखाँ[1] अयाने भूषन बखाने दिल आनि मेरा बरजा। तुझ ते सवाई तेरा भाई[2] सलहेरि पास कैद किया साथ का न कोई बीर गरजा॥ साहिन के साहि उसी औरँग के लीन्हें गढ़ जिसका तू चाकर औ जिसकी है परजा। साहिका ललन दिलीदलका दलन अफजल का मलन सिवराज आया सरजा॥ १६१॥

जाहिर जहान जाके धनद समान पेखियतु पासवान यों खुमान चित चाय हैं। भूखन भनत देखे भूख न रहत सब

---

१ छंद ९६ का नोट देखिए। बहलोल औरंगजेब का चाकर या प्रजा न था। एक बहलोल नामक छोटा सरदार दिल्ली का भी था। बीजापुरी बहलोल दो बार मुगलों की सहायता लेकर शिवाजी से लड़कर हारा था। इसी से व्यंग्य से भूषण उसे दिल्ली का चाकर और प्रजा कहते हैं, मानो वह अपने स्वामी बीजापुर-नरेश की भक्ति न करके दिल्ली की करता था।

२ यह कौन भाई था, सो अज्ञात है। सम्भवतः बहलोल का सगा, चचेरा, ममेरा, मौसेरा, पगड़ी बदल आदि भाइयों में से कोई बड़ा भाई सलहेरि के युद्ध में पकड़ा गया होगा।

आपही सों जात दुख दारिद बिलाय हैं ॥ खीझे ते खलक माहिं खलभल डारत है रीझे ते पलक माहिं कीन्हें रंक राय हैं। जंग जुरि अरिन के अंग को अनंग कीबो दीबो सिव साहब के सहज सुभाय हैं ॥ १६२ ॥

अन्यच्च—दोहा

सूर सिरोमनि सूर कुल सिव सरजा मकरंद।
भूषन क्यों औरँग जिते कुल मलिच्छ कुल चंद ॥१६३॥

परिकरांकुर—दोहा

भूषन भनि सबही तबहि जीत्यो हो जुरि जंग।
क्यों जीतै सिवराज सों अब अंधक[1] अवरंग ? ॥१६४॥

श्लेष

लक्षण—दोहा

एक वचन में होत जहँ बहु अर्थन को ज्ञान।
स्लेस कहत हैं ताहि को भूषन सुकवि सुजान ॥१६५॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

सीता[2] संग सोभित सुलच्छन[3] सहाय जाके भूपर

---

1 अन्धक दैत्य को शिव (शंकरजी) ने मारा था।

२ सीता जी संग हैं अथवा श्री अर्थात् लक्ष्मी ता (उसके) संग हैं।

३ लक्ष्मणजी अथवा सु (सुन्दर) लक्षण अर्थात् गुण।

भरत[1] नाम भाई[2] नीति चारु है। भूषन भनत कुल सूर कुल भूषन हैं दासरथी[3] सब जाके भुज भुव भारु है॥ अरि लंक[4] तोर जोर जाके संग बान[5] रहें सिंधुर[6] हैं बाँधे जाके दल को न पारु है। ते गहि[7] कै भेंटै जौन[8] राकस मरद जाने सरजा सिवाजी राम ही को अवतारु है॥ १६६॥

पुन:

देखत सरूप को सिहात न मिलन काज जग जीतिबे की जामें रीति छल बल की। जाके पास आवै ताहि निधन करति वेगि भूषन भनत जाकी संगति न फल की॥ कीरति कामिनि राची सरजा सिवा की एक बस कै सकै न बस करनी सकल

---

१ भरत जी अथवा भरता हैं नाम अर्थात् नाम व्याप्त करता है।

२ भाई अर्थात भ्राता अथवा रुची अर्थात् पसन्द आई।

३ दशरथजी के पुत्र अथवा सब रथी जिसके दास (हैं)।

४ लंका अथवा कमर।

५ बानर अर्थात् बंदर हैं अथवा बाण रहें।

६ सिंधु अर्थात् समुद्र बाँधा रहै (सेतु बंधन) अथवा सिंधुर अर्थात् हाथी बाँधे रहें।

७ ते गहि अर्थात् उन्हें पकड़ कर अथवा तलवार ही से।

८ जौन राकस मरद जाने अर्थात् जो राक्षसों को मर्दना जानता है अथवा जो नर (मनुष्य) अकस (शत्रु) जन जानता है उसे तेगही से भेंटता है अर्थात् मार डालता है। इस कविता के अर्थ चाहे राम पक्ष में लगाइए चाहे शिवाजी पर।

की। चंचल सरस एक काहू पै न रहै दारी[1] गनिका समान सूबेदारी दिली दल की ॥ १६७ ॥

अप्रस्तुत प्रशंसा *

लक्षण—दोहा

प्रस्तुत लीन्हे होत जहँ, अप्रस्तुत परसंस।
अप्रस्तुत परसंस सो कहत सुकवि अवतंस ॥ १६८ ॥

उदाहरण—दोहा

हिंदुनि सों तुरकिनि कहैं तुम्हैं सदा संतोप।
नाहिन तुम्हरे पतिन पर सिव सरजा कर रोप ॥ १६९ ॥
अरितिय भिल्लिनि सों कहैं घन बन जाय इकंत।
सिव सरजा सों वैर नहिं सुखी तिहारे कंत ॥ १७० ॥

पुनः मालती सवैया

काहु पै जात न भूषन जे गढ़पाल कि मौज निहाल रहे हैं।
आवत हैं जु गुनी जन दच्छिन भौंसिला के गुन गीत लहे हैं ॥
राजन राव सबै उमराव खुमान कि धाक धुके यों कहे हैं।
संक नहीं, सरजा सिवराज सों आजु दुनी में गुनी निरभै हैं ॥ १७१ ॥

---

1 छिनाल स्त्री। इस छंद को गणिका एवं दक्षिण की सूबेदारी दोनों ही पक्षों में ले सकते हैं।

* भूषण ने प्रस्तुतांकुर अलंकार छोड़ दिया है।

पर्य्यायोक्ति*

लक्षण—दोहा

वचनन की रचना जहाँ वर्णनीय पर जानि।
परजायोकति कहत हैं भूपन ताहि बखानि ॥ १७२ ॥

उदाहरण—मनहरण दंडक

महाराज सिवराज तेरे वैर देखियतु घन वन ह्वै रहे हरम हबसीन के। भूपन भनत तेरे वैर रामनगर[1] जवारि[2] पर बह-बहे रुधिर नदीन के॥ सरजा समत्थ वीर तेरे वैर वीजापुर वैरी वैयरनि[3] कर चीन्ह न चुरीन के। तेरे रोस देखियत आगरे दिली में बिन सिंदुर के बुंद मुख इंदु जमनीन[4] के॥ १७३॥

---

* पर्य्यायोक्ति का लक्षण टेढ़ी रचना से कथन है। भूषण का उदाहरण बहुत स्पष्ट नहीं है, यद्यपि कष्टकल्पना से अलंकार माना जा सकता है।

१ इस नाम के कई नगर हैं। यह रामनगर कदाचित् रामगिरि एवं रामगढ़ के निकटवाला है। इसीको रामनैर भी कहा है।

२ छं० नं० २०६ देखिए। शिवाजी ने सन् १६७१ में एक रामनगर जीता तथा दूसरे साल अन्य रामनगर तथा जौहर राज्य जीते।

३ स्त्रियों के (पश्चिमी बोली)।

४ इस छंद में मुसलमानों की स्त्रियों के मस्तक पर सिंदूर का अभाव दिखला कर उनकी वैधव्यावस्था व्यंजित की गई है। अब कुछ मुसलमानों के यहाँ व्याह के दिन सिंदूर के पुड़े से सोहाग लिया जाता है; पर तत्पश्चात् उसका व्यवहार नहीं होता। उन दिनों संभव है कि मुसलमानों में भी सधवा स्त्रियाँ सदा सिंदूर लगाती हों।

व्याजस्तुति

लक्षण—दोहा

सुस्तुति में निंदा कढ़ै निंदा में स्तुति होय।
व्याजस्तुति ताको कहत कवि भूषन सब कोय॥ १७४॥

निन्दा में स्तुति—*उदाहरण—कवित्त मनहरण

पीरी पीरी ह्वै तुम देत हौ मँगाय हमैं सुबरन[1] हम सों परखि करि लेत हौ। एक पलही में लाख[2] रुखन सों लेत लोग तुम राजा ह्वै कै लाख दीबे को सचेत हौ॥ भूषन भनत महराज सिवराज बड़े दानी दुनी ऊपर कहाए केहि हेत हौ?। रीझि हँसि हाथी[3] हमैं सब कोऊ देत कहा रीझि हँसि हाथी एक तुम-हियै देत हौ?॥ १७५॥

तू तो रातो दिन जग जागत रहत वेऊ जागत रहत रातो दिन बनरत हैं। भूषन भनत तू विराजै रज भरो वेऊ रज भरे देहिन दरी[4] मैं विचरत हैं॥ तूतौ सूर गन को विदारि बिहरत

---

* स्तुति में निन्दा का उदाहरण नहीं है।

१ सोना अथवा सुंदर वर्ण (अक्षर) अर्थात् छंद के शब्द।

२ लाख जो पलाशादि से निकलती है।

३ हाथ मिलाना। अर्थ हथेली का है।

४ पहाड़ी गुफा।

सुर-मंडलै[1] विदारि वेऊ सुरलोक रत हैं। काहे ते सिवाजी गाजी तेरोई सुजसु होत तोसों अरिवर सरिवरि सी करत हैं ॥ १७६ ॥

आक्षेप

लक्षण—दोहा

पहिले कहिये वात कछु, पुनि ताको प्रतिषेध।
ताहि कहत आच्छेप हैं भूषन सुकवि सुमेध[2] ॥१७७॥

उदाहरण—मालती सवैया

जाय भिरौ न भिरे वचिहौ भनि भूषन भौंसिला भूप सिवा सों। जाय दरीन दुरौ दरिऔ तजिकै दरियाव लँघौ लघुता सों॥ सीछन काज वजीरन को कहैं वोल यों एदिल साहि सभा सों। छूटि गयो तौ गयो परनालो सलाह कि राह गहौ सरजा सों ॥१७८॥

द्वितीय लक्षण—दोहा

जेहि निपेध अभ्यास ही भनि भूपन सो और।
कहत सकल आच्छेप हैं जे कविकुल सिरमौर ॥ १७९ ॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

पूरव के उत्तर के प्रवल पछाहँ हू के सव वादसाहन के गढ़ कोट हरते। भूपन कहैं यों अवरंग सों वजीर जीति लीवे को

---

१ युद्ध में मरे हुए लोग, कहा जाता है कि, सूर्य मंडल भेद कर स्वर्ग सिधारते हैं।

२ अच्छी मेधा अर्थात् बुद्धिवाले।

पुरतगाल सागर उतरते ॥ सरजा सिवा पर पठावत मुहीम काज हजरत हम मरिबे को नहिं डरते । चाकर हैं उजुर कियो न जाय नेक पै कछू दिन उबरते तौ घने काज करते ॥ १८० ॥

विरोध (द्वितीय विषम)

लक्षण—दोहा

द्रव्य क्रिया गुन में जहाँ उपजत काज विरोध ।
ताको कहत विरोध हैं भूषन सुकवि सुबोध ॥१८१ ॥

उदाहरण—मालती सवैया

श्री सरजा सिव तो जस सेत सों होत हैं बैरिन के मुँह कारे। भूषन तेरे अरुन्न प्रताप सफेद लखे कुनबा नृप सारे ॥ साहि तने तव कोप कृसानु ते बैरि गरे सब पानिप वारे । एक अचंभव होत बड़ो तिन ओंठ गहे अरि जात न जारे ॥ १८२ ॥

विरोधाभास

लक्षण—दोहा

जहँ विरोध सो जानिये, साँच विरोध न होय ।
तहाँ विरोधाभास कहि, बरनत हैं सब कोय ॥१८३॥

उदाहरण—मालती सवैया

दच्छिननायक[1] एक तुम्हीं, भुव भामिनि को अनुकूल[2] ह्वै भावैं। दीनदयाल न तो सो दुनी पर म्लेच्छ के दीनहिं मारि मिटावै॥ श्री सिवराज भनै कवि भूपन तेरे सरूप को कोउ न पावै। सूर सुवंस मैं सूरसिरोमनि ह्वैकरि तू कुलचंद कहावैं॥ १८४॥

विभावना

(पहिली विभावना) लक्षण—दोहा

भयो काज बिन हेतुही, बरनतहैं जेहि ठौर।
तहँ विभावना होति है, कवि भूपन सिरमौर॥ १८५॥

उदाहरण—मालती सवैया

वीर बड़े बड़े मीर पठान खरो रजपूतन को गन भारो। भूपन जाय तहाँ सिवराज लियो हरि औरँगजेब को गारो[3]॥ दीन्हों कुज्वाब दिलीपति को अरु कीन्हों वजीरन को मुँह कारो। नायो न माथहि दक्खिननाथ न साथ मैं फौज न हाथ हथ्यारो॥ १८६॥

---

१ वह पति जिसके कई स्त्रियाँ हों और जो सब से बराबर प्रेम रखता हो। अथवा दक्षिण देश का राजा।

२ वह पति जो एक स्त्री-व्रती हो अथवा मुआफ़िक़।

३ गर्व, अभिमान।

पुनः—दोहा

साहितनै सिवराज की, सहज टेव यह ऐन।
अनरीझे दारिद हरै, अनखीझे अरि सैन॥ १८७॥

और दो विभावना

लक्षण—दोहा

जहाँ हेतु पूरन नहीं, उपजत है पर काज। (दूसरी विभावना)
कै अहेतु ते और यों, द्वै विभावना साज॥१८८॥ (चौथी विभावना)

उदाहरण

कारण अपूरे काज की उत्पत्ति। कवित्त मनहरण

दच्छिन को दाबि करि बैठो है सइस्त खान पूना माहिं दूना करि जोर करवार[1] को। हिंदुवानखंभ गढ़पति दलथंभ भनि भूषन भरैया कियो सुजस अपार को॥ मनसबदार चौकीदारन गँजाय महलन में मचाय महाभारत के भार को। तो सो को सिवाजी जेहि दो सौ आदमी सों जित्यो जंग सरदार सौ हजार असवार को॥ १८९॥

अहेतु ते कारज की उत्पत्ति। कवित्त मनहरण

ता दिन अखिल खलभलै खल खलक में जा दिन सिवाजी गाजी नेक करखत हैं। सुनत नगारन अगार तजि अरिन की दारगन भाजत न बार परखत हैं॥ छूटे बार बार छूटे बारन ते

[1] करवाल, तलवार।

लाल देखि भूपन सुकवि बरनत हरखत हैं। क्यों न उतपात होहिं वैरिन के झुंडन में कारे घन उमड़ि अँगारे बरखत हैं ॥१९०॥

और विभावना

(छठी विभावना) लक्षण—दोहा

जहाँ प्रगट भूपन भनत हेतु काज ते होय।
सो विभावना औरऊ कहत सयाने लोय ॥ १९१ ॥

उदाहरण—दोहा

अचरज भूपन मन बढ़्यो, श्री सिवराज खुमान।
तव कृपान धुव धूम ते, भयो प्रताप कृसान ॥ १९२ ॥

पुनः—कवित्त मनहरण

साहि तनै सिव ! तेरो सुनत पुनीत नाम धाम धाम सबही को पातक कटत है। तेरो जस काज आज सरजा निहारि कविमन भोज विक्रम कथा ते उचटत है॥ भूपन भनत तेरो दान संकलप जल अचरज सकल मही में लपटत है। और नदी नदन ते कोकनद होत तेरो कर कोकनद नदी नद प्रगटत है ॥ १९३ ॥

विशेषोक्ति[1]

लक्षण—दोहा

जहाँ हेतु समरथ भयहु प्रगट होत नहिं काज।
तहाँ विसेसोकति कहत भूपन कविसिरताज ॥ १९४ ॥

---

1. विशेषोक्ति में भी कारण की पूर्णता तथा असंभवनीयता दोनों का आभास मात्र है, वास्तविकता नहीं। विरोधाभास में कार्य्य कारण दोनों बाधक बाध्य हैं। विभावना में कार्य्य बाध्य है, तथा विशेषोक्ति में कारण बाध्य।

उदाहरण—मालती सवैया

दै दस पाँच रुपैयन को जग कोऊ नरेस उदार कहायो। कोटिन दान सिवा सरजा के सिपाहिन साहिन को बिचलायो॥ भूषन कोऊ गरीबन सों भिरि भीमहुँ ते बलवंत गनायो। दौलति इंद्र समान बढ़ी पै खुमान के नेक गुमान न आयो॥ १९५॥

असंभव

लक्षण—दोहा

अनहूवे की बात कछु प्रगट भई सी जानि।
तहाँ असंभव बरनिए सोई नाम बखानि॥ १९६॥

उदाहरण—दोहा

औरँग यों पछितात मैं करतो जतन अनेक।
सिवा लेइगो दुरग सब को जानै निसि एक॥ १९७॥

अन्यच्च—कवित्त मनहरण

जसन के रोज यों जलूस गहि बैठो जोव इंद्र आवै सोऊ लागै औरँग की परजा। भूषन भनत तहाँ सरजा सिवाजी गाजी[1] तिनको तुजुक[2] देखि नेकहू न लरजा॥ ठान्यो न

---

१ मुसलमानों में गाजी वह कहलाता था जो एक काफिर को मार डाले और वह बड़ी सन्मान की पदवी थी। इसी सन्मान के कारण भूषणजी कदाचित् शिवाजी के नाम के साथ अनेक ठौर गाजी लगा दिया करते थे, नहीं तो सच पूछिए तो इसे अशुद्ध ही समझना चाहिए। गर्जनेवाला भी अर्थ हो सकता है। संभव है, भूषण मुसलमानों को मारनेवाले हिन्दू को गाजी कहते हों। २ शान, महत्व।

सलाम भान्यो साहि को इलामै भूग धाम के न मान्यो रामसिंह हू को बरजा। जासों बैर करि भूप बचै न दिगन्त ताके दंत तोरि तखत तरे ते आयो सरजा ॥ १९८॥

असंगति (प्रथम)

लक्षण—दोहा

हेतु अनत ही होय जहँ काज अनत ही होय।
ताहि असंगति कहत हैं भूषन सुमति समोय ॥ १९९ ॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

महाराज सिवराज चढ़त तुरंग पर ग्रीवा जाति नै करि गनीम अतिबल की। भूषन चलत सरजा की सैन भूमि पर छाती दरकति है खरी अखिल खल की ॥ कियो दौरि घाव उमरावन अमीरन पै गई कटि नाक सिगरेई दिली-दल की। सूरत जराई कियो दाहु पातसाहु उर स्याही जाय सब पातसाही मुख झलकी ॥ २०० ॥

---

१ पलान, इश्तिहार, (यहाँ पर) हुक्म।

२ ये जयपुराधीश महाराजा मिर्जा-जयसिंह के पुत्र थे। जयसिंह के साथ जब शिवाजी दिल्ली को गए, तब येही दिल्लीश्वर की ओर से उनको अगवानी को आए थे और उन्हें दिल्ली से निकल भागने में इन्होंने भी छिपकर सहायता दी थी।

३ पहले सन् १६६४ में और फिर १६७० में शिवाजी ने सूरत शहर को लूटा था। दोनों बार करोड़ों का माल इनके हाथ लगा और बादशाह की बड़ी बदनामी हुई। वहाँ के केवल मुसलमानों को इन्होंने लूटा था।

असंगति (द्वितीय)

लक्षण—दोहा

आन ठौर करनीय सो करै और ही ठौर।
ताहि असंगति और कवि भूपन कहत सगौर ॥ २०१ ॥

उदाहरण—मनहरण दंडक

भूपति सिवाजी तेरी धाक सौं सिपाहिन के राजा पातसाहिन के मन ते अहंगली[1]। भौंसिला अभंग तू तौ जुरतो जहाँई जंग तेरी एक फते होति मानो सदा संग ली ॥ साहि के सपूत पुहुमी के पुरहूत कवि भूपन भनत तेरी खरग उदंगली[2]। सत्रुन की सुकुमारी थहरानी सुंदरी औ सत्रु के अगारन में राखे जंतु जंगली ॥ २०२ ॥

असंगति (तृतीय)

लक्षण—दोहा

करन लगै औरै कछू करै औरई काज।
तहाँ असंगति होति है कहि भूपन कविराज ॥ २०३ ॥

उदाहरण—मालती सवैया

साहितनै सरजा सिव के गुन नेकहु भापि सक्यो न प्रवीनो। उद्यत होत कछू करिबे को करै कछु वीर महा रस

---

१ अहंकार गल गया। २ उद्दंड।

भीनो ॥ घाँते गयो चकत्ते[1] सुख देन को गोसलखाने[2] गयो दुख दीनो। जाय दिली दरगाह सुसाह को भूषन वैरि बनाय हो लीनो ॥ २०४ ॥

विषम

लक्षण—दोहा

कहाँ बात यह कहँ वहै, यों जहँ करत बखान।
तहाँ विषम भूषन कहत, भूषन सुकवि सुजान ॥२०५॥

उदाहरण—मालती सवैया

जावलि[3] बार सिंगारपुरी[4] औ जवारि[5] को राम के नैरि[6] को गाजी। भूषन भौंसिला भूपति ते सब दूरि किए करि कीरति

---

१ चकत्ता अर्थात् चगताईखाँ के वंशज औरंगजेब को।

२ गुसलखाने की घटना भूमिका में देखिए।

३ चंद्रराव मोरे जावली का राजा था। उसे जीतकर शिवाजी ने सन् १६५५ ई० में राज्य छीन लिया। इसी स्थान पर शिवाजी ने सन् १६५९ में अफ़ज़लखाँ को मारा (छं० नं० ६३ नोट देखिए)।

४ कोंकण देश में सतारा शहर के पश्चिम-दक्षिण सिंगारपुर है। इसे १६६१ ई० में शिवाजी ने अपने अधिकृत किया।

५ रावर के निकट एक छोटा सा स्थान है। इसे जयपुर (राजपूताने वाला नहीं) भी कहते हैं। शायद यह जौहर हो जिसे शिवाजी ने १६७८ में जीता।

६ छंद नं० १७३ का नोट देखिए।

ताजी ॥ बैर कियो सिवजी सों खवासखाँ[1] डौंड़ियै सैन बिजैपुर[2] बाजी। बापुरो एदिल साहि कहाँ कहाँ दिल्लि को दामनगीर सिवाजी ? ॥ २०६ ॥

लै[3] परनालो सिवा सरजा करनाटक[4] लौं सब देस बिबूँचे। बैरिन के भगे बालक बृंद कहै कवि भूषन दूरि पहूँचे ॥ नाँघत नाँघत घोर घने बन हारि परे यों कटे मनो कूँचे। राजकुमार कहाँ सुकुमार कहाँ बिकरार पहार वे ऊँचे ? ॥ २०७ ॥

---

१ सन् १६७३ की घटना है।

२ यह बीजापुर के प्रधान मंत्री खान मुहम्मद का लड़का था और स्वयं मंत्री भी था। जब प्रसिद्ध बादशाह अलीआदिलशाह (एदिल शाहो) मृतशय्या पर था, तब उसने खवासखाँ को अपने नाबालिग पुत्र सुल्तान सिकंदर का वली व पालक (Regent and guardian) सन् १६७२ में बनाया। शिवाजी से इसने कई समर किए पर यह स्वयं युद्ध में न गया। सन् १६७५ में यह छिपकर औरंगजेब से मिल गया और इसी कारण वहलोलखाँ (छंद नं० ९६ का नोट देखिए) इत्यादि के इशारे पर मारा गया।

३ छन्द नम्बर १०७ का नोट देखिए। यह छन्द सन् १६५९ के परनाला विजय तथा १६६१-६२ के करनाटक विद्रोह का कथन करता है। पश्चिमी करनाटक में शिवा जी ने जो गड़बड़ मचाई थी, उसका भी हवाला इस छन्द में माना जा सकता है। छन्द नं० ११७ का नोट देखिए।

४ छंद नं० ११७ का नोट देखिए।

सम

लक्षण—दोहा

जहाँ दुहूँ अनुरूप को करिए उचित बखान ।
सम भूषन तासों कहत भूषन सकल सुजान ॥२०८॥

उदाहरण—मालती सवैया

पंज हजारिन[1] बीच खड़ा किया मैं उसका कुछ भेद न पाया । भूषन यों कहि औरँगजेब उजीरन सों बेहिसाब रिसाया । कम्मर की न कटारी दई इसलाम ने गोसलखाना बचाया । जोर सिवा करता अनरत्थ भली भइ हत्थ हथ्यार न आया ॥२०९॥

पुनः—दोहा

कछु न भयो केतो गयो, हार्यो सकल सिपाह ।
भली करे सिवराज सों, औरँग करै सलाह ॥२१०॥

विचित्र

लक्षण—दोहा

जहाँ करत हैं जतन फल, चित्त चाहि विपरीत ।
भूपन ताहि विचित्र कहि, बरनत सुकवि विनीत ॥२११॥

---

१ पांच हजार सेना जिस सरदार के अधिकार में हो । शिवाजी औरंगजेब के दरबार में पंजहजारियों में खड़े किए गये थे जिस पर वे बिगड़ उठे थे । पहले वादा प्रथम श्रेणी में स्थान मिलने का हुआ था, किन्तु पीछे अपनी मामी (शाइस्ताखाँ की बेगम) के कहने पर औरंगजेब ने पहला हुक्म रद कर के शिवाजी को तृतीय श्रेणी में खड़ा किया ।

उदाहरण—दोहा

तैं जयसिंहहिं[1] गढ़ दिये, सिव सरजा जस हेत।
लीन्हें कैयो वरस मैं, वार न लागी देत ॥२१२॥

अन्यच्च—कवित्त मनहरण

वेदर[2] कल्यान[3] दै परेड़ा[4] आदि कोट साहि एदिल गँवाय

---

१ ये जयपुर के महाराजा थे और औरंगजेब ने इन्हें "मिर्ज़ा" की उपाधि दी थी जिससे इनको "मिर्ज़ा जयसिंह" अथवा "मिर्ज़ा राजा" भी कहते हैं। ये सन् १६२१ ई० में गद्दी पर बैठे थे। (इनके बहुत दिनों बाद सवाई जयसिंह १६९९ में गद्दी पर बैठे और उन्होंने जयपुर शहर बसाया)। मिर्ज़ा जयसिंह और दिलेर खाँ सन् १६६५ में शिवाजी से लड़ने भेजे गए। जयसिंह ने सिंहगढ़ को घेरा और दिलेर खाँ ने पुरंधर को, और शिवाजी ने जयसिंह से दब कर सन्धि की जिससे उन्हों (शिवाजी) ने मुगलों के जितने किले जीते थे, वे सब और निज़ामशाही बादशाहों से जीते हुए ३२ किलों में से २० किले मिर्ज़ा राजा को भेंट किये और शिवाजी स्वयं मार्च १६६६ में आगरे गए, पर दिसम्बर में निकल आए। सन् १६६७ में मिर्ज़ा राजा का देहांत हुआ। ये शश (छः) हजारी मनसबदार थे।

२ बहमनीवंशज "बादशाहों" की राजधानी। इसे तथा कल्यानी को १६५७ में औरंगजेब ने जीता। पीछे यह शिवाजी को मिला।

३ कल्हान का सूबा कोंकन में था। पहले यह अहमदनगर के निज़ामशाही "बादशाहों" का था, पर सन् १६३६ में बीजापूर के अधिकार में आया और सन् १६४८ में शिवाजी ने इसे बीजापुर के बादशाह आदिलशाह (एदिल) से जीत लिया।

४ इस (परेड़ा) नाम का कोई किला या स्थान इतिहास में नहीं मिलता, हाँ

है नवाय निज सीस को। भूषन भनत भागनगरी[1] कुतुब साही[2] दै करि गँवायो रामगिरि[3] से गिरीस को॥ भौंसिला भुवाल साहि तनै गढ़पाल दिन दोऊ ना लगाए गढ़ लेत पचतीस[4] को। सरजा सिवाजी जयसाह मिरजा को लेत नौ गुनी बड़ाई[5] गढ़ दीन्हें हैं दिलीस को॥ २१३॥*

एक किला परेंदा नामक था जिसका अपभ्रंश परेड़ा जान पड़ता है। यह भी पहले अहमदनगर का था और फिर आदिलशाह का हो गया जिससे सन् १६६० में इसे मुगलों ने जीता जिनसे दूसरे ही साल शिवाजी ने इसे छीन लिया।

१ छंद नं० ११७ का नोट देखिए। शिवाजी ने यहाँ कर वसूल किया पर अधिकार नहीं पाया।

२ कुतुबशाह। छंद नं० ६२ का नोट देखिए।

३ इस नाम का एक परगना था जिसमें इसी (रामगिरि) नाम की एक पहाड़ी है और इसीके पास रामगढ़ अथवा रामनेरि का किला भी था। यह गोलकुंडा की रियासत में था। छन्द नं० १७३ देखिए।

४ शायद पैंतीस किले शिवाजी ने मिर्जा जयसिंह को भेंट किए थे।

५ अर्थात् आपने जयसिंह को दब कर किले नहीं दिए वरन् हिंदू रुधिर बचाने के ठौर अपनी हार मान कर उन्हें गढ़ दिए जिससे आपकी बड़ाई हुई और यश बढ़ा। छंद के पहलेवाले दोहे में भूषणजी ने यह शिवाजी के यश बढ़ाने का कारण कहा है पर बड़ी ही चतुराई से इसे "विचित्र" अलंकार के उदाहरण में लिखा।

* विचित्र के दोनों उदाहरण तृतीय असंगति से भी कुछ कुछ मिल जाते हैं। असंगति में कार्य का पूरा होना कहा जाता है किन्तु विचित्र में नहीं।

प्रहर्षण

लक्षण—दोहा

जहँ मन वांछित अरथ ते प्रापति कछु अधिकाय।
तहाँ प्रहरषन कहत हैं भूषन जे कविराय[1] ॥२१४॥

उदाहरण—मनहरण दंडक।

साहि तनै सरजा कि कीरति सों चारो ओर चाँदनी वितान छिति छोर छाइयतु है। भूषन भनत ऐसो भूप भौंसिला है जाको द्वार भिच्छुकन सों सदाई भाइयतु है॥ महादानि सिवाजी खुमान या जहान पर दान के प्रमान जाके यों गनाइयतु है। रजत की हौंस किए हेम पाइयतु जासों हयन की हौंस किए हाथी पाइयतु है॥ २१५॥

विषादन *

लक्षण—दोहा

जहँ चितचाहे काज ते उपजत काज विरुद्ध।
ताहि विषादन कहत हैं भूषण बुद्धि विसुद्ध॥ २१६॥

उदाहरण—मालती सवैया

दारहिं[2] †दारि मुरादहि[3] मारि कै संगर साह[4] सुजै

---

१ वास्तव में यहाँ दूसरे प्रहर्षण के लक्षण और उदाहरण हैं। भूषन ने पहला और तीसरा प्रहर्षण नहीं लिखा है।

२, ३, ४, ये तीनों औरंगजेब के भाई थे। इनका हाल प्रसिद्ध ही है कि इन्हें मारकर औरंगजेब सिंहासन पर बैठा।

* भूषन का विषादन तीसरे विषम से मिल जाता है; किन्तु इन्होंने विषम एक ही कहा है, सो गड़बड़ा नहीं पड़ती।

† दूलो देकर।

बिचलायो। कै कर में सब दिल्लि कि दौलति औरहु देस घने अपनायो॥ बैर कियो सरजा सिव सों यह नौरँग के न भयो मन भायो। फौज पठाइ हुती गढ़ लेन को गाँठिहु¹ के गढ़ कोट गँवायो॥ २१७॥

अपरंच—दोहा

महाराज सिवराज तव बैरी तजि रस रुद्र।
बचिबे को सागर तिरे बूड़े सोक समुद्र॥ २१८॥

अधिक

लक्षण-दोहा

जहाँ बड़े आधार ते बरनत बढ़ि आधेय।
ताहि अधिक भूषन कहत जानि सुग्रंथ प्रमेय॥ २१९॥

उदाहरण—दोहा

सिव सरजा तव हाथ को नहिं बखान करि जात।
जाको बासी सुजस सब त्रिभुवन में न समात॥ २२०॥

पुनः—कवित्त मनहरण

सहज सलील सील जलद से नील डील पब्बय से पील देत नाहिँ अकुलात है। भूषन भनत महाराज सिवराज देत कंचन को ढेरु जो सुमेरु सो लखात है॥ सरजा सवाई कासों करि

---

¹ गाँठ के=अपने भी। धोती की मुर्री में लोग रुपए पैसे रख लेते हैं, उससे यह मुहाविरा निकला है।

कविताई तव हाथ की वड़ाई को बखान करि जात है ? जाको जस टंक सात दीप नव खंड महि मंडल की कहा ब्रहमंड ना समात है ॥ २२१ ॥

अन्योन्य

लक्षण—दोहा

अन्योन्या उपकार जहँ यह वरनन ठहराय ।
ताहि अन्योन्या कहत हैं अलंकार कविराय ॥ २२२ ॥

उदाहरण—मालती सवैया

तो कर सौं छिति छाजत दान है दान हू सौं अति तो कर छाजै । तैंही गुनी की वड़ाई सजै अरु तेरी वड़ाई गुनी सब साजै ॥ भूपन तोहि सौं राज विराजत राज सौं तू सिवराज विराजै । तो वल सौं गढ़ कोट गजैं अरु तू गढ़ कोटन के वल गाजै ॥ २२३ ॥

विशेष

लक्षण—दोहा

वरनत हैं आधेय को जहँ विनही आधार ।
ताहि विसेप वखानहीं भूपन कवि सरदार ॥ २२४ ॥

उदाहरण—दोहा

सिव सरजा सौं जंग जुरि चंदावत[1] रजवंत ।

---

१ अमरसिंह चंदावत । छंद नं० १७ का नोट देखिए :

राव अमर[1] गो अमरपुर समर रही रज तंत ॥२२५॥

पुनः—कवित्त मनहरण ।

सिवाजी खुमान सलहेरि मैं दिलीस दल कीन्हों कतलाम करवाल[2] गहि कर मैं। सुभट सराहे चंदावत कछवाहे मुगलौ पठान ढाहे फरकत परे फर मैं॥ भूपन भनत भौंसिला के भट उद्भट जीति घर आए धाक फैली घर घर मैं। मारु के करैया अरि अमर पुरे गे तऊ अजौं मारु मारु सोर होत है समर मैं ॥२२६॥

व्याघात

लक्षण—दोहा

और काज करता जहाँ करै औरई काज ।
ताहि कहत व्याघात है, भूपन कवि सिरताज ॥२२७॥

उदाहरण—मालती सवैया

ब्रह्म रचै पुरुपोत्तम पोसत संकर सृष्टि सँहारनहारे। तू

---

१ अमर सिंह राव तो अमरपुर चला गया पर उसकी राज्यश्री (यहाँ पर वीरता) निराधार युद्धस्थल में रह गई ।

२ "हाथ में तलवार लेकर" शिवाजी इस युद्ध में नहीं लड़े थे। वे तो इस युद्ध में थे ही नहीं और उनके मंत्री मोरोपंत नामक ब्राह्मण ने यह युद्ध जीता था। हाँ "लड़ें सिपाही और नाम हो सरदार का ।" इसका हाल छं० नं० ९७ के नोट में देखिए ।

हरि को अवतार सिवा नृप काज सँवारे सवै हरिवारे ॥ भूषन यों अवनी यवनी कहै "कोऊ कहै सरजा सों हहारे। तू सबको प्रतिपालनहार विचारे भतार न मारु हमारे" ॥२२८॥

अन्यच्च—कवित्त मनहरण

कसत मैं वार वार वैसोई बुलंद होत वैसोई सरस रूप समर भरत है। भूषन भनत महराज सिवराज मनि, सघन सदाई जस फूलन धरत है॥ वरछी कृपान गोली तीर केते मांन, जोरावर गोला वान तिनहू को निदरत है। तेरो करवाल भयो जगत को ढाल, अव सोई हाल[1] म्लेच्छन के काल को करत है ॥२२९॥

(कारण माला) गुम्फ

लक्षण—दोहा

पूरब पूरब हेतु कै उत्तर उत्तर हेतु।
या विधि धारावरनिए गुम्फ कहावत नेतु ॥२३०॥

उदाहरण—मालती सवैया

शंकर की किरपा सरजा पर जोर वढ़ी कवि भूषन गाई। ता किरपा सों सुबुद्धि बड़ी भुव भौंसिला साहि तनै की

---

१ इस समय।

सवाई ॥ राज सुबुद्धि सों दान बढ्यो अरु दान सों पुन्य समूह सदाई । पुन्य सो बाढ़्यो सिवाजि खुमान खुमान सों बाढ़ी जहान भलाई ॥ २३१ ॥

पुनः—दोहा

सुजस दान अरु दान धन धन उपजै किरवान ।
सो जग में जाहिर करी सरजा सिवा खुमान ॥ २३२ ॥

एकावली[1]

लक्षण—दोहा

प्रथम बरनि जहँ छोड़िए जहाँ अरथ की पाँति ।
बरनत एकावलि अहै कवि भूपन यहि भाँति ॥ २३३ ॥

उदाहरण—हरिगीतिका छंद

तिहुँ भुवन में भूपन भनै नरलोक पुन्य सुसाज में । नरलोक[2] में तीरथ लसैं महि तीरथों कि समाज में ॥ महि में बड़ी महिमा भली महिमैं[3] महारज लाज में । रज लाज राजत आजु है मह-राज श्री सिवराज में ॥ २३४ ॥

---

१ कारणमाला में कारण कार्य्य का संबंध होता है, पर एकावली में नहीं होता, तथा मालादीपक में दीपक का संबंध होता है सो भी एकावली में नहीं होता।

२ नरलोक में तीरथों की समाज में महि (एक) तीरथ लसै ।

३ महिमैं (महिमाहीं) में रजलाज (बड़ी) । यहाँ दूरान्वयी दूषण है ।

मालादीपक एवं सार *

लक्षण—दोहा

दीपक एकावलि मिले मालादीपक होय।
उत्तर उत्तर उतकरष सार कहत हैं सोय॥ २३५॥

उदाहरण

माला दीपक—कवित्त मनहरण

मन कवि भूपन को सिव की भगति जीत्यो सिव की भगति जीत्यो साधु जन सेवा ने। साधु जन जीते या कठिन कलिकाल कलिकाल महावीर महाराज महिमेवा ने[1]॥ जगत में जीते महावीर महाराजन ते महाराज बावन हू पातसाह लेवा ने। पातसाह बावनौ दिली के पातसाह दिल्लीपति पातसाहै जीत्यो हिंदुपति सेवा ने॥ २३६॥

सार यथा—मालती सवैया

आदि बड़ी रचना है विरंचि कि जामैं रह्यौ रचि जीव[2] जड़ो है। ता रचना महँ जीव बड़ो अति काहे ते ता उर ज्ञान गड़ो है॥ जीवन मैं नर लोग बड़े कवि भूषन भाषत पैज अड़ो है। है नर लोग मैं राज बड़ो सब राजन में सिवराज बड़ो है॥ २३७॥

---

* यहाँ धर्म अलग अलग नहीं कहना चाहिये। पृथक् पृथक् से दीपक न होकर यहाँ आवृत्ति दीपक हो गया है। दीपक में धर्म एकही बार कहा जाता है। दीपक में सादृश्य का सम्पर्क होता है किन्तु मालादीपक में अभाव।

१ महिमावान्।

२ जीवधारी और जड़ पदार्थ।

यथासंख्य

लक्षण—दोहा

क्रम सों कहि तिनके अरथ क्रम सों बहुरि मिलाय।
यथासंख्य ताको कहैं भूषन जे कविराय ॥ २३८ ॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

जेई चहौ तेई गहौ सरजा सिवाजी देस संके दल दुवन के जे वे बड़े उर के। भूषन भनत भौंसिला सों अब सनमुख कोऊ ना लरैया है धरैया धीर धुर के ॥ अफजल[1] खान रुसामे[2] जमान फत्ते[3] खान खूटे कूटे लूटे ए उजीर बिजेपुर के। अमर[4] सुजान मोहकम[5] इखलास[6] खान खाँड़े छाँड़े डाँड़े उमराय दिलीसुर के ॥ २३९ ॥

---

१ छंद नं० ६३ का नोट देखिए।

२ सन् १६५९ के दिसम्बर में इसको शिवाजी से परनाले के निकट मुठभेड़ हुई और शिवाजी ने इसकी सेना का बड़ा ही भयंकर क़तलआम किया तथा इसे कृष्णानदी के उस पार तक खदेड़ा। इसका शुद्ध नाम रुस्तमें जामा था। भीतर से यह शिवाजी से मिला हुआ था।

३ सन् १६७० में शिवाजी से जंजीरा के किले में लड़ा। यह शिवाजी से मिल गया और इस कारण इसके तीन साथियों ने इसे बंदी कर लड़ाई जारी रक्खी।

४ छं० नं० ९७ का नोट देखिए।

५ मोहकमसिंह अमरसिंह का लड़का था। सन् १६७१ में सलहेरि के युद्ध में मरहठों ने इसे बंदी करके छोड़ दिया तथा इसके पिता अमरसिंह को मार डाला।

६ किसी किसी प्रति में इखलासखाँ की जगह में बहलोलखाँ पाठ है, किन्तु कथन

पर्य्याय

लक्षण—दोहा

एक अनेकन में रहै एकहि में कि अनेक।
ताहि कहत परयाय हैं भूषण सुकवि विवेक ॥ २४० ॥

अनेकों में एक—उदाहरण—दोहा

जीति रही अवरंग मैं सबै छत्रपति छाँड़ि।
तजि ताहू कौ अब रही शिवसरजा कर माँड़ि ॥२४१॥

पुनः—कवित्त मनहरण

कोट गढ़ दै कै माल मुलुक मैं बीजापुरी गोलकुंडा वारो पीछे ही को सरकतु है। भूषन भनत भौंसिला भुवाल भुजबल रेवा ही[1] के पार अवरंग हरकतु है॥ पेसकसैं[2] भेजत इरान[3] फिरगान[4] पात उनहूँ के उर याकी धाक धरकतु है। साहितनै

सलहेरि पर हारे हुए दिल्ली के सरदारों का है। इखलासखाँ ऐसा सरदार था। बहलोल खाँ बीजापूर का सरदार था और सलहेरि में लड़ा भी न था।

१ नर्मदा नदी के उत्तर ओर ही।

२ पेशकश, नज़र, खिराज।

३ ईरान, फ़ारस।

४ योरपवाले जैसे अंगरेज़, पोर्चुगीज़ इत्यादि। ये युरोपियन सौदागर शिवाजी की लूट से बचने के लिये उन्हें वार्षिक कर भेजते थे। यह बात सन् १६६२ से प्रारम्भ हुई, जिस सन् में शिवाजी ने पुर्तगालवालों की ६००० सेना काट डाली थी। बाबर के पिता का राज्य भी फिरंगाना कहलाता था।

सिवाजी खुमान या जहान पर कौन पातसाह के न हिए खरकतु है ? ॥ २४२ ॥

एक में अनेक

अगर के धूप धूम उठत जहाँई तहाँ उठत बगूरे अब अति ही अमाप हैं। जहाँई कलावँत अलापैं मधुर स्वर तहाँई भूत-प्रेत अब करत विलाप हैं ॥ भूषन सिवाजी सरजा के बैर बैरिन के डेरन में परे मनो काहु के सराप हैं। बाजत हे जिन महलन में मृदंग तहाँ गाजत मतंग सिंह बाघ दीह दाप हैं ॥ २४३ ॥

परिवृत्ति

लक्षण—दोहा

एक बात को दै जहाँ आन बात को लेत।
ताहि कहत परिवृत्ति हैं भूषन सुकवि सचेत ॥ २४४ ॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

दच्छिन धरन धीर धरन खुमान, गढ़ लेत गढ़ धरन सों धरम दुवारु दै। साहि नरनाह को सपूत महाबाहु लेत मुलुक महान छीनि साहिन को मारु दै ॥ संगर में सरजा सिवाजी अरि सैनन को सारु हरि लेत हिंदुवान सिर सारु दै । भूषन भुसिल जय जस को पहारु लेत हरजू को हारु हरगन को अहारु दै ॥ २४५ ॥

---

१ सन् १६४७ में शिवाजी ने तीन भाइयों का आपसी झगड़ा तै करने को जाकर पुरंदर किला प्राप्त किया था। इसी से धर्म द्वार देकर गढ़ लेना कहा जा सकता है। यह भी अर्थ होता है कि धर्मराज का द्वार (मृत्यु) देकर गढ़ लेते हैं।

परिसंख्या ❀

लक्षण—दोहा

अनत वरजि कछु वस्तु जहँ बरनत एकहि ठौर।
तेहि परिसंख्या कहत हैं भूषन कवि दिलदौर ॥ २४६ ॥

उदाहरण—मनहरण दंडक

अति मतवारे जहाँ दुरदै निहारियत तुरगन ही में चंचलाई परकीति है। भूषन भनत जहाँ पर लगैं वानन में कोक पच्छिनहि माहिं बिछुरन रीति हैं॥ गुनि गन चोर जहाँ एक चित्त ही के, लोक बंधैं जहाँ एक सरजा की गुन-प्रीति है। कंप[1] कदली मैं वारि बुंद बदली मैं सिवराज अदली के राज मैं यों राजनीति है॥ २४७॥

विकल्प

लक्षण—दोहा

कै वह कै यह कीजिए जहँ कहनावति होय।
ताहि विकल्प बखानहीं भूषन कवि सब कोय ॥ २४८ ॥

❀ पर्यस्तापन्हुति में स्थापना पहलेही रूप में होती हैं, किन्तु परिसंख्या में कहने भर को वही रूप होकर भी वास्तविक प्रयोजन वदल जाता है। जैसे कदली में कम्प स्वभावज है, किन्तु मनुष्यों मे दोष रूप भयादि के कारण से।

1 इसका दूसरा पाठ यों है "कंप............सिवराज अदली मैं अदली का राजनीति है"।

उदाहरण[1]—मालती सवैया

मोरँग[2] जाहु कि जाहु कुमाऊँ[3] सिरीनगरै[4] कि कवित्त बनाए। बांधव[5] जाहु कि जाहु अमेरि[6] कि जोधपुरै कि चितौरहि[7] धाए॥ जाहु कुतुब्ब कि एदिल पै कि दिलीसहु पै किन जाहु बोलाए। भूषन गाय फिरौ महि मैं बनिहै चित चाह सिवाहि रिझाए॥ २४९॥

---

१ ये दोनों ही उदाहरण (छं० नं० २४९, २५०) अशुद्ध हैं। विकल्प में संदेह ही रहना चाहिए, पर इन दोनों छंदों में अंत में संदेह हटा कर एक बात निश्चयात्मक कह दी गई है। कदाचित् अपने नायक की पूर्ण प्रशंसा ही के लिये भूषणजी ने अपने ठीक उदाहरण अंत में जान बूझ कर अशुद्ध कर दिए हों, पर यह अन्य प्रकार से भी संभव था।

२ इस नाम की रियासत कूचविहार के पश्चिम और पुर्निया के उत्तर में थी। इसे मुगलों ने सन् १६६४ तथा १६७६ में जीता। यह पहाड़ी राज्य था।

३ कमाऊँ (गढ़वाल) की रियासत में भूषणजी गए थे। इस विषय में भूमिका देखिए। ४ काश्मीर की राजधानी।

५ बांधव की रियासत। (रीवाँ)

६ जयपुर में इस नाम का प्रसिद्ध किला है जहाँ शक्ति शिलामयी देवी है। "जय जय शक्ति शिलामयी जय जय गढ़ आमेर। जय जयपुर सुरपुर सरिस जो जाहिर चहुँ फेर"॥

७ चित्तौर अर्थात् मेवाड़ अथवा उदयपुर।

पुनः मालती सवैया

देशन देशन नारि नरेसन भूषन यों सिख देहिं दया सों। मंगन ह्वै करि, दंत गहौ तिन, कंत तुम्हैं हैं अनंत महा सों[1]॥ कोट गहौ कि गहौ वन ओट कि फौज की जोट सजौ प्रभुता सों। और करौ किन कोटिक राह सलाह विना बचिहौ न सिवासों ॥२५०॥

समाधि

लक्षण—दोहा

और हेतु मिलि कै जहाँ होत सुगम अति काज।
ताहि समाधि बखानहीं भूषन जे कविराज॥ २५१ ॥

उदाहरण—मालती सवैया

वैर कियो सिव चाहत हो तब लौं अरि बाह्यो कटार कठैठो। योहीं मलिच्छहि छाँड़ै नहीं सरजा मन तापर रोस मैं पैठो॥ भूषन क्यों अफजल्ल बचै अठपाव[2] कै सिंह को पाँव उमैठो। वीछू के घाय धुक्योई[3] धरक्क ह्वै तो लगि धाय धराधर वैठो॥ २५२॥

---

१ सौंहें, कसम।

२ उपद्रव, शरारत। "करौ तुम आठपाव पाँधे हम गारो गाँव में" (रघुनाथ—रसिकमोहन)। बुन्देलखंड में इसे अठाव कहते हैं।

३ धुकधुकाया, कलेजा काँपा ।

समुच्चय

लक्षण—दोहा

एक बारही जहँ भयो बहु काजन को धंध।
ताहि समुच्चय कहत हैं भूपन जे मतिबंध ॥ २५३ ॥

उदाहरण—मालती सवैया

माँगि पठायो सिवा कछु देस वजीर अजानन बोल गहे ना। दौरि लियो सरजै परनालो[1] यों भूपन जो दिन दोय लगे ना ॥ धाक सों खाक बिजैपुर भो मुख आय गो खान[2] खवास के फेना[3]। भै भरकी करकी धरकी दरकी दिल एदिल साहि कि सेना ॥ २५४ ॥

द्वितीय समुच्चय

लक्षण[4]-दोहा

वस्तु अनेकन को जहाँ बरनत एकहि ठौर।
दुतिय समुच्चय ताहि को कहि भूपन कविमौर ॥ २५५ ॥

---

१ छं० नं० १०७ का नोट देखिए। मार्च सन् १६७३ की घटना है।

२ छं० नं० २०६ का नोट देखिए।

३ भयानक रसपूर्ण।

४ अन्य कवि इसका लक्षण यों देते हैं—"द्वितीय समुच्चय में एक काज को कई कारण पुष्ट करते हैं।" प्रथम समुच्चय में कई क्रियायें एकही भाव को साथही पुष्ट करती हैं। तथा दूसरे में बहुत से ऐसे कारण मिलकर एकही कार्य सम्पादित करते हैं, जिन कारणों में प्रत्येक प्रधान रहता है और यह प्रकट नहीं होता कि उनमें से किससे कार्य सिद्धि हुई।

उदाहरण—मालती सवैया

सुंदरता गुरुता प्रभुता भनि भूपन होत है आदर जामैं। सज्जनता औ दयालुता दीनता कोमलता झलकै परजा मैं ॥ दान कृपानहु को करिबो करिबो अभै दीनन को वर जामैं। साहन सों रन टेक विवेक इते गुन एक सिवा सरजा मैं ॥ २५६ ॥

प्रत्यनीक

लक्षण—दोहा

जहँ जोरावर सत्रु के पच्छी पै कर जोर।
प्रत्यनीक तासों कहैं भूपन वुद्धि अमोर ॥ २५७ ॥

उदाहरण—अलसा सवैया[1]

लाज धरौ सिवजू सों लरौ सब सैयद सेख पठान पठाय कै। भूपन ह्याँ गढ़ कोटन हारे उहाँ तुम क्यों मठ[2] तोरे रिसाय

---

[1] अलसा सवैया नवीन मत की है। इसमें पहले सात भगण फिर एक रगण (रग-नंत भ मुनि) होते हैं। भगण के तीन अक्षरों में पहला गुरु और शेष दो लघु होते हैं तथा रगण के तीन अक्षरों में पहला व तीसरा गुरु होता है और दूसरा लघु। इसका रूप यों है—ऽ॥ऽ॥ऽ॥ऽ॥ऽ॥ऽ॥ऽ॥ऽ।ऽ

[2] औरंगजेब ने हिंदुओं को सताने के लिये अनेक मंदिर तुड़वा दिए, यहाँ तक कि काशीजी में श्री विश्वनाथजी तक का मन्दिर तुड़वा कर उसकी एक ओर की दीवार पर मसजिद बनवा दी जो अब तक जैसी की तैसी विद्यमान है। न जाने इसमें हिंदुओं की क्या वास्तविक हानि हो गई, पर हाँ, इतना अवश्य हुआ कि ऐसी ही बातों से मुगलों के ऐसे सुदृढ़ राज्य की नीव हिल गई और कुछ ही दिनों में वह

के ? ॥ हिंदुन के[1] पति सों न त्रिसाति, सतावत हिंदु गरीबन पाय के। लीजे कलंक न दि्ल्लि के बालम आलम आलमगीर[2] कहाय के ॥ २५८ ॥

पुनः—कवित्त मनहरण

गौर[3] गरबीले अरबीले राठवर[4] गह्यो लोह[5] गढ़ सिंह-गढ़ हिम्मति हरपते । कोट के कँगूरन में गोलंदाज तीरंदाज राखे हैं लगाय, गोली तीरन बरपते ॥ कै कै सावधान किरवान कसि कम्मरन सुभट अमान चहुँ ओरन करपते । भूषन भनत तहाँ सरजा सिवा तैं चढ़ो राति के सहारे ते अराति अमरप[6] ते ॥ २५९ ॥

भरभरा कर ढेर हो गया। आश्चर्य है कि औरंगजेब जैसे राजनीतिज्ञ शासक ने ऐसी उत्कट भूलें कीं अस्तु। सन् १६६९ ई० की घटना है। वीभत्स रस।

१ मेवाड़ (उदयपुर) के राणा "हिंदूपति" कहलाते हैं। शिवाजी को उसी वंश के होने से भूषणजी ने इस नाम से पुकारा।

२ औरंगजेब का यह भी नाम था जिसका अर्थ है संसार भर पर अधिकार कर लेनेवाला।

३ छं० नं० १३४ का नोट देखिए।

४ जोधपुर के राजा। यहाँ उदयभानु राठौर (छं० नं० १०० देखिए)।

५ सिंहगढ़ (छं० नं० १०० देखिए) के गढ़ अर्थात् किले में लोह अर्थात् तलवार गही।

६ शत्रु पर क्रोध करके।

अर्थापत्ति (काव्यार्थापत्ति)

लक्षण—दोहा

"वह कीन्ह्यो तौ यह कहा" यों कहनावति होय।
अर्थापत्ति बखानहीं तहाँ सयाने लोय॥ २६०॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

सयन मैं साहन को सुन्दरी सिखावैं ऐसे सरजा सों वैर जनि करौ महा बली है। पेसकसैं[1] भेजत विलायति पुरुतगाल सुनिकै सहमि जात करनाट[2] थली है॥ भूषन भनत गढ़ कोट माल मुलक दै सिवा सों सलाह राखिए तौ बात भली है। जाहि देत दंड सब डरिकै अखंड सोई दिली दलमली तौ तिहारी कहा चली है ?"॥ २६१॥

काव्यलिंग *

लक्षण—दोहा

है दिढ़इबे जोग जो ताको करत दिढ़ाव।
काव्यलिंग तासों कहैं भूषन जे कविराव॥ २६२॥

उदाहरण—मनहरण दंडक

साइति लै लीजिए विलाइति को सर कीजै बलख विलायति को बंदि अरि डावरे। भूषन भनत कीजै उत्तरी मुवाल

---

१ छं० नं० २४२ का नोट देखिए।

२ छं० नं० ११७ का नोट देखिए।

* काव्य लिंग में हेतु ज्ञापक मात्र होता है, कारक नहीं। ज्ञापक केवल ज्ञान देने वाले को कहते हैं और कारक कर्म करने वाले को। कारक को उत्पादक हेतु भी कहते हैं।

चस पूरब के लीजिए रसाल गज छावरे ॥ दच्छिन के नाथ से सिपाहिन सों बैर करि अवरंग साहिजू कहाइए न बावरे। कैसे सिवराज मातु देत अवरंगै गढ़ गाढ़े गढ़पती गढ़ लीन्हे और रावरे ॥ २६३ ॥

अर्थान्तरन्यास

लक्षण[1]—दोहा

कह्यो अरथ जहँही लिये और अरथ उल्लेख।
सो अर्थांतरन्यास है कहि सामान्य विसेख ॥ २६४ ॥

उदाहरण-सामान्य भेद-कवित्त मनहरण

बिना चतुरंग संग बानरन लैके बाँधि बारिध को लंक रघुनन्दन जराई है। पारथ अकेले द्रोन भीपम से लाख भट जीति लीन्ही नगरी विराट में बड़ाई है ॥ भूपन भनत ह्वै गुसुलखाने में खुमान अवरंग साहिबी हथ्याय हरिलाई है। तौ कहा अचंभो महराज सिवराज सदा वीरन के हिम्मतै हथ्यार होति आई है ॥ २६५ ॥

विशेप भेद-मालती सवैया

साहि तनै सरजा समरत्थ करी करनी धरनी पर नीकी।
भूलिगे भोज से विक्रम से औ भई बलि बेनु कि कीरति फीकी ॥

---

[1] इसका लक्षण अन्य कवि यों देते हैं—अर्थांतरन्यास वह है जहाँ सामान्य से विशेप का या विशेप से सामान्य का समर्थन हो। इसमें सामान्य विशेप दोनों होते हैं, किन्तु दृष्टान्त में या तो सामान्य ही सामान्य रहते हैं या विशेप ही विशेप।

भूषन भिच्छुक भूप भए भलि भीख लै केवल भौंसिला ही की ॥
नैसुक रीझि धनेस करै, लखि ऐसियै रीति सदा सिवजी की ॥२६३॥*

प्रौढ़ोक्ति

लक्षण—दोहा

जहँ[1] उतकरष अहेत को बरनत हैं करि हेत।
प्रौढ़ोकति तासों कहत भूषन कवि बिरदेत[2] ॥ २६७ ॥

† उदाहरण—कवित्त मनहरण

मानसर बासी हंस बंस न समान होत, चंदन सों घस्यो घनसारऊ[3] धरीक है। नारद की सारद की हाँसी मैं कहाँ सी आभ सरद की सुरसरी कौन पुंडरीक है॥ भूषन भनत छस्यो छीरधि मैं थाह लेत फेन लपटानो ऐरावत को करी कहै?। कयलास ईस ईस सीस रजनीस वहाँ अवनीस सिवा के न जस को सरीक है॥ २६८॥

---

* २६२ में सामान्य से विशेष का समर्थन है तथा २६३ में विशेष से सामान्य का।

१ इसका लक्षण अन्य कवियों ने यों भी कहा है—प्रौढ़ोक्ति वह है जहाँ कोई बहुत बड़ा काम हो और उसके वास्ते कोई कारण वर्णित न हो, वहाँ पर कोई कल्पित कारण कहा जाय।

२ बिरद (प्रशंसा) करनेवाले।

† इस उदाहरण में उपमानों की निन्दा मात्र है और इस प्रतीप का निकलता है। फिर भी कैलास वाले शिव के सम्बन्ध से चन्द्रमा की श्वेतता में वृद्धि मानी जाने से प्रौढ़ोक्ति भी निकल ही आती है।

३ कपूर भी।

संभावना

लक्षण—दोहा

"जु यों होय तो होय इमि" जहँ संभावन होय।
ताहि कहत संभावना कवि भूषन सब कोय ॥ २६९ ॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

लोमस की ऐसी आयु होय कौन हू उपाय तापर कवच जो करनवारो धरिए। ताहू पर दूजिये सहस्रबाहु ता पर सहस गुनो साहस जो भीमहू ते करिए ॥ भूषन कहैं यों अवरंगजू सों उमराव नाहक कहौ तो जाय दच्छिन में मरिए। चलै न कछू इलाज भेजियत वेही काज ऐसो होय साज तौ सिवा सों जाय लरिए ॥ २७० ॥

मिथ्याध्यवसित

लक्षण—दोहा

झूठ अरथ की सिद्धि को झूठौ बरनत आन।
मिथ्याध्यवसित कहत हैं भूषन सुकवि सुजान ॥ २७१ ॥

उदाहरण—दोहा

पग रन मैं चल यों लसैं ज्यों अंगद पग ऐन।
ध्रुव सो ध्रुव सो मेरु सो सिव सरजा को बैन[1] ॥२७२ ॥

---

१ इसमें शिवाजी के विषय में झूठी बातें झूठी उपमाओं द्वारा कही गई हैं जैसा कि भूषणजी ने लक्षण में साफ लिख दिया है।

पुनः—कवित्त मनहरण

मेरु सम छोटो पन सागर सो छोटो मन धनद को धन ऐसो छोटो जग जाहि को। सूरज सो सीरो तेज चाँदनी सी कारी कित्ति अमिय सो कटु लागै दरसन ताहि को ॥ कुलिस सो कोमल कृपान अरि भंजिबे को भूषन भनत भारी भूप भौंसिलाहि को। भुव सम चल पद सदा महिमंडल में ध्रुव सो चपल ध्रुव बल सिव साहि को ॥ २७३ ॥

उल्लास

लक्षण—दोहा

एकहि के गुन दोष ते औरै को गुन दोस।
बरनत हैं उल्लास सो सकल सुकबि मतिपोस ॥ २७४ ॥

उदाहरण (गुणेन दोषो)। मालती सवैया

काज मही सिवराज बली हिंदुवान बढ़ाइबे को उर ऊटै। भूषन भूनरम्लेच्छ करी चहै, म्लेच्छन मारिबो को रन जूटै ॥ हिंदु बचाय बचाय यही अमरेस चँदावत लौं कोइ टूटै। चंद अलोक ते लोक सुखी यहि कोक अभागे को सोक न छूटै ॥ २७५ ॥

पुनः (दोषेण गुणो)। मनहरण दंडक।

देस दहपट्ट कीने लूटि कै खजाने लीने बचे न गढ़ोई काहू गढ़ सिरताज के। तोरादार[1] सकल तिहारे मनसबदार डाँड़े,

---

[1] तिहारे सकल तोरादार (तथा) मनसबदार जिनके सुभाव मिज़ाज के (अभिमानी थे) युद्ध करके डाँड़े।

जिनके सुभाय जंग दै मिजाज के ॥ भूषन भनत बादसाह को यों लोग सब बचन सिखावत सलाह की इलाज के। डावरे की बुद्धि ह्वै कै बावरे न कीजे बैरु रावरे के बैर होत काज सिवराज के ॥ २७६ ॥

अन्यच्च (गुणेन गुणो) । दोहा

नृप सभान मैं आपनी होन बड़ाई काज।
साहितनै सिवराज के करत कवित कबिराज ॥ २७७ ॥

अपरंच (दोषेण दोषो) । दोहा

सिव सरजा के बैर को यह फल आलमगीर।
छूटे तेरे गढ़ सबै कूटे गए वजीर ॥ २७८ ॥

पुनरपि । मनहरण दंडक

दौलति दिली की पाय कहाए अलमगीर बब्बर[1] अकब्बर[2] के बिरद बिसारे तैं। भूषन भनत लरि लरि सरजा सों जंग निपट अभंगगढ़कोट सब हारे तैं ॥ सुधर्‍यो न एकौ साज भेजि भेजि वेहीकाज बड़े बड़े बे इलाज उमराव मारे तैं। मेरे कहे मेर करु, सिवाजी सों बैर करि गैर[3] करि नैर[4] निज नाहक उजारे तैं ॥ २७९ ॥

---

१ बाबर बादशाह, औरँगजेब के पाँच पुस्त ऊपर वाला भारत का पहला मुगल बादशाह था।

२ अकबर औरंगजेब का परदादा था।

३ गैर करि = बेजा करके।

४ नगर; देश।

अवज्ञा †

लक्षण—दोहा

औरे के गुन दोस ते होत न जहँ गुन दोस ।
तहाँ अवज्ञा होति है भनि भूषन मतिपोस ॥ २८० ॥

उदाहरण । मालती सवैया

औरन के अनवाढ़े कहा अरु वाढ़े कहा नहिं होत चहा है ।
औरन के अनरीझे कहा अरु रीझे कहा न मिटावत हा[1] है ॥
भूषन श्री सिवराजहि माँगिए एक दुनी विच दानि महा है ।
मंगन औरन के दरबार गए तौ कहा न गए तौ कहा है ? ॥ २८१ ॥

अनुज्ञा

लक्षण—दोहा

जहाँ सरस गुन देखि कै करै दोस की हौस ।
तहाँ अनुज्ञा होति है भूषण कवि यहि रौस ॥ २८२ ॥

उदाहरण । कवित्त मनहरण

जाहिर जहान सुनि दान के बखान आजु महादानि साहितनै गरिबनेवाज के । भूषन जवाहिर जलूस जरबाफ जोति देखि देखि सरजा के सुकवि समाज के ॥ तप करि करि कमलापति सों माँगत यों लोग सब करि मनोरथ ऐसे साज के ।

---

† विशेषोक्ति में कारण का आभास मात्र है, किन्तु अवज्ञा में शुद्ध कारण होने पर भी फल प्राप्ति नहीं होती ।

१ "हाय" अर्थात् दुःख को नहीं मिटाता ।

बैपारी जहाज के न राजा भारी राज के भिखारी हमैं कीजैं महाराज सिवराज के ॥ २८३ ॥

लेश

लक्षण—दोहा

जहँ बरनत गुन दोष, के कहे दोष गुन रूप ।
भूषन ताको लेस कहि गावत सुकवि अनूप ॥ २८४ ॥

उदाहरण—दोहा *

उदैभानु राठौर बर धरि धीरज गढ़ ऐंड़ ।
प्रगटै फल ताको लह्यौ परिगो सुरपुर पैंड़ ॥ २८५ ॥
कोऊ बचत न सामुहें सरजा सों रन साजि ।
भली करी पिय ! समर ते जिय लै आए भाजि ॥ २८६ ॥

तद्गुण †

लक्षण—दोहा

जहाँ आपनो रंग तजि गहे और को रंग ।
ताको तदगुन कहत हैं भूषन बुद्धि उतंग ॥ २८७ ॥

उदाहरण—मनहरण दंडक

पंपा[१] मानसर आदि अगन तलाव लागे जेहि के परन में

---

* पहले उदाहरण में गुण दोष रूप है और दूसरे में दोष गुण रूप ।

† भूषण ने इसमें केवल रंग का कथन किया है किन्तु किसी भी गुण का हो सकता है ।

१ जिस (रायगढ़) के पक्षों अर्थात् पक्खों में पंपा, मानसरोवर आदि अगणित तालाब लगे हैं अर्थात् चित्रित हैं ।

अकथ युत[1] गथ के। भूषन यों साज्यो रायगढ़[2] सिवराज रहे देव चक चाहि कै वनाए राजपथ के॥ विन[3] अवलंव कलिकानि[4] आसमान मैं ह्वै होत विसराम जहाँ इंदु औ उदथ[5] के। महत उतंग मनि जोतिनकेसंग[6] आनि कैयो रंग चकहा[7] गहत रवि रथ के॥ २८८॥

पूर्वरूप

लक्षण—दोहा

प्रथम रूप मिटि जात जहँ फिरि वैसोई होय।
भूषन पूरव रूप सो कहत सयाने लोय॥ २८९॥

❀ उदाहरण। मालती सवैया

ब्रह्म के आनन ते निकसे ते अत्यंत पुनीत तिहुँ पुर मानी।

---

१ वे (तालाव) अकथनीय हैं और उनके साथ कितनी ही गाथाएँ लगी हैं अर्थात् वे इतिहासों और पुराणों में प्रसिद्ध हैं।

२ इसका वर्णन छंद नं० १४ के नोट एवं छंद नं० १५, २४ में देखिए। जान पड़ता है कि वह वर्णन रायगढ़ ही का है न कि राजगढ़ का। भूमिका देखिए।

३ बिना किसी चीज़ पर सहारा पाने के सूर्य और चंद्रमा आसमान में परेशान हो कर जिस रायगढ़ पर विश्राम ले लेते हैं।

४ परेशानी।

५ उदय व अस्त होनेवाला, सूर्य।

६ के संग आनि = से मिलान होकर।

७ पहिए।

* भूषण के चारों उदाहरणों में प्रथम पूर्व है। द्वितीय भेद आपने न कहा न उसका उदाहरण दिया।

राम युधिष्टिर के बरने बलमीकिहु व्यास के अंग सोहानी ॥
भूपन यों कलि के कविराजन राजन के गुन पाय नसानी।
पुन्य चरित्र[1] सिवा सरजा सर न्हाय पवित्र भई पुनि बानी ॥२९०॥

यों सिर पै छहरावत छार हैं जाते उठै असमान बगूरे।
भूपन भूधरऊ धरकैं जिनके धुनि धक्कन यों बल रूरे ॥ ते सरजा सिवराज दिए कविराजन को गजराज गरूरे। सुंडन सों पहिले जिन सोखि के फेरि महामद सों नद पूरे ॥ २९१ ॥

श्री सरजा सलहेरि[2] के जूझ घने उमरावन के घर घाले।
कुंभ चदावत सैद पठान कबंधन धावत भूधर हाले ॥ भूपन यों सिवराज कि धाक भए पियरे अरुने रँग वाले। लोंहे कटे लपटे वहु लोहु[3] भए मुँह मीरन के पुनि लाले ॥ २९२ ॥

यों कवि भूपन भापत है यक तो पहिले कलिकाल कि सैली।

---

१ इस को पढ़कर तुलसीदासजी की—

"भगत हेतु विधि भवन बिहाई। सुमिरत सारद आवति धाई ॥" "राम चरित सर बिनु अन्हवाए। सो श्रम जाय न कोटि उपाए ॥" इत्यादि चौपाइयों का स्मरण हो आता है। इस विषय में हमने अपने विचार सरस्वती भाग १ संख्या १२ में "हिंदी का काव्य (आलोचना)" शीर्षक निबंध में प्रकट किए हैं। विपयी राजाओं के कारण लोभी कवियों ने नायिका इत्यादिक विषयों पर काव्य कर सरस्वती देवी को अपवित्र सा कर दिया था।

२ छंद नं० ९७ का नोट देखिए।

३ लहू; रुधिर।

तापर हिंदुन की सब राहनि नौरँगसाहि करी अति मैली ॥
साहि तनै सिव के डर सों तुरकौ गहि वारिध की गति पैली ।
वेद पुरानन की चरचा अरचा द्विज देवन की फिरि फैली ॥२९३॥

अतद्गुण

लक्षण—दोहा

जहँ संगति ते और को गुन कछूक नहिं लेत ।
ताहि अतद्गुन कहत हैं भूषन सुकवि सचेत ॥ २९४ ॥

उदाहरण—मालती सवैया

दीन दयालु दुनी प्रतिपालक जे करता निरम्लेच्छ मही के ।
भूषन भूधर उद्धरिवो सुने और जिते गुन ते सब जी के ॥
या कलि मैं अवतार लियो तऊ तेई सुभाय सिवाजि वली के ।
आय धर्यो हरि ते नर रूप पै काज करै सिगरे हरिही के ॥२९५॥

पुनः—कवित्त मनहरण

सिवाजी खुमान तेरो खग्ग वढ़े मान वढ़े मानस लौं वद-
लत कुरुप उछाह[1] ते । भूषन भनत क्यों न जाहिर जहान होय
प्यार पाय तो से ही दिपत नर नाह ते ॥ परताप फेटो रहो
सुजस लपेटो रहो वरनत खरो नर पानिप अथाह ते । रंग रंग
रिपुन के रकत सों रँगों रहै रातो दिन रातो पै न रातो होत
स्याह ते ॥ २९६ ॥

---

१ मानसरोवर की भाँति देखो उछाह में परिणत हो जाती है ।

अपरंच । दोहा

सिव सरजा की जगत मैं राजति कीरति नोल ।
अरि तिय अंजन दृग हरै तऊ धौल की धौल ॥ २९७ ॥

अनुगुण

लक्षण—दोहा

जहाँ और के संग ते बढ़ै आपनो रंग ।
ता कहँ अनुगुन कहत हैं भूषन बुद्धि उतंग ॥ २९८ ॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

साहि तनै सरजा सिवा के सनमुख आय कोऊ बचि जाय न गनीम भुज बल मैं । भूषन भनत भौंसिला की दिलदौर सुनि धाक ही मरत म्लेच्छ औरंग के दल मैं ॥ रातौ दिन रोवत रहत यवनी हैं सोक परोई रहत दिली आगरे सकल मैं । कज्जल कलित अँसुवान के उमंग संग दूनो होत रोज रंग जमुना के जल मैं ॥२९९॥

मीलित

लक्षण—दोहा

सदृश वस्तु मैं मिलि जहाँ भेद न नेक लखाय ।
ताको मीलित कहत हैं भूषन जे कविराय ॥ ३०० ॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

इंद्र निज हेरत फिरत गज-इंद्र अरु इंद्र को अनुज[1] हेरै

---

१ इंद्र के छोटे भाई अर्थात् विष्णु जो क्षीर समुद्र में शयन करते हैं ।

दुगधनदीस[1] को। भूषन भनत सुरसरिता को हंस हेरै विधि हेरै हंस को चकोर रजनीस को॥ साहि तनै सिवराज करनी करी है तें जु होत है अचंभो देव कोटियौ तैंतीस को। पावत न हेरें तेरे जस मैं हिराने निज गिरि को गिरीस हेरैं गिरिजा गिरीस को॥ ३०१॥

उन्मीलित

लक्षण—दोहा

सदृस वस्तु मैं मिलत पुनि जानत कौनेहु हेत।
उनमीलित तासों कहत भूषन सुकबि सचेत॥ ३०२॥

उदाहरण—दोहा

सिव सरजा तव सुजस मैं मिले धौल छवि तूल।
बोल बास ते जानिए हंस चमेली फूल॥ ३०३॥

सामान्य *

लक्षण—दोहा

भिन्न रूप जहँ सदृश ते भेद न जान्यो जाय।
ताहि कहत सामान्य हैं भूषन कवि समुदाय॥ ३०४॥

उदाहरण—मालती सवैया

पावस की यक राति भली सु महाबली सिंह सिवा गमके ते।
म्लेच्छ हजारन ही कटि गे दस ही मरहट्टन के झमकेते ते॥

---

1 दुग्ध समुद्र।

* मीलित में सादृश्य के कारण दो वस्तुवें मिलकर एकही (अभिन्न) हो जाती हैं, इधर सामान्य में वनी दोनों रहती हैं किन्तु कौन कौन हैं सो पता नहीं पड़ता।

भूषन हालि उठे गढ़ भूमि पठान कबंधन के धमके ते । मीरन के अवसान गये मिलि धोपनि[1] सों चपला चमके ते ॥ ३०५ ॥

विशेषक

लक्षण—दोहा

भिन्न रूप सादृश्य में लहिए कछू विसेख ।

ताहि विशेषक कहत हैं भूषन सुमति उलेख ॥ ३०६ ॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण

अहमदनगर[2] के थान किरवान लै कै नवसेरी खान[3] ते खुमान भिखो वल ते । प्यादन सों प्यादे पखरैतन सों पखरैत वखतरवारे वखतरवारे हल ते ॥ भूषन भनत एते मान घमसान

---

१ संगीन की भाँति एक हथियार । यथा "छत्रसाल जेहि दिसि पिलै धारि धोप कर माहिं । तेहि दिसि सीस गिरीस पै बनत बटोरत नाहिं" ॥ (छत्रप्रकाश) यहाँ अफ़जलखाँ वाली लड़ाई का इशारा भूषण जी ने किया है । जब खाँ दिन में मारा जा चुका था, तब शाम को किले में पांच तोपें दागी गईं । इस पर नेताजी पालकर तथा मोरोपंत ने खाँ की सेना पर रात में आक्रमण करके हजारों आदमियों को मारा और सेना भागी । यह सितम्बर सन् १६५९ की घटना है । यहाँ १६७० वाली महोली या जँजीरा की लड़ाइयों का भी कथन सम्भव है ।

२ निज़ामशाही "बादशाहों" की राजधानी । यहाँ पर शिवाजी ने नौशेरी खाँ को सन् १६५७ में लूटा । यहीं १६६१ में शिवाजी के सेनापति प्रतापराव गूजर ने बादशाही अफसर महकूब सिंह को मारा ।

३ नौशेरी खाँ को खानदौरा की उपाधि थी (छंद नं० १०३ का नोट देखिए ।) कारतलब खाँ तथा करण सिंह भी इसी युद्ध में लड़े । शिवाजी ने अहमदनगर को इस मौक़े पर थोड़ा बहुत लूटा ।

भयो जान्यो न परत कौन आयो कौन दल ते। सम वेष ताके, तहाँ सरजा सिवा के बाँके वीर जाने हाँके देत, मीर जाने चलते ॥ ३०७ ॥

पिहित

लक्षण—दोहा

परके मन की जानि गति ताको देत जनाय।
कछू क्रिया करि,कहित हैं पिहित ताहि कविराय ॥ ३०८ ॥

उदाहरण—दोहा

गैर मिसिल ठाढ़ो सिवा अंतरजामी नाम ।
प्रकट करी रिस, साहि को सरजा करि न सलाम ॥३०९॥

आनि[1] मिल्यो अरि, यों गह्यो चखन चकत्ता चाव ।
साहि तनै सरजा सिवा दियो मुच्छ पर ताव ॥३१०॥

प्रश्नोत्तर ❀

लक्षण—दोहा

कोऊ बूझै बात कछु कोऊ उत्तर देत।
प्रश्नोत्तर ताको कहत भूषन सुकवि सचेत ॥ ३११ ॥

---

१ वीर रस अपूर्ण।

❀ पहले प्रश्नोत्तर में अभंग सभंग द्वारा प्रश्न ही में उत्तर निकलता है, तथा दूसरे में कई प्रश्नों का एक हो उत्तर होता है। भूषण का दूसरा उदाहरण तो ठीक है, किन्तु पहले में अभंग सभंग का समावेश न तो लक्षण में है न उदाहरण में। जैसे प्रश्न—को करत कामिनी को मनभायो ? उत्तर—कोक रत। यहाँ सभंग द्वारा प्रश्न ही में उत्तर निकल आया।

प्रथम भेद–उदाहरण—मालती सवैया

लोगन सों भनि भूपन यों कहैं खान[1] ख़वास कहा सिख देहौ। आवत देसन लेत सिवा सरजै मिलिहौ भिरिहौ कि भगैहौ॥ एदिल की सभा बोलि उठी यों सलाह करौऽब कहाँ भजि जैहौ। लीन्हो कहा लरिकै अफजल्ल कहा लरिकै तुमहूँ अब लैहौ?॥३१२॥

दूसरा भेद—उदाहरण—दोहा

को दाता को रन चढ़ो को जग पालनहार?।
कवि भूपन उत्तर दियो सिव नृप हरि अवतार॥ ३१३॥

व्याजोक्ति *

लक्षण—दोहा

आन हेतु सों आपनो जहाँ छिपावै रूप।
व्याज-उकुति तासों कहत भूपन सुकवि अनूप॥ ३१४॥

उदाहरण—मालती सवैया

साहिन के उमराव जितेक सिवा सरजा सब लूटि लए हैं। भूपन ते बिन दौलति ह्वै कै फकीर ह्वै देश बिदेश गए हैं॥ लोग कहैं इमि दच्छिन[2] जेय सिसौदिया रावरे हाल ठए हैं?। देत रिसाय कै उत्तर यों हमहीं दुनियाँ ते उदास भए हैं[3]॥ ३१५॥

---

1 छंद नं० २०६ का नोट देखिए।

२ दक्षिण का जीतनेवाला सिसौदिया अर्थात् शिवाजी।

३ इन दो पदों का पाठांतर यों है—"ईजति राखि सकैं अपनी इमि स्थानपनो

* यहाँ अपना आकार दूसरा हेतु कहकर छिपाया जाता है। छेकापन्हुति में उक्ति मात्र छिपाई जाती है और व्याजोक्ति में आकार।

पुनः—दोहा

सिवा वैर औरंग वदन लगी रहै नित आहि।
कवि भूषन बूझे सदा कहै देत दुख साहि[1] ॥ ३१६ ॥

लोकोक्ति एवं छेकोक्ति

लक्षण—दोहा

कहनावति जो लोक की लोक उकुति सो जानि।
जहाँ कहत उपमान ह्वै छेक उकुति तेहि मानि ॥३१७॥

उदाहरण

लोकोक्ति—यथा—दोहा

सिव सरजा की सुधि करौ भली न कीन्ही पीव।
सूवा ह्वै दच्छिन चले धरे जात कित जीव ? ॥ ३१८ ॥

❀ छेकोक्ति—यथा—दोहा

जे सोहात सिवराज को ते कवित्त रस मूल।
जे परमेस्वर पै चढैं तेई आछे फूल ॥ ३१९ ॥

पुनः—किरीटी सवैया[2]

औरँग जो चढ़ि दक्खिन आवै तो ह्याँ ते सिधावै सोऊ बिनु

करि त्योर ठए हैं। भेटत हो सब ही सों कहैं हम या दुनियाँ ते उदास भए हैं।"

१ शाही; राज्यभार।

२ इस सवैया में "वसुधा" अर्थात् आठ भगण होते हैं। एक गुरु फिर दो लघु अक्षर=भगण।

❀ इसमें प्रायः किसी का अपमान किया जाता है।

कप्पर। दीनो मुहीम को भार बहादुर[1] छागो[2] सहै क्यों गयंद का झप्पर ?॥ सासता खाँ सँग वे हठि हारे जे साहब सातएँ ठीक भुवप्पर। ये अब सूबहु आवैं सिवा पर "काल्हि के जोगी कलींदे[3] को खप्पर"॥ ३२०॥

वक्रोक्ति

लक्षण—दोहा

जहाँ श्लेष सों काकु[4] सों अरथ लगावै और।
वक्र उकुति ताको कहत भूपन कवि सिरमौर॥३२१॥

उदाहरण

श्लेष से वक्रोक्ति—कवित्त मनहरण

साहि तनै तेरे वैर वैरिन को कौतुक सों बूझत फिरत कहौ काहे रहे तचि हौ ?। सरजा के डर हम आए इतै भाजि तब सिंह सों डराय याहू ठौर ते उकचि[5] हौ॥ भूषन भनत वै कहैं कि हम सिव कहैं तुम चतुराई सों कहत बात रचि हौ। सिव

---

१ कदाचित् यह खानबहादुर=खाजहाँ बहादुर के विषय में हो। इसका हाल छंद नं० ९६ में बहलोलवाले नोट में देखिए।

२ बकरा; छगरा।

३ तरबूजा। "नई नाइन बाँस का नहन्ना" की तरह यह भी एक कहावत है।

४ स्वर फिराकर अर्थ का बदलना।

५ उचकोगे; उठ भागोगे। सरजा यहाँ सिंह के अर्थ में आया है। सर जाह ऊँची पदवीवाले को कहते हैं और सिंह का पद ऊँचा है ही।

जापै रूठैं तौ निपट कठिनाई तुम वैर त्रिपुरारि के त्रिलोक में न बचिहौ ॥३२२॥

❀ काकु से वक्रोक्ति—कवित्त मनहरण

सासता[1] खाँ दक्खिन को प्रथम पठायो तेहि बेटा के समेत हाथ जाय कै गँवायो है। भूपन भनत जौ लौं भेजौं उत और तिन वे ही काज बरजोर कटक कटायो है ॥ जोई सूबेदार जात सिवाजी सों हारि तासों अवरंग साहि इमि कहै मन भायो है। मुलुक लुटायो तौ लुटायो, कहा भयो ? तन आपनो बचायो महा-काज करि आयो है ॥ ३२३ ॥

पुनः—दोहा

करि मुहीम आये कहत हजरत मनसब दैन ।
सिव सरजा सो जंग जुरि ऐहैं बचिकै है न ॥३२४॥

स्वभावोक्ति

लक्षण—दोहा

साँचो तैसो बरनिए जैसो जाति स्वभाव ।
ताहि सुभावोकति कहत भूषन जे कविराव ॥३२५॥

उदाहरण—मनहरण दंडक

दान[2] समै द्विज देखि मेरहू कुवेरहू की संपति लुटायवे को

❀ यहाँ शरीर बचाने मात्र से महा काज वास्तव में हुआ नहीं, किन्तु कहने के ढंग से स्वर द्वारा उमरावों की निन्दा की गई है। दोहा वाले उदाहरण (नं० ३२४) में भी काकु मौजूद है। है न का अर्थ लेना पड़ैगा सच है न।

१ छंद नं० ३५ का नोट देखिए।

२ इस कवित्त में दान, दया, तथा युद्ध वीर सभी वर्णित हैं और वीररस भी पूर्ण है।

हियो ललकत है। साहि के सपूत सिव साहि के वदन पर सिव की कथान में सनेह झलकत है॥ भूपन जहान हिंदुवान के उबारिबे को तुरकान मारिबे को वीर वलकत है। साहिन सों लरिबे की चरचा चलति आनि सरजा के दृगन उछाह छलकत है॥ ३२६॥

काहू[1] के कहे सुने ते जाही ओर चाहैं ताही ओर इकटक घरी चारिक चहत[2] हैं। कहे ते कहत वात कहे ते पियत खात भूपन भनत ऊँची साँसन जहत हैं॥ पौढ़े हैं तौ पौढ़े वैठे वैठे खरे खरे हम को हैं कहा करत यों ज्ञान न गहत हैं। साहि के सपूत सिव साहि तव वैर इमि साहि सव रातौ दिन सोचत रहत हैं॥ ३२७॥

उमड़ि कुड़ाल[3] में खवास खान आए भनि भूपन त्यों धाए सिवराज पूरे मन के। सुनि मरदाने वाजे हय हिहनाने घोर मूछैं तररानै मुख वीर धीर जन के॥ एकै कहैं मार मार सम्हरि समर एकै म्लेच्छ गिरे मार वीच वेसम्हार तन के।

---

१ भयानक रस।

२ देखते हैं।

३ इसे शिवाजी ने सावन्त वाड़ी के रईस से सन् १६६१ में जीता। पहले यहाँ खवास खाँ ससैन्य आया था, किंतु फिर करनाटक चला गया। तव शिवाजी ने कुड़ाल ले लिया।

कुंडन[1] के ऊपर कड़ाके उठैं ठौर ठौर जीरन[2] के ऊपर खड़ाके खड़गन के ॥ ३२८ ॥

आगे आगे तरुन तरायले चलत चले तिनके अमोद[3] मंद मंद मोद सकसै । अड़दार बड़े गड़दारन[4] के हाँके सुनि अड़े गैर[5] गैर माहिं रोस रस अकसै ॥ तुंडनाय सुनि गरजत गुंज-रत भौंर भूषन भनत तेऊ महा मद छकसै । कीरति के काज महाराज सिवराज सब ऐसे गजराज कविराजन को वकसै ॥ ३२९ ॥

भाविक

लक्षण—दोहा

भयो, होनहारो, अरथ बरनत जहँ परतच्छ ।
ताकों भाविक कहत हैं भूषन कवि मतिस्वच्छ ॥ ३३० ॥

भूतकाल प्रत्यक्ष–उदाहरण–कवित्त मनहरण

अजौं भूतनाथ मुंडमाल लेत हरषत भूतन अहार लेत अजहूँ उछाह है । भूषन भनत अजौं काटे करवालन के कारे

---

१ लोहे का टोप ।

२ जिरह बख्तर ।

३ खेल कूद ।

४ छंद ३१–३४ का नोट देखिए ।

५ गैल गैल; राह राह ।

कुंजरन परी कठिन कराह है ॥ सिंह सिवराज सलहेरि[1] के समीप ऐसो कीन्हो कतलाम दिली दल को सिपाह है । नदी रन मंडल रुहेलन रुधिर अजौं अजौं रविमंडल रुहेलन की राह है ॥ ३३१ ॥

भविष्यकाल का प्रत्यक्ष

गजघटा उमड़ि महा घनघटा सी ओर भूतल सकल मदजल सौं पटत है । वेला छाँड़ि उछलत सातौ सिंधु वारि, मन मुदित महेस मग नाचत कढ़त है ॥ भूपंन बढ़त भोसिला भुवाल को यो तेज जेतो सब बारहौ तरनि में बढ़त है । सिवाजी खुमान दल दौरत जहान पर आनि तुरकान पर प्रलै प्रगटत है ॥ ३३२ ॥

भाविक छवि

लक्षण—दोहा

जहँ दूरस्थित वस्तु को देखत बरनत कोय ।
भूपन भूपन राज भनि भाविक छवि सो होय ॥ ३३३ ॥

उदाहरण—मालती सवैया

सूबन साजि पठायत है निज फौज लखे मरहट्टन केरी ।
औरँग आपनि दुग्ग जमाति बिलोकत तेरियै फौज दरेरी ॥
साहि तनै सिव साहि भई भनि भूपन यों तुव धाक घनेरी ।
रातहु दौस दिलीस तकै तुव सैन कि सूरति[2] सूरति[3] घेरी ॥ ३३४ ॥

---

१ छंद ९७ का नोट देखिए ।

२ शकल ।

३ छं० २०० का नोट । सूरत नाम का गुजरात में प्रसिद्ध शहर ।

उदात्त

लक्षण—दोहा

अति संपति वरनन जहाँ तासों कहत उदात।
कै आनै सु लखाइए वड़ी आन की वात ॥ ३३५ ॥

अति सम्पत्ति—उदाहरण—कवित्त मनहरण

द्वारन मतंग दीसैं आँगन तुरंग हीसैं वंदीजन वारनं[1] असीसैं जसरत हैं। भूपन वखानै जरवाफ के सम्याने ताने झालरन मोतिन के झुण्ड झलरत हैं॥ महाराज सिवा के नेवाजे कविराज ऐसे साजि कै समाज जेहि ठौर विहरत हैं। लाल करैं प्रात तहाँ नीलमनि करैं रात याही भाँति सरजा की चरचा करत हैं ॥३३६॥

दूसरे को बड़ी बात दिखलाना

जाहु जनि आगे खता खाहु मति यारो गढ़ नाह के डरन कहैं खान यों वखान कै। भूपन खुमान यह सो है जेहि पूना माहिँ लाखन मैं सासता[2] खाँ डास्यो विन मान कै॥ हिंदुवान द्रुपदी की ईजति वचैवे काज झपटि विराटपुर वाहर प्रमान कै। वहै है सिवाजी जेहि भीम ह्वै अकेले मास्यो अफजल कीचकै[3] को कीच घमसान कै ॥ ३३७ ॥

---

१ दरवाजों पर अथवा वार वार।

२ शाइस्ता खाँ। छं० ३५ का नोट देखिए।

३ राजा विराट का साला जिसने द्रौपदी का सतीत्व भंग करना चाहा था। इसे भीमसेन ने मार डाला। (महाभारत, विराट पर्व्व।)

पुनः—दोहा

या पूना मैं मति टिकौ खान[1] वहादुर आय।
ह्याइँ साइस खान को दीन्हीं सिवा सिजाय ॥ ३३८ ॥

अत्युक्ति ❀

लक्षण—दोहा

जहाँ सूरतादिकन की अति अधिकाई होय।
ताहि कहत अति उक्ति हैं भूपन जे कविलोय ॥ ३३९ ॥

उदाहरण—मनहरण दंडक[2]

साहि तनै सिवराज ऐसे देत गजराज जिन्हैं पाय होत कविराज वे-फिकिर हैं। झूलत झलमलात झूलै जरबाफन की जकरे जँजीर जोर करत किरिरि हैं ॥ भूपन भँवर भननात घननात घंट पग झननात मनो घन रहे घिरि हैं। जिनकी गरज सुने दिग्गज वे-आब होत मद ही के आब गड़काब होत गिरि हैं ॥ ३४० ॥

आजु यहि समै महाराज सिवराज तुही जगदेव[3] जनक

---

१ खान वहादुर खाँजहाँ वहादुर को कहते थे। इसे औरंगजेब ने १६७२ में दक्षिण का गवर्नर नियत किया था। इसका हाल छं० नं० ९६ में वहलोवाले के नोट में देखिए।

२ इस छंद में हाथियों के जंजीर पर जोर लगाकर गरजने तथा उसके फलों का विशेप वर्णन है।

३ पँवारों का वड़ा प्रसिद्ध और तेजस्वी वीर।

❀ उदात्त में धनाधिक्य का भारी कथन होता है और अत्युक्ति में शौर्यादि का।

जजाति अम्बरीक सो । भूषन भनत तेरे दान-जल-जलधि में गुनिन को दारिद गयो बहि खरिके[1] सो ॥ चंद कर किंजलकें[2] चाँदनी पराग उड़-वृंद मकरंद बुंद पुंज के सरीक सो। कुंदे[3] सम कयलास नाक-गंग नाल तेरे जस पुंडरीक को अकास चंच-रीक सों ॥ ३४१ ॥

पुनः—दोहा

महाराज सिवराज के जेते सहज सुभाय।
औरन को अति उक्ति से भूषन कहत बनाय ॥ ३४२ ॥

निरुक्ति

लक्षण—दोहा

नामन को निज बुद्धि सों कहिए अरथ बनाय।
ताको कहत निरुक्ति हैं भूषन जे कविराय ॥ ३४३ ॥

उदाहरण—दोहा

कवि गन को दारिद दुरद याही दल्यो अमान।
याते श्री सिवराज को सरजा कहत जहान ॥ ३४४ ॥
हस्यो रूप इन मदन को याते भो सिव नाम।
लियो बिरद सरजा सबल अरि गज दलि संग्राम ॥ ३४५ ॥

---

1 खरीका; दाँत खोदने को सींक। तृण।

२ कमल फूल के बीच में चारों ओर जो पीली और सफेद सींकें सी होती हैं।

३ कुंद का छोटा सफेद फूल।

पुनः—कवित्त मनहरण

आजु सिवराज महाराज एक तुही सरनागत जनन को दिवैया अभैदान को। फैलो महिमंडल बड़ाई चहुँ ओर ताते कहिए कहाँ लौं ऐसे बड़े परिमान को ?॥ निपट गँभीर कोऊ लाँघि न सकत वीर जोधन को रन देत जैसे भाऊ[1] खान को। दिल दरियाव क्यों न कहैं कविराव तोहिं तो मैं ठहरात आनि पानिप जहान को ॥ ३४६ ॥

हेतु *

लक्षण—दोहा

"या निमित्त यहई भयो" यों जहँ वरनन होय।
भूषन हेतु बखानही कवि कोबिद सब कोय ॥ ३४७ ॥

उदाहरण—मनहरण दंडक

दारुन दइत हरनाकुस विदारिबे को भयो नरसिंह रूप तेज बिकरार है। भूषन भनत त्योंही रावन के मारिबे को रामचंद्र भयो रघुकुल सरदार है॥ कंस के कुटिल बल बंसन

---

1 भाऊसिंह के विषय में छंद नं० २५ का नोट देखिए। इन्हें "भाऊखान" वैसे ही कहा गया है जैसे अंबर (जयपुर) के महाराज जयसिंह "मिर्जा" कहाते थे। वास्तव में भाऊ खाँ नामक कोई मुसलमान सरदार न था। सम्भव है कि भाऊ और खान दोनों का यहाँ कथन हो।

* प्रथम हेतु में कार्य का कारण के साथ ही कथन होता है और द्वितीय में कार्य कारण अभेद होते हैं। जैसे कर्तव्य में स्थिति ही ईश्वर की कृपा है। भूषण ने एक ही हेतु कहा है।

त्रिधुंसिवे को भयो यदुराय वसुदेव को कुमार है। प्रथी पुरहूत साहि के सपूत सिवराज म्लेच्छन के मारिवे को तेरो अवतार है ॥ ३४८ ॥

अनुमान

लक्षण—दोहा

जहाँ काज ते हेतु कै जहाँ हेतु ते काज।
जानि परत, अनुमान तहँ कहि भूषन कविराज ॥ ३४९ ॥

काज से हेतु का अनुमान–उदाहरण—मनहरण दंडक

चित्त अनचैन आँसू उमगत नैन देखि वीवी कहैं वैन मियाँ कहियत काहि नै ?। भूषन भनत वूझे आए दरवार ते कँपत वार वार क्यों सम्हार तन नाहिनै ?॥ सीनो धकधकत पसीनो आयो देह सव हीनो भयो रूप न चितौन वाएँ दाहिनै। सिवाजी की संक मानि गए हौ सुखाय तुम्हें जानियत दक्खिन को सूवा करो साहि नै ॥ ३५० ॥

अंझा[1] सी दिन कि भई संझा सी सकल दिसि गगन लगन रही गरद छवाय है। चील्ह गीध वायस समूह घोर रोर करैं ठौर ठौर चारों ओर तम मड़राय है। भूषन अँदेस देस देस के नरेस गन आपुस मैं कहत यों गरव गँवाय है। वड़ो वड़वा को जितवार चहुँघा को दल सरजा सिवा को जानियत इत आयहै ॥ ३५१ ॥

---

1 नागा अर्थात् दिन गायब सा हो गया।

अथ शब्दालंकार

दोहा

जे अरथालंकार ते भूषन कहे उदार।
अब शब्दालंकार ये कहियत मति अनुसार॥ ३५२॥

छेक एवं लाट अनुप्रास

लक्षण—दोहा

सुर समेत अच्छर पदनि आवत सदृस प्रकास।
भिन्न अभिन्नन पदन सों छेक लाट अनुप्रास॥ ३५३॥

उदाहरण—अमृतध्वनि छंद[1]

दिल्लिय दलन दबाय करि सिव सरजा निरसंक। लूटि लियो

---

१ इसमें छः पद होते हैं जिनमें प्रथम दो मिलकर एक दोहा होते हैं, और चार अंतिम पदों में काव्य छंद होता है। अंत के चारों पदों में आठ आठ कलाओं के पीछे यति होती है। हमने जिन आचार्यों के लिए हुए लक्षण देखे, उन्होंने यह नहीं लिखा है कि इस छंद के पदों का अंतिम अक्षर अवश्य लघु होता है, पर यह बात सदा पाई जाती है। भूषणजी इसमें कुंडलिया की भाँति प्रथम के एक या दो शब्द अंत में भी अवश्य लाते हैं, यद्यपि यह आवश्यक नहीं है। अन्य कवियों की अमृतध्वनियों में थोड़े बहुत शब्द अथवा अक्षरसमूह निरर्थक आ जाते हैं, पर भूषणजी इस दोष से खूब ही बचे हैं। इसका नाम जैसा अच्छा है, वैसा ही यह पढ़ने में बड़ा टेढ़ा छंद है। इसका नाम तो 'विषध्वनि' होता तो ठीक था।

सूरति सहर वंककरि[1] अति डंक ॥ वंककरि अति डंककरि अस संककुलि[2] खल। सोचच्चकित भरोचच्चलिय[3] विमोचच्चखजल ॥ तट्ठट्ठइमन[4] कट्ठट्ठिक[5] सोइ रट्ठट्ठिल्लिय[6]। सद्दिसि[7]दिसि भद्द-विभइ[8] रद्दिल्लिय[9] ॥ ३५४ ॥

गत वल खानदलेल[10] हुव खान वहादुर मुद्ध।

---

१ डंका वंक करके।

२ इस तरह सब खलों को सशंक करके।

३ भरोच शहर भागा।

४ वही बात मन में ठान कर।

५ कठिन (पूरे) तौर से ठीक करके।

६ रट कर अर्थात् वार वार कह कर ठेल दिया।

७ भली भाँति सब दिशाओं में।

८ भद होकर और दब कर। या धावों की भद (गर्दा) से दब कर।

९ दिल्ली रद हो गई।

१० दिलेर खाँ के विषय में छंद नं० २१२ के नोट में मिर्जा जयसिंह वाला नोट देखिए। शिवाजी की हार के वाद दिलेर खाँ (दलेल खाँ) दक्षिण और मालवे का सूबेदार रहा। सन् १६७२ में दिलेर खाँ ने चाकन और सलहेरि को साथ साथ घेरा और सलहेरि में उसकी फ़ौज की शिवाजी ने खूब ही खबर ली। छं० नं० १७ का नोट देखिए। १६७७ में दिलेर खाँ ने गोलकुंडा पर धावा किया था, पर मदन्नपंत से उसे हारना पड़ा। १६७९ में शंभाजी अपने पिता (शिवाजी) से नाराज़ होकर दिलेर खाँ के यहाँ भाग गया और उसने वाप वेटों को लड़ाना चाहा

सिव सरजा सलहेरि[1] ढिग कुद्धद्धरि[2] किय युद्ध ॥
कुद्धद्धरि किय युद्दद्धुव[3] अरि अद्धद्धरि[4] धरि ।
मुंडड्डरि[5] तहँ रुंडड्डकरत[6] डुंडड्डग[7] भरि ॥
खेदिद्दर[8] वर छेदिद्दय[9] करि मेदद्धि[10] दल ।
जंगग्गति[11] सुनि रंगग्गलि[12] अवरंगग्गत [13]वल ॥ ३५५ ॥

पर औरंगजेव ने उसे (शंभाजी को) दिल्ली भेज देने को लिखा । इसी बीच में दिलेर खाँ शिवाजी के सेनापति जनार्दन पंत से युद्ध में हारा और शंभाजी को दिल्ली न भेज कर उसने उस (शंभाजी) से अपना वचन न तोड़ने को जान बूझ कर उसे भाग जाने दिया । दिलेर खाँ १६८४ में मरा । सलहेरि के युद्ध में दिलेर खाँ तथा खान बहादुर मिल कर नेता थे।

१ छं० १७ का नोट देखिए । २ क्रोध धर कर ।

३ ध्रुव (निश्चय) युद्ध किया । ४ आधे आधे करके; काट कर ।

५ मुंड डाल कर । ६ रुंड डकार रहे हैं ।

७ डुंड (हाथ कटे हुए कबंध) डग भरते (दौड़ते) हैं ।

८ दर (स्थान; मोरचा) से खेद कर ।

९ छेद डाला ।

१० फौज के मेद (चर्बी) को दही ऐसा फेंट डाला ।

११ जंग का हाल ।

१२ रंग गल गया ।

१३ वल जाता रहा ।

लिय धरि मोहकम[1] सिंह कहँ अरु किसोर नृपकुम्म[2]। श्री सरजा संग्राम किय भुम्मिम्मवि[3] करि धुम्म[4]॥ भुम्मिम्मवि किय धुम्मम्मड़ि रिपु झुम्मम्मलिकरि[5]। जंगग्गरजि[6] उतंगग्गरब[7] मतंगग्गन[8] हरि॥ लक्खक्खन[9] रन दुक्खक्खलनि[10] अलक्खक्खिति[11] भरि। मोल्लहि[12] जस नोल्लरि[13] वहलोलहिय[14] धरि॥ २५६॥

---

१ छं० २३१ का नोट देखिए।

२ नृप कुमार किशोर सिंह, कोटा नरेश महाराज माधव सिंह के पुत्र थे। दक्षिण में ये मुगलों की ओर से लड़ने गए। वहाँ शिवाजी से भी इनसे लड़ाई हुई होगी। सन् १६८८ ई० तक ये दक्षिण में लड़े। सल्हेरी के युद्ध में इनका पकड़ा जाना भूषण कहते हैं।

३ भूमि में।

४ धूम मचा कर।

५ झुम्मा (मुँह) नष्ट कर।

६ जंग में गरज कर।

७ ऊँचे गर्ववाले।

८ हाथियों के समूह।

९, १०, ११ लाखों दुःख खलन से अगम (भर के) रण (में) अलक्षित पृथ्वी भर दी। पृथ्वी नहीं दिखाई देती थी, केवल मृत योद्धा दिखाई देते थे।

१२ मोल लेकर।

१३ नवल (नई तरह से) लड़ कर।

१४ पीछे से बढ़ कर बहलोल के बराबर पहुँच कर शिवाजी ने उसे जीत लिया। इस छन्द में मार्च सन् १६७२ वाले पनाले के युद्ध तथा १६७२ वाले सल्हेरि के युद्ध के कथन हैं।

लिय जिति दिल्ली मुलुक सब सिव सरजा जुरि जंग।
भनि भूषन भूपति भजे भंगग्गरब तिलंग ॥
भंगग्गरब्ब तिलंगग्गयउ कलिंगग्गलि अति।
दुन्दद्दबि दुहु दंदद्दलनि[1] बुलंदद्दहसति[2] ॥
लच्छच्छिन करि म्लेच्छच्छय किय[3] रच्छच्छबि[4] छिति।
हल्लग्गि[5] नरपल्लरि परनल्लिय[6] जिति ॥ ३५७ ॥

पुनः—छप्पय

मुंड कटत कहुँ रुंड नटत कहुँ सुंड पटत घन। गिद्ध लसत कहुँ सिद्ध हँसत सुख वृद्धि रसत मन॥ भूत फिरत करि बूत भिरत सुर दूत घिरत तहँ। चंडि नचत गन मंडि रचत धुनि

---

१ युद्ध में दब कर दोनों दलों (तिलंग और कलिंग) को दंद (दुःख) हुआ। तिलंग और कलिंग उस समय गोलकुंडा के राज्य में थे। यह वर्णन सन् १६७०-७२ का है, जब गोलकुंडा दबकर आपको कर देने लगा था। तिलंग का कोई स्वतंत्र राजा न था वरन् गोलकुंडा के अधीनस्थ राजे भागे होंगे। १६७०-७२ में शिवाजी ने गोलकुंडा के सब प्रान्त लूटे और स्वयं सुल्तान से एक करोड़ रुपए लूट में लिए।

२ बड़ा डर हुआ।

३ क्षण भर में लाखों म्लेच्छों का क्षय करके।

४ भूमि (भारत भूमि) की छबि की रक्षा की।

५ हल्ला (धावा) कर।

६ परनाले (छंद १०७ का नोट देखिये) को जीत लिया।

डंडि[1] मचत जहँ ॥ इमि ठानि घोर घमसान अति भूपन तेज कियो अटल। सिवराज साहि सुव खग्ग वल दलि अडोल वहलोल दल ॥ ३५८ ॥

क्रुद्ध फिरत सति युद्ध जुरत नहिं रुद्ध मुरत भट। खग्ग बजत अरि बग्ग[2] तजत सिर पग्ग सजत चट ॥ ढुक्कि फिरत मद झुक्कि भिरत करि कुक्कि गिरत गनि। रंग रकत[3] हर संग[4] छकत चतुरंग थक्कत भनि ॥ इमि करि संगर अति ही विषम भूपन सुजस कियो अचल। सिवराज साहि सुव खग्ग वल दलि अडोल वहलोल दल ॥ ३५९ ॥

पुनरपि—कवित्त मनहरण

वानर वरार[5] बाघ वैहर विलार विग[6] बगरे वराह जान-बरन के जोम हैं। भूपन भनत भारे भालुक भयानक हैं भीतर भवन भरे लीलगऊ लोम[7] हैं ॥ ऐंड़ायल गज्ज गन गैंड़ा गररात गनि गेहन में गोहन[8] गरुर गहे गोम[9] हैं। सिवाजी कि

---

१ दंड लेने की; डाँड़ लेने की।

२ घोड़े की वाग।

३ मजे के नाच में। रकत फ़ारसी में नाच को कहते हैं।

४ साथी गण (यहाँ पर हर के साथी अर्थात् भूत प्रेत)।

५ वरियार। ६ भेड़िया।

७ लोमड़ी।

८ गोह नामक जंतुओं ने।

९ स्थान। (यह शब्द गाँव से निकला है)

धाक, मिले खल कुल खाक, बसे खलन के खेरन खबीसन के खोम[1] हैं ॥ ३६० ॥

तुरमती[2] तहखाने तीतर गुसुलखाने सूकर सिलहखाने कूकत करीस हैं। हिरन हरमखाने स्याही हैं सुतुरखाने पाढ़े[3] पीलखाने औ करंजखाने[4] कीस हैं ॥ भूषन सिवाजी गाजी खग्ग सों खपाए खल, खाने खाने खलन के खेरे भये[5] खीस हैं। खड़गी[6] खजाने खरगोस खिलवतखाने[7] खीसैं खोले खसखाने खाँसत खबीस हैं ॥ ३६१ ॥

अन्यच्च—दोहा

औरन के जाँचे कहा नहिं जाँच्यो सिवराज ?।
औरन के जाँचे कहा जो जाँच्यो सिवराज ? ॥ ३६२ ॥

यमक अनुप्रास

लक्षण—दोहा

भिन्न अरथ फिरि फिरि जहाँ ओई अच्छर वृंद।
आवत हैं, सो जमक करि बरनत बुद्धि बुलंद ॥ ३६३ ॥

---

१ कौम; जाति। २ तुरमुत्ती एक शिकारी पक्षी।
३ एक प्रकार का मृग। ४ मुरगों के रहने का घर।
५ खलों का एक एक घर नष्ट हो गया।
६ गैंडा।
७ एकांत का कमरा।

उदाहरण—कवित्त मनहरण

पूनावारी[1] सुनि कै अमीरन की गति लई भागिवे को मीरन समीरन की गति है। माख्यो जुरि जंग जसवंत[2] जसवंत[3] जाके संग केते रजपूत[4] रजपूत पति[5] है ॥ भूषन भनै यों कुलभूषन भुसिल सिवराज! तोहि दीन्ही सिव राज वरकति है। नौहू खंड दीप[6] भूप भूतल के दीप[7] आजु समै के दिलीप[8] दिलीपति को सिदति[9] है ॥ ३६४ ॥

पुनरुक्ति वदाभास

लक्षण—दोहा

भासति है पुनरुक्ति सी नहिं निदान पुनरुक्ति।
वदाभास-पुनरुक्ति सो भूषन वरनत युक्ति ॥ ३६५ ॥

---

१ शाइस्ता खाँ का इशारा है।

२ जसवंत सिंह (छंद नं० ३५ का नोट) जसवंत में यमकानुप्रास है।

३ यशवाला; यशी।

४ राजपूत।

५ राजपूतों का स्वामी। राजपूत पति जसवन्त जसवन्त माख्यो है, जाके संग केते राजपूत (थे)।

६ द्वीप सात हैं।

७ चिराग।

८ रघु के पिता राजा दिलीप।

९ सीदति, कष्ट देती है।

उदाहरण—कवित्त मनहरण

अरिन के दल सेन[1] संगर मैं समुहाने टूक टूक सकल कै डारे घमसान मैं। वार वार रुरो महानद परवाह पूरो वहत है हाथिन के मद जल दान मैं ॥ भूषन भनत महा वाहु भौंसिला भुवाल सूर,[2] रवि कैसो तेज तीखन कृपान मैं। माल मकरंद जू के नंद कला निधि तेरो सरजा सिवाजी जस जगत[3] जहान मैं ॥ ३६६ ॥

चित्र

लक्षण—दोहा

लिखे सुने अचरज वढ़ै रचना होय विचित्र ।
कामधेनु आदिक घने भूषन वरनत चित्र ॥ ३६७ ॥

उदाहरण (कामधेनु चित्र) । माधवी[4] सवैया

---

१ यवन (में) संग रंगे अर्थात् साथ ही साथ मरे पड़े हैं।

२ वीर।

३ जागता है।

४ इस सवैया में "वसुसा" अर्थात् आठ सगण होते हैं। सगण के तीन अक्षरों में प्रथम दो लघु और अंतिम गुरु होता है। देवजी एक दूसरे प्रकार की सवैया को माधवी कहते हैं और आठ सगण वाली सवैया का वर्णन नहीं करते। कविराज श्री सुखदेव मिश्र उसी सवैया को "वाम" कहते हैं और इस "वसुसा" वाली का नाम उन्होंने माधवी लिखा है। भूषण जी का यह कामधेनु चित्रवाला छंद बिल्कुल अच्छा नहीं। इसमें ७×४=२८ छंद अवश्य बनते हैं। ऐसे छंद प्रायः अच्छे हो भी नहीं सकते।

ध्रुव जो	गुरता	तिनको	गुरु भूषन	दानि बड़ो	गिरजा	धिव है ।
हुव जो	हरता	रिनको[1]	तरु[2] भूषन	दानि बड़ो	सिरजा[3]	छिव[4] है ।
भुव जो	भरता	दिनको[5]	नरु भूषन	दानि बड़ो	सरजा	सिव है ।
तुव जो	करता	इनको	अरु भूषन	दानि बड़ो	बरजा[6]	निव है ३६८

संकर *

लक्षण—दोहा

भूषन एक कवित्त में भूषन[7] होत अनेक ।
संकर ताको कहत हैं जिन्हैं कवित की टेक ॥ ३६९ ॥

उदाहरण—मनहरण दण्डक

ऐसे बाजिराज देत महाराज सिवराज भूषन जे बाज की
समाजैं निदरत[8] हैं । पौन[9] पाय हीन, दृग घूंघट में लीन, मीन

---

१ (औरों के) कर्ज को । २ कल्प वृक्ष ।
३ रचा हुआ, पैदायशी । ४ छीव, उन्मत्त । ५ वर्तमान समय का ।
६ बर जानिव है; बड़ा जानकार (ज्ञाता) है ।
७ अलंकार ।
८ अनुप्रास, ललितोपमा, एवं प्रतीप अलंकार ।
९ अनुप्रास एवं अधिक तद्रूप रूपक ।

* संसृष्टि में विविध अलंकार एक ही स्थान पर होकर भी तिलतन्दुलवत् अलग रहते हैं, किन्तु संकर में नीरक्षीरवत् मिले होते हैं । संसृष्टि आपने नहीं कही है । जो संकर के उदाहरण दिये हैं वह बहुधा संसृष्टि के हैं ।

जल में बिलीन, क्यों बराबरी करत हैं ? ॥ सबते[1] चलाक चित तेऊ कुलि आलम के रहैं उर अंतर में धीर न धरत हैं। जिन[2] चढ़ि आगे को चलाइयतु तीर, तीर[3] एक भरि तऊ तीर पीछे ही परत हैं ॥ ३७० ॥

ग्रन्थालंकार नामावली। गीतिका छंद[4]

उपमा अनन्वै कहि बहुरि उपमा प्रतीप प्रतीप। उपमेय[5] उपमा है बहुरि मालोपमा कवि दीप ॥ ललितोपमा रूपक बहुरि परिनाम पुनि उल्लेख। सुमिरन भ्रमो संदेह सुद्धापन्हुत्यो सुभ वेख ॥ ३७१ ॥

हेतूअपन्हुत्यो बहुरि परजस्तपन्हुति जान। सुभ्रांत पूर्ण अपन्हुत्यो छेकाअपन्हुति मान ॥ वर कैतवापन्हुति गनो उतप्रेक्ष बहुरि बखानि। पुनि रूपकातिसयोक्ति भेदक अतिसयोक्ति सुजानि ॥ ३७२ ॥

अरु अक्रमातिसयोक्ति चंचल अतिसयोक्तिहि लेखि। अत्यं-तअतिसैउक्ति पुनि सामान्य चारु बिसेखि ॥ तुलियोगिता दीपक अवृति प्रतिवस्तुपम दृष्टांत। सु निदर्सना व्यतिरेक और सहोक्ति वरनत शांत ॥ ३७३ ॥

---

१ अनुप्रास एवं प्रतीप।

२ यमक एवं अत्युक्ति।

३ जितनी दूर पर जाकर तीर गिर पड़े।

४ यह छब्बीस कला का छंद होता है। इसके प्रत्येक पद के अंत में लघु अक्षर होता है। ५ उपमेयोपमा।

सु विनोक्ति भूपन समासोक्तिहु परिकरौ अरु वंस। परिकर सु अंकुर श्लेप त्यों अप्रस्तुतोपरसंस ॥ परयायउक्ति गनाइए व्याजस्तुतिहु आक्षेप। वहुरो विरोध विरोधभास विभावना सुख खेप ॥ ३७४ ॥

सु विसेपउक्ति असंभवौ वहुरे असंगति लेखि। पुनि विपम सम सुविचित्र प्रहपन[1] अरु विपादन पेखि ॥ कहि अधिक अन्योन्यहु विसेप व्यघात भूपन चारु। अरु गुंफ एकावली मालादीपकहु पुनि सारु ॥ ३७५ ॥

पुनि यथासंख्य वखानिए परजाय अरु परिवृत्ति। परिसंख्य कहत बिकल्प हैं जिनके सुमति संपत्ति ॥ वहुखो समाधि समुच्चयो पुनि प्रत्यनीक वखानि। पुनि कहत अर्थापत्ति कविजन काव्य-लिंगहि जानि ॥ ३७६ ॥

अरु अर्थअंतरन्यास भूपन प्रौढ़उक्ति गनाय। संभावना मिथ्याध्यवसिततऽरु यों उलासहि गाय ॥ अवज्ञा अनुज्ञा लेस तदगुन पूर्वरूपउलेखि। अनुगुन अतदगुन मिलित उन्मीलितहि पुनि अवरेखि ॥ ३७७ ॥

सामान्य और विशेष पिहितौ प्रश्न उत्तर जानि। पुनि व्याज-उक्ति रु लोकउक्ति सु छेकउक्ति वखानि ॥ वक्रोक्ति जानि सुभाव उक्तिहु भाविकौ निरधारि। भाविकछविहु सु उदात्त कहि अत्युक्ति बहुरि बिचारि ॥ ३७८ ॥

---

१ प्रहर्पण।

बरने निरुक्तिहु हेतु पुनि अनुमान कहि अनुप्रास। भूपन भनत पुनि जमक गनि पुनरुक्तिवद आभास॥ युत चित्र संकर एक सत भूपन कहे अरु पाँच[1]। लखि चारु ग्रंथन निज मतो[2] युत सुकवि मानहु साँच ॥३७९॥

दोहा

सुभ सत्रहसै तीस पर बुध सुदि[3] तेरसि मान।
भूपण सिव भूपन कियो पढ़ियो सुनो सुजान॥ ३८०॥

आशीर्वाद—मनहरण दंडक

एक प्रभुता को धाम, सजे तीनो वेद काम, रहैं पंच आनन षड़ानन सरवदा। सातौ वार आठौ याम जाचक नेवाजे नव

---

१ एक+सत+पाँच=१०६ अलंकार। भूपण जी १०६ अलंकार वर्णन करना लिखते हैं, पर ग्रन्थ में १०९ अलंकार पाए जाते हैं; लुप्तोपमा, न्यूनाधिक रूपक और गम्यगुप्तोत्प्रेक्षा के लक्षण और उदाहरण ग्रन्थ में दिए हैं (छंद नं० ३६–३८, ६४–६६ और १०६–१०८ देखिये) और ये सब छंद भूपण कृत अवश्य जान पड़ते हैं, पर इनका नाम इस सूची में नहीं है। कदाचित् भूपण जी ने इन्हें मुख्य अलंकारों मे न माना हो।

२ दूसरे आचार्यों के मत के अतिरिक्त इन्होंने कुछ बातें अपने ही मत से लिखी हैं। जान पड़ता है कि इसी कारण कभी कभी इनके लक्षण अन्य आचार्यों से भिन्न हो जाते हैं (छंद नं० ६०, १४६, २५५ और २६७ आदि देखिए)।

३ संवत् १७३० बुध सुदी १३ को ग्रन्थ समाप्त हुआ, पर किस मास में, सो नहीं लिखा। इसका ब्योरा भूमिका में देखिए। कार्तिक ठीक बैठता है।

अवतार थिर राजै कृपन[1] हरि गदा॥ सिवराज भूपन अटल रहै तौलौं जौलौं त्रिदस भुवन सब, गंग औ नरमदा। साहि तनै साहसिक भौंसिला सुरज वंस दासरथि राज तौलौं सरजा थिर सदा॥ ३८१॥

पुनः—दोहा

पुहुमि पानि रवि ससि पवन जब लौं रहै अकास।
सिव सरजा तब लौं जियौ भूपन सुजस प्रकास॥ ३८२॥

इति श्री कवि भूषण विरचिते शिवराज भूषणे
अलंकार वर्णनं समाप्तम्।

शुभमस्तु

श्री शिवा बावनी[2]

छप्पय[3]

कौन करै बस वस्तु कौन यहि लोक बड़ो अति?। को साहस को सिंधु कौन रज लाज धरे मति?॥ को चकवा को

---

१ कृपाण; तलवार।

२ जैसा कि भूमिका में लिखा गया है, यह कोई स्वतंत्र ग्रन्थ नहीं, वरन् भूषण जी के ५२ छंदों का एक संग्रह मात्र है। इसी हेतु प्रचलित प्रतियों का क्रम छोड़ कर हमने अपना नया क्रम स्थिर किया है; क्योंकि हम उक्त प्रचलित क्रम को बहुत ही अनुपयुक्त समझते हैं।

३ यह छंद "स्फुट कविता" से लेकर उपयुक्त जान हमने यहाँ रख दिया है।

सुखद बसै को सकल सुमन महि ? । अष्ट सिद्धि नव निद्धि देत माँगे को सो कहि ? ।। जग बूझत उत्तर देत इमि कवि भूषन कवि कुल सचिव । दच्छिन नरेस सरजा सुभट साहिनंद मकरंद[1] सिव ।। १ ।।

कवित्त–मनहरण

साजि चतुरंग वीर रंग में तुरंग चढ़ि सरजा सिवाजी जंग जीतन चलत है । भूषन भनत नाद विहद नगारन के नदी नद मद गब्बरन[2] के रलत है ।। ऐल[3] फैल खैल-भैल[4] खलक में गैल गैल गजन की ठेल पेल सैल उसलत है । तारा सो तरनि धूरि धारा में लगत, जिमि थारा पर पारा पारावार[5] यों हलत है ।। २ ।।

बाने[6] फहराने घहराने घंटा गजन के नाहीं ठहराने राव राने देस देस के । नग भहराने ग्राम नगर पराने सुनि बाजत निसाने[7] सिवराज जू नरेस के[8] ।। हाथिन के हौदा उकसाने

---

१ माल मकरंद ।

२ गर्व-धारियों के ।

३ अहिलो, बहुत विशेष ।

४ खलभल । ५ समुद्र । ६ एक झंडोदार अस्त्र ।

७ निशान का अर्थ झंडा है; पर भूषणजी ने उसे डंका के अर्थ में लिखा है ।

८ सरदार कवि ने इसके द्वितीय पद के अंतिम भाग को यों लिखा है–"सुनि बाजत निशाने भाउ सिंहजू नरेस के" और तीसरे पद का प्रथमार्द्ध यों––"ककुभ

कुंभ कुञ्जर के भौन को भजाने अलि छूटे लट केस के। दल के दरारे[1] हुते कमठ करारे फूटे केरा कैसे पात विहराने फन सेस के ॥ ३ ॥

प्रेतिनी पिसाचऽरु निसाचर निसाचरिहु मिलि मिलि आपुस मैं गावत वधाई है। भैरौं भूत प्रेत भूरि भूधर भयंकर से जुत्थ जुत्थ जोगिनी जमाति जुरि आई है ॥ किलकि किलकि कै कुतूहल करति काली, डिम डिम डमरू दिगंवर वजाई है। सिवा पूँछैं सिव सौं समाज आजु कहाँ चली, काहू पै सिवा नरेस भृकुटी चढ़ाई है ? ॥ ४ ॥

वद्दल न होहिं दल दच्छिन घमंड माहिं घटा हू न होहिं दल सिवाजी हँकारी के। दामिनी दमंक नाहिं खुले खग्ग वीरन के, वीर सिर छाप लखु तीजा असवारी[2] के ॥ देखि देखि मुगलों की हरमैं भवन त्यागैं उझकि उझकि उठैं वहत वयारी के। दिल्ली मति भूली कहैं वात घनघोर घोर वाजत नगारे जे सितारे गढ़ धारी के ॥ ५ ॥

वाजि गजराज सिवराज सैन साजतहि दिली दिलगीर दसा

के कुंजर कसमसाने गंग भनै"। परंतु शब्दों एवं वाक्य-रचना से यह भूषण कृत जँचता है। इसके अतिरिक्त गंगजी अकवर शाह के समय में थे, पर भाऊसिंह सन् १६५८ ईसवी में बूँदी की गद्दी पर वैठे; सो यह कवित्त गंगकृत नहीं हो सकता।

१ सेना के दरेरे (दवाव) से।

२ संभवतः तीज का चंद्रमा ।

दीरघ दुखन की। तनियाँ न तिलक सुथनियाँ पगनियाँ न घामै घुमरात छोड़ि सेजियाँ सुखन की॥ भूपन भनत पतिबाँह बहियाँ न[1] तेऊ छहियाँ छबीली ताकि रहियाँ रुखन की[2]। बालियाँ बिथुरि जिमि आलियाँ[3] नलिन पर लालियाँ मलिन मुगलानियाँ मुखन की॥ ६॥

कत्ता की कराकनि[4] चकत्ता को कटक काटि कीन्ह सिव-राज बीर अकह कहानियाँ। भूपन भनत तिहु लोक में तिहारी धाक दिल्ली औ बिलाइति सकल बिललानियाँ॥ आगरे अगारन[5] ह्वै फाँदती कगारन छ्वै बाँधती न बारन मुखन कुम्हिलानियाँ। कीबी कहैं कहा[6] औ गरीबी गहे भागी जाहिँ बीबी गहे सूथनी सु नीबी[7] गहे रानियाँ॥ ७॥

ऊँचे घोर मंदर[8] के अंदर रहन वारी ऊँचे घोर मंदर[9] के अंदर रहाती हैं। कंद[10] मूल भोग करैं कंद[11] मूल भोग

---

१ पति की बाँहों से नहीं बहीं अर्थात् अलग नहीं हुई।

२ रूखों (पेड़ों) को।

३ अलि; भौंरे।

४ कड़ाके से; जोर से चलने से।

५ मकानों में।

६ कहती हैं कि क्या करेंगी ?

७ नारा, धोती का बंधन, धोती, लहँगा।

८ मंदिर, मकान। ९ पर्व्वत।

१० कंद मूलक (व्यंजन); ऐसे व्यंजन जिनमें कंद (मीठा) पड़ा हो।

११ जड़ें और जमीन के अंदर होनेवाले फल।

करैं, तीनि[1] वेर खातीं सो तो तीनि[2] वेर खाती हैं ॥ भूपन[3] सिथिल अंग भूपन[4] सिथिल अंग विजन[5] डुलातीं तेव[6] विजन[7] डुलाती[8] हैं। भूपन भनत सिवराज वीर तेरे त्रास नगन[9] जड़ातीं ते वै नगन[10] जड़ाती हैं ॥ ८ ॥

उतरि पलंग ते न दियो है धरा पै पग तेऊ सगवग निसि दिन चली जाती हैं। अति अकुलातीं मुरझातीं ना छिपातीं गात वात न सोहाती बोलैं अति अनखाती हैं ॥ भूपन भनत सिंह साहि के सपूत सिवा तेरी धाक सुने अरि नारी बिललाती हैं। कोऊ करैं घाती कोऊ रोतीं पीटि छाती घरैं तीनि वेर खातीं ते वै वीनि वेर खाती हैं ॥ ९ ॥

अंदर ते निकसीं न मंदिर को देख्यो द्वार विन रथ पथ ते उघारे पाँव जाती हैं। हवा हू न लागती ते हवा ते विहाल भईं लाखन की भीरि में सम्हारतीं न छाती हैं ॥ भूपन भनत सिव

---

१ तीन मर्तवा।

२ वेरी के तीन फल।

३ जेवरों से।

४ भूखों से।

५ पंखा।

६ ते अव।

७ अकेली।

८ मारी मारी फिरती हैं।

जेवरों में नगीने जड़वाती थीं। १० नंगी जाड़ा खा रही हैं।

राज तेरी धाक सुनि हयादारी[1] चीर फारि मन झुझलाती हैं। ऐसी परीं नरम* हरम बादसाहन की नासपाती खातीं ते बनासपाती[2] खाती हैं॥ १०॥

अतर गुलाब रस चोवा[3] घनसार सब सहज सुवास की सुरति बिसराती हैं। पल भरि पलँग ते भूमि न धरति पावँ भूलीं खान पान फिरैं वन विललाती हैं॥ भूषन भनत सिवराज तेरी धाक सुनि दारा हार बार न सम्हार अकुलाती हैं। ऐसी परी नरम हरम बादसाहन की नासपाती खाती ते बनासपाती खाती हैं॥ ११॥

सोंधे[4] को अधार किसमिस जिनको अहार चारि को सो अंक लंक चंद सरमाती हैं। ऐसी अरि नारी सिवराज वीर तेरे त्रास पायन मैं छाले परे कंद मूल खाती हैं॥ ग्रीपम तपनि एती तपती न सुनि कान कंज कैसी कली बिनु पानी मुरझाती हैं। तोरि तोरि आछे[5] से पिछौरा सो निचोरि मुख कहैं "अब कहाँ पानी मुकतों मैं पाती हैं?"॥ १२॥

साहि सिरताज औ सिपाहिन मैं पातसाह अचल सुसिंधु केसे जिनके सुभाव हैं। भूपन भनत परी शस्त्र रन सिवा धाक

---

* कमजोर। बुन्देलखंडी शब्द।

१ हया (शर्म) रखनेवाली।

२ वनस्पति।

३ कई सुगंधित वस्तुओं से बनाया हुआ द्रव पदार्थ।

४ सुगंध।

५ अच्छे से अर्थात् बढ़िया।

काँपत रहत न गहत चित चाव हैं ॥ अथह विमल जल कालिंदी के तट केते परे युद्ध विपति के मारे उमराव हैं। नाव भरि बेगम उतारैं बाँदी डोंगा भरि साहि मिसी मक्का उतरत दरियाव हैं ॥ १३ ॥

किवले[1] के ठौर बाप बादसाह साहिजहाँ ताको कैद कियो मानो मक्के आगि लाई है। बड़ो भाई दारा वाको पकरि कै कैद कियो मेहेरहु[2] नाहिं वाको जायो सगो भाई है ॥ बंधु तौ मुरादबक्स वादि चूक[3] करिबे को बीच लै कुरान खुदा की कसम खाई है। भूषन सुकवि कहै सुनो नवरंगजेब एते काम कीन्हें फेरि पादसाही पाई है ॥ १४ ॥

हाथ तसबीह[4] लिए प्रात उठि बंदगी को आपही कपट रूप कपट सु जप के। आगरे में जाय दारा चौक मैं चुनाय लीन्हों छत्र ही छिनायो मनो बूढ़े मरे बप के ॥ कीन्हो है सगोत घात सो मैं नाहिं कहौ फेरि पील पै तोरायो[5] चारि चुगुल के गप[6] के। भूषन भनत छरछंदी मतिमंद महा सौ सौ चूहे खाय कै बिलारी बैठी तप के ॥ १५ ॥

---

१ ऊँचा। पूज्य। किबलागाही।

२ मेहरबानी भी।

३ दगाबाजी।

४ जपने को मुसल्मानी माला।

५ हाथी से मरवा डाला।

६ गप्प मारने से, झूठ बोलने से।

कैयक हजार जहाँ गुर्ज-बरदार ठाढ़े करि के हुस्यार नीति पकरि समाज की। राजा जसवंत को बुलाय के निकट राखे तेऊ लखैं नीरे जिन्हें लाज स्वामि-काज की॥ भूपन तबहुँ ठठकत ही गुसुलखाने सिंह लौं झपट[1] गुनि साहि महराज की। हटकि हथ्यार फड़ बाँधि उमरावन को कीन्ही तब नौरँग ने भेंट सिवराज की॥ १६॥

सबन के ऊपर ही ठाढ़ो रहिबे के जोग ताहि खरो कियो जाय जारन के नियरे। जानि गैर मिसिल गुसीले गुसा धरि उर कीन्ही ना सलाम न बचन बोले सियरे॥ भूपन भनत महावीर बलकन लाग्यो सारी पातसाही के उड़ाय गये जियरे। तमक ते लाल[2] मुख सिवा को निरखि भये स्याह मुख नौरँग सिपाह मुख पियरे॥ १७॥

राना भो चमेली और बेला सब राजा भए ठौर ठौर रस लेत नित यह काज है। सिगरे अमीर आनि कुंद होत घर घर भ्रमत भ्रमर जैसे फूलन की साज है॥ भूपन भनत सिवराज वीर तैंहीं देस देसन में राखी सब दच्छिन कि लाज है। त्यागे सदा षटपद-पद अनुमानि यह अलि नवरंगजेब चंपा सिवराज है॥ १८॥

---

१ इस छंद में रौद्र एवं भयानक रस है।

२ दिल्ली में कुछ लोगों ने ऐसी हवा उड़ा रक्खी थी कि शिवाजी कभी कभी २५ हाथ का एक डग रखते थे। इस छंद में कथित प्रायः सभी बातें ऐतिहासिक हैं।

कूरम[1] कमल कमधुज[2] है कदमफूल गौर हैं गुलाब राना[3] केतकी विराज है। पाँडरि पँवार जुही सोहत है चंद्रावल सरस बुँदेला सो चमेली साज बाज है॥ भूपन भनत मुचकुंद बड़गूजर हैं बघेले बसंत सब कुसुम समाज है। लेइ रस एतेन को बैठि न सकत अहै अलि नवरंगजेब चंपा सिवराज है[4] ॥ १९ ॥

देवल गिरावते फिरावते निसान अली ऐसे डूबे राव राने सबी गए लबकी[5]। गौरा गनपति आप औरन को देव ताप आप के मकान सब मारि गये दबकी ॥ पीरा पयगंबरा दिगंबरा दिखाई देत सिद्ध की सिधाई गई रही बात रब[6] की। कासिहु ते कला जाती मथुरा मसीद होती सिवाजी न होतो तौ सुनति[7] होति सब की ॥ २० ॥

---

१ महाराज जयपुर कछवाहे होने के कारण कूर्मवंशी कहलाते हैं।

२ महाराज जोधपुर। कबंधन। युद्ध में इनके पूर्वपुरुष जयचंद महाराज कन्नौज का कबंध उठा था, इसी से उनके वंशी कबंधज कहलाते हैं।

३ महाराना उदयपुर।

४ इस छंद में सम अभेद रूपक है।

५ लवलवा गए, निर्बल हो गए। यह भी हो सकता है कि लवा [छोटा पक्षी] के समान हो गए।

६ खुदा, (यहाँ पर) मुसलमानी देवता।

७ खतना, मुसल्मानी।

साँच को न मानै देवी देवता न जानै अरु ऐसी उर आनै मैं कहत बात जब की। और पातसाहन के हुती चाह हिंदुन की अकबर साहजहाँ कहैं साखि तब की ॥ बब्बर के तिब्बर[1] हुमायूँ हद्द बाँधि गये दो मैं एक करी ना कुरान[2] वेद ढब की। कासिहु की कला जाती मथुरा मसीद होती सिवाजी न हो तो तौ सुनति होति सब की ॥ २१ ॥

कुंभकर्न असुर औतारी अवरंगजेब कीन्ही कत्ल मथुरा[3] दोहाई फेरी रब की। खोदि डारै देवी देव सहर मुहल्ला बाँके लाखन तुरुक कीन्हे छूटि गई तब की ॥ भूपन भनत भाग्यो कासीपति विश्वनाथ[4] और कौन गिनती मैं भूली गति भव की। चारौं वर्न धर्म्म छोड़ि कलमा[5] नेवाज पढ़ि सिवाजी न होतो तौ सुनति होति सब की ॥ २२ ॥

---

१ तीन बार।

२ कुरान और वेद की जो दो ढबें हैं उनको एक में न किया, अर्थात् वेद की रीतियों के उठाने का प्रयत्न न किया।

३ सन् १६६९ ई. में औरंगजेब ने देहरा केशवराय को। मथुरा में तोड़ा। इसे महाराज वीरसिंहदेव बुंदेला ने ३३ लक्ष मुद्रा लगाकर बनवाया था।

४ औरंगजेब ने विश्वनाथजी का मंदिर सन् १६६९ ई० में तोड़ा। उसी समय कहा जाता है कि श्रीविश्वनाथजी की मूर्ति मन्दिर से ज्ञानवापी नामक कूप में (जो मन्दिर के पिछवाड़े है) जाकर कूद पड़ी।

५ कलमा यह है—"ला इलाहे इल्लिल्लाः मुहम्मद उल्रसूलिल्लाः" अर्थात् सिवाय

दावा पातसाहन सों कान्हो सिवराज वीर जेर कीन्हो देस हद बाँध्यों दरबारे[1] से। हठी मरहठी तामें राख्यो ना मवास[2] कोऊ छीने हथियार डोलें वन वनजारे से॥ आमिप अहारी माँसहारी दै दै तारी नाचें खांड़े तोड़ किरचें उड़ाये सब तारे से। पील सम डील जहाँ गिरि से गिरन लागे मुंड मतवारे गिरें झुण्ड मतवारे[3] से॥ २३॥

छूटत कमान[4] और तीर गोली बानन के मुसकिल होति मुरचान हू की ओट में। ताही समै सिवराज हुकुम के हल्ला कियो दावा बाँधि पर हला वीर भट जोट में॥ भूपन भनत तेरी हिम्मति कहाँ लौं कहौं किम्मति इहाँ लगि है जाकी भट झोट[5] में। ताव दै दै मूछन कँगूरन पै पाँव दै दै अरि मुख घाव दै दै कूदे परें कोट[6] में॥ २४॥

उते पातसाह जू के गजन के ठट्ट छूटे उमड़ि घुमड़ि मतवारे

परमेश्वर के कोई सबल नहीं है, मुहम्मद परमेश्वर का वसीठी है। मुसलमानों के अनुसार जो कोई ये दोनो बातें मानता हो, वही मुसल्मान है।

1 दरबार से, दरबार ही से, खास दरबार से।

२ किला, मोर्चा।

३ पूर्णोपमा अलंकार।

४ तोप।

५ झुरमुट, समूह।

६ इस छंद में पूर्ण वीर रस एवं पदार्थावृत्त अलंकार है।

घन भारे हैं। इते सिवराज जूके छूटे सिंहराज औ विदारे कुंभ करिन के चिक्करत कारे हैं ॥ फौजें सेख सैयद मुगल औ पठानन की मिलि इखलास[1] काहू मीर न सम्हारे हैं। हद हिंदुवान की विहद तरवारि राखि कैयो वार दिली के गुमान झारि डारे हैं ॥ २५ ॥

जीत्यो सिवराज सलहेरि को समर सुनि सुनि असुरन[2] के सु सीने धरकत हैं। देवलोक नागलोक नरलोक गावैं जस अजहूँ लौं परे खग्ग दाँत खरकत हैं ॥ कटक कटक काटि कीट से उड़ाय केते भूपन भनत मुख मोरे सरकत हैं। रनभूमि लेटे अधकटे फरलेटे परे रुधिर लपेटे पठनेटे फरकत हैं ॥ २६ ॥

मालती सवैया

केतिक देस दल्यो दल के वल दच्छिन चंगुल चापि कै चाख्यो। रूप गुमान हर्‍यो गुजरात को सूरति[3] को रस चूसि कै नाख्यो[4] ॥ पंजन पेलि मलिच्छ मले सव सोई वच्यो जेहि

---

१ सलहेरि के युद्ध में मुगलों का सेनापति इखलास खाँ था। किसी किसी प्रति में अफजल खाँ इसके स्थान पर लिखा है। वह बीजापुरी सरदार था किन्तु यहाँ सलहेरि में लड़नेवाले मुगल सरदार का वर्णन है।

२ मुसलमान (टाड देखिए)।

३ सन् १६६४ और १६७० ई० में शिवाजी ने सूरत लूटा ।

४ गुजराती भाषा में—फेंक दिया ।

दीन ह्वै भाख्यो। सो रँग है सिवराज बली जेहि नौरँग में रँग[1] एक न राख्यो ॥ २७ ॥

सूबा निरानंद बादरखान गे लोगन बूझत ब्योत बखानो। दुग्ग सबै सिवराज लिये धरि चारु बिचारु हिये यह आनो॥ भूषन बोलि उठे सिगरे हुतो पूना में साइतखान को थानो। जाहिर हैं जग में जसवंत लियो गड़सिंह में गीदर[2] बानो ॥ २८ ॥

कवित्त मनहरण

जोरि करि जैहैं जुमिला[3] हू के नरेस पर तोरि अरि खंड खंड सुभट समाज पै। भूषन असाम रूम बलख बुखारे जैहैं चीन सिलहट[4] तरि जलधि जहाज पै॥ सब उमरावन की हठ कूरताई देखौ कहैं नवरंगजेब साहि सिरताज पैं। भीख माँगि खैहैं बिनु मनसब रैहैं पै न जैहैं हजरत महाबली सिव-राज पै ॥ २९ ॥

चंद्रावल चूर करि जावली जपत[5] कीन्हो मारे सब भूप

---

१ काव्यलिंग अलंकार।

२ जसवंतसिंह ने सिंहगढ़ को सन् १६६३ में नाम मात्र को घेरा, परंतु फिर कुछ किए बिना मोहासिरा उठा लिया। यह छंद स्फुट कविता से यहाँ रक्खा गया है।

३ शि० भू० छंद नं० ११२ देखिए।

४ आसाम में है। वहाँ की नारंगी मशहूर है।

५ शि० भू० छंद नं० २०६ का नोट देखो। चंद्रावल, चंदरावल, चंद्रराव मोरे।

औ सँहारे पुर धाय के । भूपन भनत तुरकान दलथंभ[1] काटि अफजल मारि डारे तलब[2] बजाय के ॥ एदिल सौं बेदिल हरम कहैं बार बार अब कहा सोवो सुख सिंहहि जगाय के । भेजना है भेजो सो रिसालैं[3] सिवराज जू की बाजीं करनालैं परनालै पर आय के ॥ ३० ॥

मालती सवैया

साजि[4] चमू जनि जाहु सिवा पर सोवत जाय न सिंह जगावो ।
तासों न जंग जुरौ न भुजंग महा विप के मुख मैं कर नावो ॥
भूपन भापत बैरिबधू जनि एदिल औरँग लौं दुख पावो । तासु सलाह कि राह तजो मति, नाह दिवाल कि राह न धावो ॥ ३१ ॥

छप्पय

विझपूर[5] विदनूर[6] सूर सर धनुप न संधहिँ । मंगल विनु

---

१ दल थंभ का कोई पता नहीं लगता । स्यात् यह रणथंभ हो, जहाँ का राना हम्मीर देव प्रसिद्ध हो गया है अथवा दल (फौज) का थांमनेवाला (आधार) सेनापति ।

२ डंका ।

३ खिराज ।

४ यह छंद स्फुट कविता से आया है ।

५ किसी विझपुर का पता नहीं लगता । शायद यह बिजैपुर (बीजापुर) हो ।

६ यहाँ एक रानी राज्य करती थी । उसके कारपरदाज़ उससे बिगड़े हुए थे ।

मल्लारि[1] नारि धम्मिल[2] नहिँ बंधहिँ ॥ गिरत गब्भ[3] कोटै गरब्भ[4] चिंजी चिंजा[5] डर । चालकुंड[6] दलकुंड[7] गोलकुंडा संका उर ॥ भूषन प्रताप सिवराज तव इमि दच्छिन दिसि संचरहि । मधुरा[8] धरेस धकधकत सो द्रविड़ निविड़ डर दवि डरहि ॥ ३२ ॥

कवित्त मनहरण

अफजल खान को जिन्हों ने मयदान मारा बीजापुर गोलकुंडा मारा जिन आज है। भूषन भनत फरासीस त्यों फिरंगी मारि हबसी तुरक डारे उलटि जहाज है ॥ देखत में रुसतम[9]

उसकी प्रार्थना पर शिवाजी ने सन् १६७७ के लगभग रानी का अधिकार ठीक कर दिया। सन् १६६४ में इन्होंने विदनूर जीता भी था।

१ मलाबार वासी।

२ फूल मोती आदि से गुथे हुए बाल।

३ गर्भ ।

४ किले के भीतर हो, कोटगर्भ में हो।

५ लड़की लड़का। इसका प्रयोजन जिंजी से नहीं है, क्योंकि जिंजी का वास्तविक नाम चंडी था जो शब्द चिंजी चिंजा से असंबद्ध है।

६ चाल एक बंदरगाह है। इसके पास सन् १५२१ ई० के लगभग ईसाइयों ने एक किला बनवाया था।

७ डल कश्मीर में एक बड़ी झील है।

८ अब इसे मदुरा कहते हैं और यह मदरास में एक जिला है। इसमें पाषाण के परम श्रेष्ठ शैव मन्दिर हैं।

९ रुस्तमें जमा। देखिए शि० भू० छं० नं० २३९ का नोट।

खाँ को जिन खाक किया साल की सुरति आजु सुनी जो अवाज है। चौंकि[1] चौंकि चकता कहत चहुँघा ते यारो लेत रहो खवरि कहाँ लौं सिवराज है ॥ ३३ ॥

फिरगाने[2] फिकिरि औ हद सुनि हवसाने भूपन भनत कोऊ सोवत न घरी है। वीजापुर विपति विडरि सुनि भाज्यो सव दिल्ली दरगाह बीच परी खरभरी है ॥ राजन के राज सव साहिन के सिरताज आज सिवराज पातसाही[3] चित धरी है। वलख वुखारे कसमीर लौं परी पुकार धाम धाम धूमधाम रूम साम परी है[4] ॥ ३४ ॥

गरुड़[5] को दावा सदा नाग के समूह पर दावा नाग जूह पर सिंह सिरताज को। दावा पुरहू[6] को पहारन के कुल पर पच्छिन के गोल पर दावा सदा वाज को ॥ भूपन अखंड नव-खंड महिमंडल में तम पर दावा रवि किरन समाज को। पूरव पछाँह देस दच्छिन ते उत्तर लौं जहाँ पादसाही तहाँ दावा सिवराज को ॥ ३५ ॥

---

१ पूर्ण भयानक रस ।

२ वावर के पिता का राज्य ।

३ इस छंद में शिवाजी के अभिपेक का कथन है ।

४ भयानक रस ।

५ निदर्शना अलङ्कार ।

६ इन्द्र ।

दारा की न दौर यह रारि नहीं खजुवे[1] को बाँधिबो नहीं है कैधौं मीर सहवाल[2] को। मठ विश्वनाथ को न वास ग्राम गोकुल को देवी को न देहरा न मंदिर गोपाल को॥ गाढ़े गढ़ लीन्हे अरु वैरी कतलाम कीन्हे ठौर ठौर हासिल[3] उगाहत है साल को। बूड़ति है दिल्ली सो सम्हारै क्यों न दिल्लीपति धक्का आनि लाग्यो सिवराज महाकाल को॥ ३६॥

गढ़न[4] गँजाय गढ़धरन सजाय करि छाँड़े केते धरम दुवार दै भिखारी से[5]। साहि के सपूत पूत वीर सिवराज सिंह केते गढ़धारी किये वन वनचारी से॥ भूपन वखानै केते दीन्हे वंदीखाने सेख सैयद हजारी[6] गहे रैयत वजारी से। महता[7] से मुगल महाजन[8] से महाराज डाँड़ि लीन्हे पकरि पठान पटवारी से[9]॥ ३७॥

---

१ खजुए में शाहशुजा औरंगजेब से हारा था।

२ इसका इतिहास में नाम नहीं मिलता, कोई छोटा सर्दार होगा। लाल कवि ने इसका वर्णन किया है। इसका ठीक नाम शहबाज़ खाँ था।

३ चौथ, सरदेशमुखी आदि।

४ किलों को गँजवा कर।

५ यहाँ पर प्रताप राव गूजर द्वारा वहलोल खाँ के छोड़े जाने का इशारा समझ पड़ता है। सन् १६७२ की घटना है।

६ एक हजार सिपाहियों का अफसर।

७ महतों, मुसद्दी।

८ कलवार।

९ पूर्णोपमा।

यों पहिले उमराय लरे रन जेर किये जसवन्त अजूवा ।
साइतखाँ अरु दाउदखाँ पुनि हारि दिलेर मोहम्मद डूवा ॥
भूषन देखे वहादुर खाँ पुनि आय महावत खाँ अति ऊवा ।
सूखत जानि सिवाजि के तेजसों पान से फेरत नौरंग सूवा ॥३८॥

वारिध के कुंभभव घन वन दावानल तरुन तिमिर हू के किरन समाज हौ। कंस के कन्हैया कामधेनु हू के कंटकाल[1] कैटभ के कालिका विहंगम के वाज हौ॥ भूषन भनत जग जालिम के सचीपति पन्नग के कुल के प्रवल पच्छिराज हौ। रावन के राम कार्तवीज के परसुराम दिल्लीपति दिग्गज के सेर सिवराज हौ[2] ॥ ३९ ॥

दर बर दौरि करि नगर उजारि डारि कटक कटाई कोटि दुजन दरव[3] की। जाहिर जहान जंग जालिम है जोरावर चलै न कछूक अव एक राजा रव[4] की॥ सिवराज तेरे त्रास दिल्ली भयो भुवकंप थर थर काँपति विलायति अरव[5] की। हालत दहलि जात कावुल कँधार वीर रोप करि काढ़ै समसेर ज्यों गरव[6] की[7] ॥ ४० ॥

---

१ कौंटों का घर।

२ समाभेद रूपक।

३ दुर्जन के द्रव्य से इकट्ठी की हुई सेना कटवा डाला।

४ राव।

५ अरव की विलायत थर थर काँपती है।

६ अहंकार की अथवा पच्छिम [मगरिव] को तलवार।

७ यह छंद स्फुट कविता से आया है।

सिवा की बड़ाई औ हमारी लघुताई क्यों कहत वार वार कहि पातसाह गरजा। सुनिये, खुमान[1] हरि तुरुक गुमान महि देवन जेंवायो, कवि भूषन यों सरजा॥ तुम वाको पाय कै जरूर रन छोरो वह रावरे वजीर छोरि देत करि परजा। मालुम तिहारो होत याहि मैं निवारो रनु कायर सों कायर औ सरजा सों सरजा॥ ४१॥

कोट गढ़ ढाहियतु एकै पातसाहन के एकै पातसाहन के देस दाहियतु है। भूषन भनत महाराज सिवराज एकै साहन की फौज पर खग्ग वाहियतु है॥ क्योंन[2] होहिं वैरिन की बौरी सुनि वैर वधू दौरनि तिहारे कहौ क्यों निवाहियतु है। रावरे नगारे सुने वैरवारे नगरनि नैनवारे नदन निवारे चाहि-यतु है[3]॥ ४२॥

चकित चकत्ता चौंकि चौंकि उठै वार वार दिल्ली दहसति चित चाहै खरकति है। विलखि वदन विलखात विजैपुर पति फिरत फिरंगिन की नारी फरकति है॥ थर थर काँपत कुतुब साहि गोलकुंडा हहरि हवस भूप भीर भरकति है। राजा[4] सिवराज के नगारन की धाक सुनि केते पातसाहन की छाती दरकति है॥४३॥

---

१ शिवाजी।

२ भयानक रस। वैर [शिवाजी से] सुन वैरिन की वधू क्यों बौरी न होहिं।

३ चंचलातिशयोक्ति। ४ भयानक रस।

मोरँग[1] कुमाउँवौ पलाऊ[2] वांधे एक पल कहाँ लौं गनाऊँ जेऽव भूपन के गोत हैं। भूपन भनत गिरि विकट निवासी लोग, वावनी ववंजा[3] नव कोटि धुंध[4] जोत हैं॥ कावुल कँधार खुरासान जेर कीन्हो जिन मुगल पठान सेख सैयदहु रोत हैं। अव लगि[5] जानत हे वड़े होत पातसाह सिवराज प्रगटे ते राजा वड़े होत[6] हैं॥ ४४॥

दुग्ग पर दुग्ग जीते सरजा सिवाजी गाजी डग्ग नाचे दुग्ग पर रुंड मुंड फरके। भूपन भनत वाजे जीति के नगारे भारे सारे करनाटी[7] भूप सिंहल को सरके॥ मारे सुनि सुभट पनारेवारे[8] उद्भट तारे लगे फिरन सितारे गढ़धर के। वीजा-

---

१ शि० भू० छंद नं०२४९ का नोट देखिए।

२ 'भागना' हो सकता है, 'पला' भी। पला नामक एक ग्राम यमुना जी के किनारे था।

३ वजूना नामक एक स्थान फतेहपुर सिकरी के पास था। उत्तर पश्चिमी वोली में वावन को ववजा कहते हैं। वावनी बुंदेलखंड में एक मुसलमानी रियासत है। इसी से वावनीके पीछे ववंजा लगाया गया है। करनाटक के युद्ध में शिवाजी ने वावन गिरि जीता था। सम्भव है, वावनी शब्द से उसी का अभिप्राय हो।

४ धुँधली जोति के अर्थात् तेजहत।

५ काव्यलिंग अलंकार।

६ यह छंद स्फुट कविता से यहाँ आया है।

७ करनाटक पर शिवाजी ने सन् १६७६-७८ में आक्रमण किया।

८ इस छंद में पनारे गढ़ का वर्णन तीसरी जीत सन् १६७६ वाली का है। परनाले में सन् १६५९-१६६० ई० एवं सन् १६७३ में भी लड़ाई हुई थी।

पुर वीरन के, गोलकुंडा धीरन के, दिल्ली उर मीरन के दाड़िम से दरके[1] ॥ ४५ ॥

मालवा उज्जैन भनि भूषन भेलास[2] ऐन सहर सिरोज[3] लौं परावने परत हैं। गोंडवानो[4] तिलगानो फिरगानो[5] करनाट[6] रुहिलानो रुहिलन[7] हिये हहरत हैं॥ साहि के सपूत सिवराज तेरी धाक सुनी गढ़पति वीर तेऊ धीर न धरत हैं। बीजापुर, गोलकुंडा, आगरा, दिली के कोट बाजे बाजे रोज दरवाजे उघरत हैं॥ ४६ ॥

मारि करि पातसाही खाकसाही कीन्हीं जिन जेर कीन्हों जोर सों लै हद्द सब मारे की। खिसि गई सेखी फिसि गई सूरताई सब हिसि गई हिम्मति हजारों लोग सारे की॥ बाजत दमामे लाखौं धौंसा आगे घहरात गरजत मेघ ज्यों बरात

---

१ पूर्णोपमा।

२ भेलसा, इसमें बहुत से प्राचीन बौद्ध स्तूप हैं। यह ग्वालियर राज्य में है।

३ शेराज़ हो सकता है—सिरोंज नामक एक शहर बुंदेलखंड के समीप भी था। सिरोज सागर के भी पास है।

४ वर्त्तमान समय का बहुत सा मध्य प्रदेश उस समय गोंडवाना कहलाता था क्योंकि वहाँ विशेषतया गोंड़ रहते थे।

५ बाबर के पिता का राज्य। ६ करनाटक।

७ भूमिका देखिए। रुहेलखंड। किसी किसी प्रति में "हिंदुवानो हिंदुन के हिए हहरत हैं" यह भी पाठ है जो अशुद्ध समझ पड़ता है।

चढ़े भारे की। दुलहो[1] सिवाजी भयो दच्छिनी दमामेवारे दिली दुलहिनि भई सहर सितारे की ॥ ४७ ॥

डाढ़ी के रखैयन की डाढ़ी[2] सी रहति छाती बाढ़ी मरजाद जस हद हिंदुवाने की। कढ़ि गई रैयति के मन की कसक सब मिटि गई ठसक तमाम तुरकाने की ॥ भूषन भनत दिलीपति दिल धकधका सुनि सुनि धाक सिवराज[3] मरदाने की। मोटी भई चंडी बिनु चोटी के चबाय सीस खोटी भई संपति चकत्ता के घराने की ॥ ४८ ॥

जिन फन फुतकार उड़त पहार भार कूरम कठिन जनु कमल बिदलि गो। बिषजाल ज्वालामुखी लवलीन होत जिन झारन चिकारी मद दिग्गज उगलि गो ॥ कीन्हों जेहि पान पयपान सो जहान कुल कोल हू उछलि जल सिंधु खलभलि गो। खग्ग[4] खगराज महराज सिवराज जू को अखिल भुजंग मुगलदल निगलि गो ॥ ४९ ॥

सुमन[5] में मकरंद रहत है साहि नंद मकरंद सुमन रहत

---

१ सम अभेद रूपक।

२ जली हुई। जंगल में पत्तियाँ जलाई जाती हैं; उसे "दाढ़ा" कहते हैं। "दाढ़ा" मुख्यतः दीरघा अग्नि का नाम है।

३ इस छंद में कहीं कहीं शिवराज के स्थान पर छत्रसाल का नाम लिखा है, परंतु शुद्ध शिवराज ही का नाम समझ पड़ता है।

४ सम अभेद रूपक।

५ यह छन्द स्फुट कविता से आया है।

ज्ञान बोध है। मानस मैं हंस बंस रहत हैं तेरे जस हंस में रहत करि मानस बिसोध हैं॥ भूषन भनत भौंसिला भुवाल भूमि तेरी करतूति रही अद्‌भुत रस ओध है। पानि में जहाज रहे लाज के जहाज महाराज सिवराज तेरे पानिप पयोध हैं॥ ५० ॥

वेद राखे बिदित पुरान राखे सारयुत रामनाम राख्यो अति रसना सुघर मैं। हिंदुन की चोटी रोटी राखी है सिपाहिन की काँधे मैं जनेऊ राख्यो माला राखी गर मैं॥ मीड़ि राखे मुगल मरोड़ि राखे पातसाह बैरी पीसि राखे बरदान राख्यो कर मैं। राजन की हद्द राखी तेग बल सिवराज देव राखे देवल स्वधर्म्म राख्यो घर मैं॥ ५१ ॥

सपत नगेस चारौं ककुभ[१] गजेस कोल कच्छप दिनेस धरैं धरनि अखंड को। पापी घालै धरम सुपथ चालै मारतंड करतार प्रन पालै प्रानिन के चंड को॥ भूषन भनत सदा सरजा सिवाजी गाजी म्लेच्छन को मारै करि कीरति घमंड को। जग-काज वारे निहचिंत करि डारे सब भोर देत आसिष तिहारे भुजदंड को॥ ५२ ॥

---

१ पृथ्वी के हाथी अर्थात् दिग्गज।

श्री छत्रसाल दशक

इक हाड़ा[1] बूँदी धनी मरद महेवा वाल।
सालत नौरँगजेब को ये दोनों छतसाल[2]॥
वै देखौ छत्ता पता ये देखौ छतसाल।
वै दिल्ली की ढाल[3] ये दिल्ली ढाहन वाल॥

कवित्त मनहरण

छत्रसाल हाड़ा बूँदी नरेश विषयक

चले चंदबान[4] घनबान औ कुहूकबान[5] चलत कमान[6] धूम आसमान छ्वै रहो। चली जमडाढ़ैं बाढ़वारैं तरवारैं जहाँ लोह-आँच जेठ के तरनि मान वै रहो॥ ऐसे समै फौजैं बिचलाई[६]

---

१ एक छत्रसाल हाड़ा बूँदी-नरेश थे। ये महाराज गोपीनाथ के पुत्र और राव रतनसिंह के पौत्र थे। ये स्वयं बावन लड़ाइयों में शरीक रहे थे। सन् १६५८ ई० में धौलपूर में दारा और औरङ्गजेब की जो लड़ाई राज्यार्थ हुई थी, उसमें ये महाराज दारा के दल के हरौल में थे। उसी लड़ाई में बड़ी बहादुरी दिखा कर ये मारे गए। उसी का वर्णन भूषण ने इस दशक के प्रथम दो छंदों में किया है।

२ दूसरे छत्रसाल चंपति राय बुँदेला के पुत्र थे। इन्हीं के अनिवार्य प्रयत्नों से इनका राज्य बुँदेलखंड भर में फैल गया था।

३ क्योंकि वे दिल्ली की ओर हो दारा की तरफ़ से लड़े थे।

४ अर्द्धचंद्र बाण।

५ अंधेरे में चलनेवाले बाण; इनके चलने से कुहू कुहू आवाज होने से ये कुहूँक-बान कहलाते थे। ४ तोप।

छत्रसालसिंह अरि के चलाये पायँ वीररस च्वै रहो। हय चले हाथी चले संग छोड़ि साथी चले ऐसी चलाचली मैं अचल हाड़ा है रहो[1] ॥ ११ ॥[2]

दारा साहि नौरँग जुरे हैं दोऊ दिली दल एकै गये भाजि एकै गये रुँधि चाल मैं[3]। बाजी कर कोऊ दगाबाजी करि राखी जेहिं कैसेहू प्रकार प्रान बचत न काल[4] मैं॥ हाथी ते उतरि हाड़ा जूझो लोह लंगर[5] दै एती लाज कामैं जेती लाज छत्रसाल मैं। तन तरवारिन मैं मन परमेसुर मैं प्रान स्वामि-कारज मैं माथो हरमाल मैं॥ २॥

छत्रसाल बुँदेला महेवानरेश विषयक

निकसत म्यान ते मयूखैं[6] प्रलै भानु कैसी फारैं तम तोम

---

१ पूर्णोपमा, पदार्थावृत्त दीपक, परिसंख्या और भूषणानुसार पर्याय अलंकार।

२ एक महाशय का कथन है कि उन्हें यह छन्द भषण कृत नहीं समझ पड़ता।

३ कोई भाग गए और कोई सेना के संचालन में फँस गए, अर्थात् इस प्रकार से सेना चलाई गई कि उनकी सेना ऐसे स्थान पर जा पड़ी कि जहाँ से वह शत्रु से भली भाँति लड़ नहीं सकती थी। चलने से रुक गए।

४ कोई ऐसे थे कि जिस समय किसी प्रकार नहीं बचते थे, तो उन्होंने दगाबाजी करके अपने हाथ बाजी रक्खी, (अर्थात् प्रान बचाए)। यह भी हो सकता है कि हाथ में घोड़ा पकड़ कर सईस बनकर बच गए।

५ जब हाथी लड़ाई से भागने लगते हैं, तब उनके पैरों में लंगड़ (मोटी जंजीर) डाल देते हैं कि वे भाग न सकें।

६ किरनें।

से गयंदन के जाल को। लागति लपटि कंठ वैरिन के नागिनि सी रुद्रहि रिझावै दै दै मुंडन के माल को। लाल छितिपाल छत्रसाल महाबाहु वली कहाँ लौं बखान करौं तेरी करवाल को। प्रतिभट[1] कटक कटीले केते काटि काटि कालिका सी किलकि कलेऊ देति काल को[2] ॥ ३ ॥

भुज भुजगेस की ह्वै संगिनी भुजंगिनी सी खेदि खेदि खाती दीह दारुन दलन के। बखतर पाखरिन वीच धसि जाति मीन पैरि पार जात परवाह ज्यों जलन के ॥ रैया राय चंपति[3] को छत्रसाल महाराज भूषन सकत को बखानि यों बलन के। पच्छी पर-छीने[4] ऐसे परे पर छीने[5] बीर तेरी बरछी ने वर[6] छीने हैं खलन के ॥ ४ ॥

---

१ पूर्णोपमा अलंकार।

२ एक महाशय का निराधार कथन है कि छन्द नम्बर २ व ३ गोरेलाल कृत हैं, किन्तु वे महाराजा छत्रसाल पन्ना नरेश के कवि व माफ़ीदार थे न कि बूँदीनरेश के।

३ चंपतिराय छत्रसाल बुँदेला के पूज्य पिता थे। ये महाशय बुँदेलों में बड़े ही प्रतापी हो गए हैं। पहले महाराज चंपति शाहजहाँ से मित्रता रखते थे और उनकी ओर से दारा के साथ काबुल में लड़ने भी गए थे। वहाँ इन महाराज ने इतनी वीरता दिखाई और अफ़गानों को इतना शीघ्र परास्त कर दिया कि दारा को इनकी वीरता से द्वेष उत्पन्न हुआ। इसी द्वेष के कारण इनसे दारा की शत्रुता हो गई। तब ये महाराज औरंगजेब की ओर होगए और इन्होंने धौलपुर के युद्ध में हरौल दल के नेता होकर दारा को परास्त करके औरंगजेब को राज्य दिलाने में पूरा योग दिया (यथा "चंपति राय जगत जस छायो--है हरौल दारा विचलाओ" लालकृत छत्रप्रकाश।)

४ पंखकटे। ५ पर अर्थात् शत्रु खंडित हो गए। ६ बल ॥

रैया राय चंपति को चढ़ो छत्रसालसिंह भूपन भनत सम-सेर जोम जमकैं[1]। भादौं की घटा सी उठी गरदैं गगन घेरैं सेलैं समसेरैं फेरैं दामिन सी दमकैं ॥ खान उमरावन के आन राजा रावन के सुनि सुनि उर लागैं घन कैसी घमकैं। वैहर[2] वगारन की अरि के अगारन की नाँघती पगारन[3] नगारन की धमकैं ॥ ५ ॥

अत्र गहि छत्रसाल खिझ्यो खेत वेतवै के उत ते पठाननहू कीन्हीं झुकि झपटैं। हिम्मति[4] बड़ी के गवड़ी[5] के खिलवारन लौं देत सै हजारन हजार वार चपटैं॥ भूपन भनत काली हुलसी असीसन को सीसन को ईस[6] की जमाति जोर जपटैं[7]।

---

१ पूर्णोपमा अलंकार।

२ वायु।

३ घेरा। ४ पूर्णोपमा अलंकार।

५ गवड़ो 'कबड्डी' एक प्रकार का खेल होता है। इसमें खिलाड़ी दो भागों में विभक्त हो जाते हैं। एक समूह का एक खिलाड़ी कबड्डी कबड्डी कहता दूसरे गोल में जाता है और यह प्रयत्न करता है कि उसकी एक ही साँस न टूटने पावे और वह उस गोल के किसी खिलाड़ी को छूकर लौट आवे। अगर उसने ऐसा कर लिया तो उस गोल के जिस खिलाड़ी को उसने छूआ उसे मानों उसने मार डाला, नहीं तो स्वयं मर गया। दूसरे गोल वाले चाहते हैं कि उसे मार-डालें अर्थात् उसकी एक साँस डौल से तुड़वा दें, और एक साँस बिना तोड़े उसे लौटने न दें। उसके पीछे दूसरे गोल का एक खिलाड़ी वैसा ही करता है। इसी प्रकार जब किसी गोल के सब खिलाड़ी मर जाते हैं, तो वह गोल हार जाता है।

६ महादेव जी। ७ चपेट करते हैं।

समद लौं समद * की सेना त्यों बुँदेलन की सेलैं समसेरैं भई वाड़व की लपटैं ॥ ६ ॥

हैवर हरट्ट[1] साजि गैबर[2] गरट्ट[3] सम[4] पैदर के ठट्ट फौज जुरी तुरकाने की। भूषन भनत राय चंपति को छत्रसाल रोप्यो रन ख्याल ह्वैकै ढाल हिंदुवाने की ॥ कैयक हज़ार एक बार वैरी मारि डारे रंजक दगनि मानो अगिनि रिसाने की। सैद अफगनें[5] सेन सगर सुतन लागी कपिल सराप लौं तराप तोपखाने की ॥ ७ ॥

चाक[6] चक चमू के अचाक[7] चक चहूँ ओर चाक सी फिरति धाक चंपति के लाल की। भूषन भनत पातसाही मारि जेर कीन्हीं काहू उमराव ना करेरी करवाल[8] की ॥ सुनि सुनि

---

* अब्दुस्समद दिल्ली का एक सरदार था। वेतवैनदी के किनारे सन् १६६० ई० के करीब यह छत्रसाल से भारी युद्ध में हारा।

१ हृष्ट पुष्ट। २ गजवर; अच्छे हाथी।

३ समूह। ४ उसी भाँति के सैनिक युक्त।

५ सैद अफग़न दिल्ली का एक सरदार था और छत्रसाल से लड़ने को भेजा गया था। छत्रसाल ने उसे पराजित किया। लाल कवि कृत छत्र-प्रकाश देखिए। मटौंध जीतने के बाद छत्रसाल ने पहले स्वयं विचलित होकर फिर घोर युद्ध कर इसे हराया था, तब इसकी जगह शाह कुली नियत हुआ था। यह सन १७०० की घटना है।

६ चाक; मोटी ताजी।

७ अचानक।

८ तलवार।

रीति विरदैत* के बड़प्पन की थप्पन उथप्पन की बानि छत्र-साल की। जंग जीतिलेवा ते वे ह्वैकै दामदेवा[1] भूप सेवा लागे करन महेवा महिपाल की॥ ८॥

कोवे को समान प्रभु ढूँढ़ि देख्यो आन पै निदान दान युद्ध में न कोऊ ठहरात हैं। पंचम[2] प्रचंड भुज दंड को बखान सुनि भागिवे को पच्छी लौं पठान थहरात हैं॥ संका मानि सूखत अमीर दिलीवारे जब चंपति के नंद के नगारे घहरात हैं। चहूँ ओर चकित चकत्ता के दलन पर छत्ता के प्रताप के पताके फहरात हैं[3]॥ ९॥

राजत अखंड तेज छाजत सुजस बड़ो गाजत गयंद दिग्गजन हिय साल को। जाहि के प्रताप सों मलीन आफताप[4] होत ताप तजि दुज्जन करत बहु ख्याल को॥ साज सजि गज तुरी[5] पैदरि कतार दीन्हे भूषन भनत ऐसो दीन प्रतिपाल को?

---

* यश वर्णन करनेवाला।

१ कर देनेवाले।

२ पंचमसिंह बुँदेलों के पूर्व्व पुरुष थे। महाराज बुँदेल (जो बुँदेलों के पुरखा थे) इनके पुत्र थे। पंचमसिंह बड़े प्रतापी और विंध्यवासिनी देवी के बड़े भारी भक्त थे।

३ पूर्णोपमा, चंचलातिशयोक्ति, पूर्णभयानक रस। यह छंद स्फुट कविता से यहाँ आया है।

४ आफताब, सूर्य्य।

५ घोड़ा।

और राव राजा[1] एक मन मैं न ल्याऊँ अब साहू[2] को सराहौं कै सराहौं छत्रसाल को ॥ १० ॥

स्फुट काव्य

दोहा

रेवा[3] ते इत देत नहिं पथिक म्लेच्छ निवास ।
कहत लोग इन पुरनि मैं है सरजा को त्रास ॥ १ ॥

कवित्त मनहरन

वाजि[4] बंब चढ़ो साजि वाजि जब कलाँ भूप गाजी महाराज राजी भूषन बखानतैं । चंडी की सहाय महि मंडी तेजताई ऐंड छंडो राय राजा जिन दंडो औनि आन तैं[5] ॥ मंदीभूत रवि

---

१ भूमिका एवं स्फुट काव्य के छंद नं० ३ का नोट देखिए ।

२ महाराज साहूजी छत्रपति शिवाजी के पौत्र थे। शिवाजी के पुत्र और साहू जी के पिता का नाम शंभाजी था । साहू जी के ही राज्यकाल में मुगल साम्राज्य पूर्ण रूप से ध्वस्त हो गया था । साहू जी ने बहुत वर्ष राज्य किया था । शाही कैद से इनका सन् १७०७ ई० में छुटकारा हुआ था ।

३ नर्म्मदा नदी ।

४ यह छंद शिवाबावनी से आया है; क्योंकि यह शिवाजी विषयक नहीं है । सन् १६६६ के लगभग का कथन है ।

५ देवीजी की सहायता से (सुलंकी ने) पृथ्वी तेज से ता (छादित) कर मढ़ दी, और उन राय राजाओं ने भी, जिन्होंने औरों से भूमि दंड में ले ली थी, ऐंठ छोड़ दी ।

रज[१] वंदीभूत हठधर नंदी भूतपति सो अनंदी अनुमान तैं। रंकीभूत दुवन करंकीभूत[२] दिगदंती पंकीभूत[३] समुद सुलंकी के पयान तैं[४] ॥ २ ॥

सांगनि सों पेलि पेलि खग्गन सों खेलि खेलि समद[५] सो जीत्यो जो समद लौं वखाना है। भूपन बुँदेला मनि चम्पति सपूत धनि, जाकी धाक बचा एक मरद मियाँ ना[६] है ॥ जंगल के वल सों उदंगल[७] प्रवल लूटा अहमद अमीखाँ का कटक खजाना है। वीर-रस मत्ता जाते काँपत चकत्ता पारौ कत्ता ऐसा बाँधिये जो छत्ता[८] बाँधि जाना है ॥ ३ ॥

---

१ राज्य श्री।

२ कलंकी; दिग्गज श्वेत वर्ण थे; सो इस रज से आच्छादित होने से वे मैले हो गए और इसी कारण कलंकी कहे गए।

३ चहला (कीच) से भरा हुआ।

४ अनुप्रास। पँवार आदि जो चार अग्निकुल के क्षत्री हैं, उनमें एक सुलंकी भी हैं। बघेले सुलंकी क्षत्रियों में हैं। बघेलखंड के अतिरिक्त ये लोग गुजरात में भी राज्य करते थे। इनके राज्य अब भी बहुत से हैं जिनमें रीवाँ प्रधान है। मेवार में भी इनकी एक शाखा है जिसकी सोलह उपशाखाएँ हैं। यह छंद हृदयराम सुत रुद्र के विषय में हो सकता है। शि० भू० छंद नं० २८ का नोट देखिये।

५ वह अब्दुल समद जीता जिसका यश समुद्र तक पहुँचा हुआ है।

६ एक भी बहादुर मियाँ (बड़े आदमी का बेटा) न बचा।

७ उद्दण्ड; उच्छृंखल।

८ छत्रसाल।

देस दहपट्टि आयो आगरे दिली के मेले वरगी वहरि[1] चारु दल जिमि देवा को। भूषन भनत छत्रसाल, छितिपाल मनि ताके[2] ते कियो विहाल जंगजीति लेवा को॥ खंड खंड सोर यों अखंड महि मंडल मैं मंडो तैं वुँदेल खंड मंडल महेवा को। दक्खिन के नाथ को कटक रोक्यो महावाहु ज्यों सहसवाहु नै प्रवाह रोक्यो रेवा[3] को॥ ४॥

तहवर खान हराय ऐंड अनवर कि जंग हरि।
सुतुरदीन[4] वहलोल गये अवदुल समद मुरि॥
महमद को मद मेटि सेर अफगनहिँ जेर किय।
अति प्रचंड भुजदंड वलन कहि नै दंड दिय॥
भूषन वुँदेल छत्रसाल डर रंगत ज्यो अवरंग लजि।
झुक्के निसान तजि समर सों मक्के तक्कि[5] तुरुक्क भजि॥ ५॥

सक्तजिमि सैल पर [6]अर्क तम फैल पर विघन की रैल पर लम्बोदर[7] लेखिये। राम दसकन्ध पर भीम जरासंध पर भूषन

---

१ साथियों से वहर कर (वहिलाकर, भूलकर) जैसे साथियों से भूल कर देवता इन्द्र का दल हो।

२ युद्ध में जीतने वाले दल को केवल देखकर परेशान (विहल) कर दिया।

३ नर्मदा नदी।

४ सदरुद्दीन।

५ ताक (देख) कर।

६ सूर्य्य।

७ गणेशजी।

ज्यों सिन्धु परकुम्भज[1] बिसेसिये ॥ हर ज्यों अनंग पर गरुड़ भुजंग पर कौरव के अंग पर पारथ ज्यों पेखिये । बाज ज्यों बिहंग पर सिंह ज्यों मतंग पर म्लेच्छ चतुरंग पर चिन्तामणि[2] देखिये[3] ॥ ६ ॥

पौरष नरेस असरेस जू के अनिरुद्ध तेरे जस सुने ते सोहात[4] सौं सीतलैं । चन्दन की चांदनी सी चादरें सी चहूँ ओर पथ पर फैलती हैं परम पुनीत लैं ॥ भूखन बखानी कवि मुखन प्रमानी सोतो बानी जू के बाहन हरख हंस हीतलैं । सरद के घन की घटान सी घुमंडती हैं मेरु ते उमंडती हैं मंडती महीतलैं ॥ ७ ॥

उठि गयो आलम सों रुजुक सिपाहिन को, उठि गो बँधैया सबै बीरता के बाने को । भूषन भनत उठि गयो है धरा सों धर्म, उठि गो सिंगार सबै राजा राव राने को । उठि गो सुसील कवि, उठि गो जसीलो डील, फैलो मध्य देस में समूह तुरकाने को । फूटे भाल भिच्छुक के जूझे भगवन्त[5] राय, अरराय टूटो कुल खंभ हिन्दुवाने को ॥ ८ ॥

---

१ अगस्त्यमुनि जिन्होंने समुद्र पी लिया था । वे घड़े से उत्पन्न कहे गये हैं । वास्तव में उन्होंने जलसेना प्रस्तुत कर के अरब समुद्र के डाकुओं को पराजित करके तत्कालीन भारतीय समुद्री व्यापार कंटक रहित कर दिया था, जिससे उन का भारी यश हुआ ।

२ चिन्तामणि को चिमणाजी भी कहते थे । आप एक भारी महाराष्ट्र महापुरुष थे जिनके विभव का समय सन १७२३ के निकट है ।

३ इस छन्द में मालोपमा की बहार है ।

४ तेरा यश सुन कर कान शीतल और शोभित होते हैं ।

५ कहीं कहीं भगवन्त के स्थान पर जसवन्त भी लिखा हुआ है ।

अकव्वर पायो भगवन्त के तनै सों मान वहुरि जगतसिंह महा मरदाने सों। भूषन त्यों पायो जहांगीर महासिंह जू सों साहिजहाँ पायो जयसिंह जग जाने सों ॥ अव अवरंगजेव पायो रामसिंह जू सों और दिन दिन पैहै कूरम के माने सों। कैत राजा राय मान पावैं पातसाहन सों पावैं पातसाहमान मान के घराने सों ॥९॥

भले भाई भासमान त्रासमान भान जाको भानता भिखारिन के भूरि भय जात है। भोगन को भोगी, भोगीराज[1] कैसी भाँति भुजा भारी भूमि भार के उतारन को ख्याल है ॥ भावतो समान भूमि भावती को भरतार भूषन भरत खंड भरत भुवाल है। विभौ को भँडार औ भलाई को भवन भासै भाग भरो भाल जयसिंह भुवपाल है ॥ १० ॥

वाजे वाजे राजे तैं निवाजे हैं नजरि किये, वाजे वाजे राजे काटे काढ़ि असिमत्ता सों। वाँके वाँके सूवा नालवन्दी[2] दै सलाह करैं, वाजे वाजे सूवा करे एक एक लला सों ॥ वाजे गाढ़े गढ़पति काटे रामद्वार[3] दै दै वाजे गाढ़े गढ़पति आने तरे कत्ता सों। वाजीराव गाजी तैं उवास्यो आप छत्रसाल[4] आसित विठायो वल करि कै चकत्ता सों ॥ ११ ॥

---

१ शेष; सर्पराज। २ समझ पड़ता है कि नालवन्दी के नाम से कोई खिराज लिया जाता था। ३ रांम का द्वार दे देकर काटा अर्थात राम के यहाँ (उस लोक को) भेज दिया। ४ वंगश नवाव के दरेरे से वाजीराव ने जो छत्रसाल को वचाया था उसका वर्णन है।

साजिदल सहज सितारा महराज चलै बाजत नगारा बढ़ै धाराधर[१] साथ से। राय उमराय राना देसदेस पति भागे तजि तजि गढ़न गढ़ोई दसमाथ[२] से॥ पैग पैग होत भारी डावाँ डोल भूमिगोल[३] पैग पैग होत दिग मैगल अनाथ से। उलटत पलटत गिरत झुकत उझकत सेस फन वेद पाठिन के हाथ से॥ १२॥

जुद्धको चढ़त दल बुद्ध को जसत[४] तब लंक लौं अतंकन के पतरें पतारे[५] से। भूपन भनत भारे बूमत गयन्द कारे बाजत नगारे जात अरि उर छारे से॥ धस के धरा के गाढ़े कोल की कड़ाकैं[६] डाढैं आवत तरारे दिग पालन तमारे[७] से। फेन से फनीस फन फूटि विष छूटि जात उछरि उछरि मनो पुरवैं फुहारे से॥ १३॥

रहत अछक पै मिटै न धक[८] पीवन की निपट जु नाँगी डर काहू के डरै नहीं। भोजन बनावै नित चोखे खानखानन के सोनित पचावै तऊ उदर भरै नहीं॥ उगिलत आसो[९] तऊ सुकल[१०] समर बीच राजै रावबुद्ध[११] कर विमुख परै नहीं।

---

१ मेघ गर्जन से नगाड़े बजते हैं। २ रावण से प्रतापी गढ़पति भी भागे। ३ भूगोल पर। ४ यश प्राप्त करता है। ५ शत्रुओं की पंक्तियाँ पत्तों सी पतली हो जाती हैं। ६ पृथ्वी के धसकने से वली वराह की डाढ़ें कड़कती (टूटती) हैं। ७ दल के तरारे (दरेरे, धावा) से दिग्पाल को तवाँई (अँधेरा छा जाना, बेहोशी) सी आती है। ८ बड़ी चोप ९ आसव, मदिरा। तलवार के लिये लाल रंग का खून; क्योंकि उत्तम मद्य भी लाल रंग का माना गया है। १० सफेद।

११ छत्रसाल हाड़ा बूँदी नरेश के भाई भीमसिंह के पौत्र अनिरुद्धसिंह थे। राव

तेग या तिहारी मतवारी है अछक तौ लौं जौ लौं गजराजन को गजक[1] करै नहीं ॥ १४ ॥

जा दिन चढ़त दल साजि अवधूतसिंह[2] ता दिन दिगंत लौं दुवन दाटियतु है। प्रलै कैसे धाराधर[3] धमकैं नगारा धूरि धारा ते समुद्रन की धारा पाटियतु है ॥ भूपन भनत भुवगोल को कहर तहाँ हहरत तगा[4] जिमि गज काटियतु है। काँच से कचरि जात सेस के असेस फन कमठ की पीठि पै पीठी सी बाँटियतु[5] है ॥ १५ ॥

बुद्धसिंह इन्हीं अनिरुद्धसिंह के पुत्र थे। औरंगजेब के मरने पर उसके पुत्र मुअज्ज़म (बहादुर शाह) और आजम में राज्यार्थ जाजऊ पर घोर युद्ध हुआ था। उसमें राव बुद्धसिंह मुअज्ज़म की ओर थे। इसी दिन इन्हें रावराजा की उपाधि मिली। जैपुर के राजा जैसिंह ने अंत में राव बुद्ध का राज्य छीन लिया था, परंतु इनके पुत्र उमेदसिंह ने फिर उसे प्राप्त कर लिया।

१ शराबी लोग जो शराब के साथ थोड़ी सी नमकीन या चटपटी गिजा खाते हैं, वही गजक है। यह छंद छत्रसाल दशक से आया है।

२ ये सन् १७०० से १७५५ तक रीवाँ के शासक रहे और केवल छ महीने की अवस्था में गद्दी पर बैठे थे। इनका राज्य बुँदेलों ने दो तीन बार जीता था, किन्तु अंत में ये उसे क़ायम रख सके।

३ मेघ।

४ तागा, डोरा।

५ पूर्णोपमा, संबंधातिशयोक्ति।

डंका के दिए ते दल डंबर[1] उनंड्यो, उडमंड्यों[2] उड-मंडल लौं खुर की गरद है। जहाँ दाराशाह वहादुर के चढ़त, पैंड़, पैंड़[3] में मढ़त मारु-राग बंब नद है॥ भूपन भनत घने घुम्मत हरौलवारे, किम्मत अमोल वहु हिम्मत दुरद है। हद्दन छपद महि मद फर नद होत कद्दन[4] भनद से जलद[5] हलद्द है॥ १६॥

उलद्त[6] मद अनुमद[7] ज्यो जलधि जल वल हद भीम कद काहू के न आह के। प्रवल प्रचंड गंड[8] मंडित मधुप वृंद विंध्य से बुलंद सिंधु सात हू के थाह के॥ भूपन भनत झूल झम्पति झपान झुकि झूमत झुलत झहरात रथ डाह के। मेघ-से घमंडित मजेजदार[9] तेज पुंज गुंजरत कुंजर कुमाऊँ नरनाह के[10]॥ १७॥

---

१ धूम धाम। २ नक्षत्र मंडल तक उड़ाकर धूलि मंडित कर (मढ़) दी।

३ पैंड के अर्थ डग तथा मार्ग दोनों है।

४ संसार की सीमाओं तक (हाथियों के मदजल के कारण) भौंरे भरे हैं अथच गजों के मद जल से पृथ्वी फट कर नद हो जाते हैं।

५ उन हाथियों के कदों (शरीरों) से नभ नद (आकाश गंगा आदि) के समान वादल हिलते हैं, अर्थात् वे इतने ऊँचे हैं कि उनके द्वारा आकाश नद तथा जलद दोनों हिलते हैं।

६ डालते हैं, उँडेलते हैं। ७ मद पर मद। ८ कनपटी।

९ एक प्रभावसूचक पद, शानदार।

१० अनुप्रास, पूर्णोपमा। इस छंद के साथ एक जनश्रुति है। भूपण ने जब कुमाऊँ

बलख बुखारे मुलतान लौं हहर पारै कपि लौं पुकारै कोऊ धरत न सार[१] है। रूम रूँदि डारै खुरासान खूँदि मारै खाक खादर[२] लौं झारै ऐसी साहु[३] की वहार है॥ कक्कर[४] लौं वक्खर[५] लौं मक्कर[६] लौं चले जात टक्कर लेवैया कोऊ वार है न [७]पार है। भूषन सिरोज[८] लौं परावने परत फेरि दिली पर परति परिंदन की छार[९] है॥ १८॥

नरेश के यहाँ जाकर यह छंद सुनाया था, तो उन्हें संदेह हुआ कि स्यात् जो यह सुनते थे कि शिवाजी ने इन्हें लाखों रुपये दिए, वह गलत है, नहीं तो ये मेरे यहाँ क्यों आते, किंतु तो भी इस बात पर निश्चय न होने से इन्हें राजसम्मानित कवि समझ कर उसने एक लाख रुपये विदाई में दिए, परंतु भूषण ने वह धन कुमायूँ नरेश (उद्योत-सिंह) को वापस करके कहा कि मेरा प्रयोजन कुमायूँ आने से केवल शिवाजी का यशवर्द्धन था। शिवाजी की कृपा से अब रुपए पैसे की उन्हें कोई आवश्यकता नहीं रह गई थी। यह कथन चिटनीस बखर के आधार पर है।

१ लोहे का सार, इस्पात के अस्त्र।

२ खादर नदी के निकट की नीची भूमि को कहते हैं। इसमें रूखापन भी बहुत होता है।

३ शिवाजी का पौत्र। छं० द० छं० नं० १० का नोट देखो।

४ एक कोकर देश मुलतान के पास है। एक कोकरा देश उड़ीसा और दक्षिण के बीच में है। कोकरमंडा का एक दुर्ग तापती नदी के उत्तर किनारे पर है।

५ एक भक्खर गुजरात के पास और एक भाकर मुलतान के निकट था।

६ मकरान नामक एक स्थान सिंध के निकट था।

७ नर्मदा नदी के वार पार का प्रयोजन है।

८ शीराज हो सकता है। सिरोज नामक एक स्थान बुँदेलखंड के पास है और एक सागर के निकट भी। ९ पूर्णोपमा, भयानक रस।

सारस से सूवा करवानक से साहिजादे मोर से मुगल मीर धीर में धचै[1] नहीं। बगुला से वंगस बलूचियौ बतक ऐसे काबिली कुलंग याते रन में रचै नहीं॥ भूपन जू खेलत सितारे में सिकार संभा[2] सिवा को सुवन जाते दुवन सचै[3] नहीं। वाजी सब वाज की चपेटैं चंग चहूँ ओर तीतर तुरक दिल्ली भीतर बचै नहीं[4] ॥ १९ ॥

देखतही जीवन बिडारौ तौ तिहारौ जान्यो जीव[5]नद नाम कहिवेही को कहानी में। कैयौं घनस्याम जो कहावैं सो सतावैं मोहिं निहिचै के आजु यह बात उर आनी में॥ भूपन सुकवि कीजे कौन पर रोसु निज भागिही को दोसु आगि उठति ज्यौं पानो में। रावरेहू आये हाय हाय मेघराय सब धरती जुड़ानी पैन बरती जुड़ानी में॥ २० ॥

---

१ धरै नहीं।

२ शंभाजी महाराज शिवाजी के पुत्र थे। इन्होंने ९ वर्ष सन् १६८९ ई० तक राज किया। ये महाराज बहादुर थे, परंतु अपने पिता की भाँति मुंतज़िम न थे। सन् १६८९ ई० में औरंगजेब ने इन्हें पकड़ लिया और कहा—"यदि तुम मुसल्मान हो जाओ तो तुम्हारा राज्य तुमको वापस कर दिया जाय।" इस पर इन्होंने कहा—"दुष्ट तुझपर थू और तेरे मत पर थू।" इस पर औरंगजेब ने बड़ी निर्दयता से इन्हें मरवा डाला।

३ संचार नहीं करता।

४ ये छंद नं० ७ व ८ शिवाबावनी से यहाँ आए हैं।

५ जीवन देनेवाला : वियोग का वर्णन है।

वन-उपवन फूले अंबनि के झौर[1] झूले, अवनि सुहाति आभा औरे सरसाई है। अलि मदमत्त भये केतकी[2] वसंती फूली, भूषन वखानै सोभा सबै सुखदाई है॥ बिषम बिड़ारिबे को बहत समीर मद[3], कोकिला की कूक कान कानन सुनाई है। इतनो सँदेसो है जू पथिक, तुम्हारे हाथ, कहौ जाय कंत सों वसंत ऋतु आई है॥ २१॥

मलय-समीर परलै को जो करत महा, जमकी दिसा ते आयो जम ही को गोतु है। साँपन को साथी न्याय चंदन छुए ते डसै, सदा सहबासी बिष गुन को उदोतु है॥ सिंधु को सपूत कलप-द्रुम को बंधु, दीनबंधु को है लोचन, सुधा को तनु सोत है। भूषन भनैरे भुव भूषन द्विजेस तैं कलानिधि कहाय कै कसाई कत होत है[4]॥ २२॥

---

१ झाड़ैं, बहुत सी पत्तीवाली डालैं।

२ पीली केतकी जो वसंत ऋतु में फूलती है। श्वेत केतको वर्षा में फूलती है।

३ (मानिनी का) विषम मद बिदारिबे को समीर बहत।

४ विरह का वर्णन है। उद्दीपनों से शिकायत है। मलय समीर का तो कष्ट देना उसकी यमराज की दिशा (दक्षिण) से आने तथा साँपों के साथी होने से क्षम्य है, किंतु चंद्रमा का ऐसा करना अनुचित है, क्योंकि वह समुद्र का सपूत, कल्पवृक्ष का भाई (कल्पवृक्ष और चंद्र दोनों उन १४ रत्नों में से हैं जो समुद्र मंथन से प्राप्त हुए थे) दीन बंधु शिव भगवान् का नेत्र (सूर्य और चन्द्र भगवान् के नेत्र कहे गए हैं)। सुधाकर, भुवनभूषण, द्विजेश [चन्द्रमा को द्विजराज भी कहते हैं] तथा कलानिधि है।

जिन[1] किरनन मेरो अंग छुयो तिनही सों पिय अंगछुवे क्यों न मैन-दुख दाहे को। भूषन भनत तू तो जगत को भूषन है, हौं कहा सराहौं ऐसे जगत सराहे को॥ चंद[2]-ऐसी चाँदनी न प्यारे पै बरसि, उतैरहि न सकै मिलाप होय चित-चाहे को। तू तो निसाकर सब ही की निसा करै, मेरी जो न निसा[3] करै तौ तू निसाकर काहे को॥ २३॥

कारो जल जमुना का काल सो लगत आली, मानो विष भस्यो रोम रोम कारे नाग को। तैसियै भई है कारी कोयल निगोड़ी यह, तैसोई भँवर सदा वासी बन-बाग को॥ भूषन कहत कारे कान्ह को वियोग हमैं ऐसे में सँजोग कहँ वर अनुराग को। कारो घन घेरि-घेरि मास्यो अब चाहत है, तापै तू भरोसो री करत कारे काग को॥ २४॥

---

१ हे निशाकर [चन्द्र], तू ने जिन अपनी किरणों से मेरे कामदेव से जले हुए अंग को छुआ है, उन्हीं से प्रियतम के अंग को क्यों नहीं छूता (जिससे उन्हें भी मेरे ही समान काम पीड़ा उत्पन्न हो और हम दोनों का वियोग दूर हो)?

२ हे चंद्र, ऐसी चंद्रिकाओं को प्यारे पर बरसाओ जिसमें कि वह विदेश में न रह सके और उस चितचाहे से मेरा मिलाप हो जाय।

३ निसा तसल्ली को कहते हैं। चन्द्रमा निसाकर [निशाकर] ही है और तसल्ली करनेवाला भी कहा गया है, क्योंकि वह निसा [तसल्ली, चित्त की प्रसन्नता] कर (करनेवाला) है। मतलब यह है कि तू सब की तसल्ली अवश्य करता है, किंतु यदि मेरी न करे तो मैं तुझे तसल्ली करनेवाला कैसे कहूँ? निसा साधारण बोलचाल का शब्द है। उसकी अच्छी निसा खातरी हो गई, ऐसे वाक्य में इसका प्रयोग होता है।

मेचक[1] कवच साजि वाहन वयारि वाजि गाढ़े दल गाजि रहे दीरघ वदन के। भूषन भनत समसेर सोई दामिनी है हेतु नर कामिनी के मान के कदन के॥ पैदरि वलाका[2] धुरवान[3] के पताका गहे घेरियतु चहूँ ओर सूते ही सदन के। ना करु निरादर पिया सों मिलु सादर ये आये वीर वादर वहादर मदन के॥२५॥

सुभ सौंधे भरी सुखमा सुखरी मुख ऊपर आय रही अलकै। कवि 'भूषन' अंग नवीन विराजत मोतिन-माल हिए झलकै॥ उन दोउन की मनसा मनसी नित होत नई ललना ललकै। भरि भाजन वाहिर जात मनौ मुसुकानि किधौं छवि की छलकै॥ २६॥

[4]नैन जुग नैनन सों प्रथमैं लड़े हैं धाय, अधर कपोल तेऊ टरे नाहिँ टरे हैं। अड़ि-अड़ि पिलि-पिलि लड़े हैं उरोज वीर देखो लगे सीसन[5] पै घाव ये घनेरे हैं॥ पिय को चखायो स्वाद कैसो रति संगर को, भए अंग अंगनि ते केते मुठभेरे हैं। पाछे परे वारन को वाँधि कहै आलिन सों, भूषन सुभट ये ही पाछे परे मेरे हैं॥ २७॥

---

१ काला। २ वगुला।

३ जब वादल वड़े जोर से उठता है, तब उसमें दूर से जो लंबे लंबे खड़े दूसरे प्रकार के पतले धूम्र वर्ण वादल दौड़ते हैं, उन्हें धुरवा कहते हैं।

४ सम अभेद रूपक; उत्तमा दूती की मानवती नायिका प्रति शिक्षा।

५ सुरति संग्राम का वर्णन है। कुचों के शिरोभाग पर नख-क्षत का प्रयोजन है। रतिसमर में वालों के पीछे पड़ने का भाव अब तक शेख या आलम कवि का पहिला समझा जाता था, किंतु जान पड़ता है कि वास्तव में यह भाव भूषण का था। देवजी ने भी इस भाव पर एक छंद कहा है।

सुने ह्वै वेसुख सुने बिन रह्यो न जाय, याही ते बिकल सी त्रिहाती दिन राती हैं। भूषन सुकवि देखि बावरी बिचार काज भूलिबे के मिस सास नंद अनखाती[1] हैं॥ सोई गति जानै जाके भिदी होय कानै सखि जेती कढ़ैं तानै तेती छेदि छेदि जाती हैं। हूक पाँसुरी मैं, क्यों भरों न आँसुरी मैं, थोरे-छेद बाँसुरी मैं, घने-छेद किए छाती हैं॥ २८॥

देह[2]-देह देह फेरि पाइए न ऐसी देह, जौन तौन जो न जानै कौन तौन आइबो। जेते[3] मन मानिक हैं तेते मन मानिक हैं, धराई में धरे ते तौ धराई धराइबो॥ एक[4] भूख राख, भूख राखै मत भूषन की, यही भूख राख भप भूषन बनाइबो। गगन[5]

---

१ सास तथा ननद नायिका को प्रेम से बावली समझ कर विचार करने (चेताने) के अभिप्राय से भूलों के बहाने उससे नाराज़ होती हैं।

२ शांत रस का वर्णन है। दान करो, दान करो, दान करो, ऐसा शरीर फिर नहीं मिलता है, जो जौन तौन (इधर उधर की) नहीं जानता उस किसको आना है (उसे पुनर्जन्म नहीं लेना है, क्योंकि वह मुक्त हो जायगा।)

३ जितने मणि माणिक्य हैं, उन्हें मन में मानकर हम कहते हैं कि वे पृथ्वी पर ही धरे हैं और उन्हें पृथ्वी पर ही धरना चाहिए (प्रयोजन यह है कि पार्थिव पदार्थ साथ नहीं जाते, सो उनसे अधिक संलग्न न होना चाहिए)।

४ एक ही (ईश्वर की) क्षुधा रख, अलंकारों की क्षुधा मत रख, केवल यही क्षुधा (भूख, इच्छा) रख कि अपने को भूखों का राजा नहीं बनाना है।

५ आकाश को गमन (मरण) के समय यमराज (पार्थिव वस्तुओं को) गिनने न देगा, पहाड़ और नगीना साथ न चलैगा और नंगे चलना होगा।

के गौन जम गिनन न दैहैं, नग नगन चलैगो साथ नग न चलाइबो ॥ २९ ॥

सैयद मुगल पठान सेख चन्दावत दच्छन।
सोम सूर द्वै बंस राव राना रन रच्छन॥
इमि भूषण अवरंग और एदिल दलजंगी।
कुल करनाटक कोट, भोट कुल हबस फिरंगी॥
चहुँओर बैर महि मेर, लगि सहि तनै साहस झलक।
फिरि एक ओर सिवराज नृप एक ओर सारी खलक॥३०॥

कोप करि चढ्यो महाराज सिवराज बीर, धौंसा की धुकार ते पहार दरकत हैं। गिरे कुम्भ मतवारे सो नित फुहारे छूटे, कड़ाकड़ छिति नाले[1] लाखों करकत हैं॥ मारे रन जोम के जवान खुरासान केते, काटि काटि दाटि दावे छाती थरकत हैं। रनभूमि लेटे वे चपेटे पठनेते पर, रुधिंत लपेटे मुगलेटे फरकत हैं॥३१॥

दिली दल दलै सलहेरि के समर सिवा भूपन तमासे आप देव दमकत हैं। किलकत कालिका कलेजे की कलल[2] करि करि कै अलल[3] भूत भैरों तमकत हैं॥ कहूँ रुण्ड मुण्ड कहूँ कुंड भरे सोनित के, कहूँ[4] बखतर करि झुण्ड झमकत हैं। खुले खग्ग कंध धरि ताल गति बन्धपरि धाय धाय धरनि कबन्ध धमकत हैं॥३२॥

---

१ घोड़े की नालें जो पृथ्वी पर पड़ी हैं।

२ कल्लोल; उछल कूद; खुशी।

३ मलछै; तलछैः; मजेदारी।

४ कहीं जिरह बखतर और कहीं हाथियों के समूह झमाझम गिर रहे हैं।

भूप सिवराज करि कोपि रन मंडल में खग्ग धरि कुद्यो चकता के दरबारे मैं। काटे भट विकट त्यों गजन को सुण्ड काटे, पाटे रनभूमि काटे दुवन सितारे मैं॥ भूषन भनत चैन उपजे सिवा के चित्त चौंसठि[1] नचाई जबै देवा के किनारे मैं। आँतन की तांति वाजी, खाल की मृदंग वाजी, खोपरी की ताल वसुपाल के अखारे में॥ ३३॥

मारेदल मुगल तिहारी तरवारि आगु उछलि बिछलि म्यान वांबीते निकासतीं। तेरी तरवारि लागे दूसरी न मांगै कोऊ काटि कै कलेजा शोन पीवत विनासतीं॥ साहि कै सपूत महाराज सिव-राज वीर तेरी तरवारि स्याह नागिनी सी भासतीं। ऊँट हय पैदरि सवारन के झुण्ड काटि, हाथिन के मुंड तरबूज लौं तरासती॥३४॥

तेरी स्वारी माँझ महराज सिवराज बली! केते गढ़पतिन के पंजर मचकिगे। केते वीर मारि कै बिडारे किरवानन ते, केते गिद्ध खाय केते अम्बिका [2]अचकिगे॥ भूपन भनत रुंड मुंडन की माल करि चारि पायँ नदिया के भारते[3] भनकिगे। टूटिगे पहार विकराल भुव मण्डल के, सेस के सहस फन कच्छप [4]कचकिगे॥ ३५॥

---

१ नर्मद के तट पर चौंसठि जोगिनी का एक मन्दिर अब भी है।

२ काली द्वारा छक कर खाये गये।

३ बोझ से टेढ़े पड़ गये।

४ कचका खा गये; गड्ढा पड़ गये।

तेग बरदार स्याह, पंखाबरदार स्याह निखिल नकीब स्याह बोलत बेराह को। पान पीकदानी स्याह,[1] सेनापति मुखस्याह, जहाँ तहाँ ठाढ़े गनैं भूषन सिपाह को॥ स्याह भये सारी पातसाही के अमीर खान, काहू को न रहो जोम[2] समर उमाह[3] को। सिंह सिवराज दल मुगल बिनास करि घास ज्यों पजार्‌यो[4] आमखास पातसाह को॥ ३६॥

औरँग अठाना साह[5] सूरकी न मानै आनि, जब्बर जराना[6] भयो जालम जमाना को। देवल डिगाना, रावराना मुरझाना अरु धरम ढहाना पनमेट्यो है पुराना को॥ कीनो घमसाना, मुगलाना को मसाना[7] भरे, जपत जहाना जस विरद बखाना को। साहिके सपूत मरदाना किरवाना गहि राख्यो है खुमाना बरबाना हिन्दुवाना को॥ ३७॥

सिंहल के सिंह समरन सरजा की हाँक, सुनि चौंकि चलत

---

१ पान रक्खे रक्खे सूखकर स्याह हो गये, तथा पीकदानी में नया थूक न पड़ने से पुराना सूखकर काला हो गया।

२ घमंड।

३ उत्साह।

४ जलाया—यथा, पजरे सहर साहि के बाँके।

५ शेरशाह सूर ने हुमायुँ को जीत कर शाहपद पाया था। वह हिन्दुओं से भी अच्छा सलूक करता था।

६ जबरदस्त तथा देश जलाने वाला।

७ मोगल राज्य को श्मशान में भर दिया!

बधाई पाटसादी[1] के। भूषन भनत ते भुवाल दुरे द्राविड़ के, ऐल फैल गैल गैल भूले उनमादी के॥ उछलि उछलि ऊँचे सिंह गिरैं लंकमाहिं, बूड़ि गये महल विभीपनके दादा के। महि हाले, मेरु हाले, अलका कुबेर हाले जादिन नगारे बाजे सिव साहि[2] जादाके॥ ३८॥

प्रबल पठान फौज काहि कै कराल महा अपनी मनाय आन जाहिर जहान को। दौरि करनाटक में तोरिगढ़ कोट लीन्हें मोदी सो पकरि लोदी सेर खाँ अचान[3] को॥ भूषन भनत सब मारि कै बिहाल करि साहि के सुवन राचे अकथ कथानको। बारगीर[4] बाज सिवराज के सिकार खेले, साह सैन सकुन में ग्राही किरवान को॥ ३९॥

पकवर प्रबलदल भकवर सों दौरि करि आप साहि जू को नंद बांधि तेग बाँकरी। सहर मिलायो मारि गरद मिलायो गढ़ उबरे न आगे पाछे भूप कितनां करी॥ हीरा मनि मानिक की लाख पोटि[5] लादि गयो, मन्दिर ढहायो जो पै काढ़ी मूल कांकरी[6]।

---

१ शादी के कपड़ों तक से बधाई भागती है।

२ शाहजी के पुत्र शिवाजी।

३ अचानक, एकाएकी।

४ शिवाजी के बाजरूपी घोड़सवारों के शिकार खेलने से शकुन पक्षी रूपी शाही दल में तलवार पकड़ने वाला कौन हुआ ?

५ पोटली।

६ नीव का कंकड़ तक खोद डाला। सूरत शहर की लूट का वर्णन है।

आलम पुकार करै आलम-पनाह जूपै होरी सी जराय सिवा सूरति फनां करी ॥ ४० ॥

साहि के सपूत सिवराज वीर तेरे डर अडग[1] अपार महा दिग्गज सो डोलिया। वन्दर बिलाइति लौं डर अकुलाने अरु संकित सदाई रहे वेस वहलोलिया॥ भूषन भनत कौल करत कुतुबसाहि, चारैं चहुँ ओर इच्छा[2]एदिलशा भौ लिया। दाहि दाहि दिल कीन्हे दुख दही दाग ताते आहि आहि करत औरंग साहिऔलिया ॥ ४१ ॥

जानिपति वागवान मुगल पठान सेख बैल सम फिरत रहत दिन रात हैं। ताते ह्वै अनेक जोई सामने चलत सोई पीठि दै चलत मुखनाईं सरसात हैं॥ भूषन भनत जुरे जहाँ जहाँ जुद्ध भूमि, सरजा सिवा के जस बाग न समात हैं। रहट की घरी जैसे औरँग के उमराव पानिप दिलीते लाय ढोरि ढोरि जात है ॥ ४२ ॥

साहिते बिसाल भूमि जीती दस दिसन ते महि मैं प्रताप कीन्हों भारी भूप भान सों। जैसो भयो साहि के सपूत सिवराज बीर तैसो भयो होत है न ह्वै है कोउ आन सों॥ एदिल कुतुब साहि नौरँग के मारिबे को भूषन भनत को है सरजा खुमान सों। तीनि पुर त्रिपुर के मारे सिव तीनि बान, तीनि पातसाही हनीं एक किरवान सों ॥ ४३ ॥

---

१ अचल; न मागनेवाला; डग न देनेवाला।

२ आदिल शाह डर कर चारों तरफ़ इच्छायें चलाते हैं।

तेरी धाकही ते नित हवसी फिरंगियो विलायती विलेन्दे करैं वारिधि विहरनो । भूपन भनत वीजापुर भागनेर दिली तेरे वैर भयो उमरावन को मरनो ॥ चारौं दिसि दौरि केते जोर कै मुलुक लूटैं कहा लगि साहस सिवाजी तेरो वरनो । आठ दिगपाल त्रासि आठौ दिसि जीतिवे को आठ पातसाहनसो आठौं जाम लरनो ॥ ४४ ॥

दौरि चढ़ि ऊँट फरियाद चहुँ खूँट किये सूरति को कूटि सिवा लूटि धन लै गयो । कहैं ऐसे आप आमखास वीच साहही सों कौन ठौर जायँ दाग छाती वीच दै गयो ॥ सुनि वैन साह कहैं यारौ उमराओ जाओ सौ गुनाह राव एती वेर वीच कै गयो । भूषन भनत मुगलान सवै चौथि दीन्ही हिन्द मैं हुकुम साहि नन्द जू को है गयो ॥ ४५ ॥

तखत तखत पर तपत प्रताप पुनि नृपति नृपति पर सुनिये अवाज की । दंड सातौ दीप नव खंडन अदंडन पै नगर नगर पर छावनी समाज की ॥ उदधि उदधि पर दावनी खुमान जू की थल थल ऊपर है वानी कविराज की । नग नग ऊपर निसान झरि जगमगै, पग पग ऊपर दोहाई सिवराज की ॥ ४६ ॥

वारह हजार असवार जोर दलदार ऐसे अफजल खान आयो सुरसाल है । सरजा खुमान मरदान सिवराज वीर गंजन गनीम आयो गाढ़ो गढ़पाल है ॥ भूषन भनत दोऊ दल मिलि गये वीर,—

---

१ विल्ली । मतलव यह है कि समुद्र में फिरने वाले याने भीगी विल्ली हो गये ।

भारत सो भारी भयो जुद्ध विकराल है। पार जावली के बीच गढ़ परताप तरे सुनौ भई सोनित सों अजौं धरा लाल है ॥४७॥

कत्ता के कसैया महाबीर सिवराज तेरी रूमके[1] चकत्ता तक संका सरसात है। कासमीर काबुल कलिंग[2] कलकत्ता अरु कुलि करनाटक की हिम्मति हेराति है ॥ भिकट बिराट[3] वंग व्याकुल वलख वीर बारहौ विलायती सकल विललात है। तेरी धाक धुंधरि[4] धरा में अरु धाम धाम अंधाधुंध[5] अंधी सी हमेस हहरात है ॥ ४८ ॥

बन्द कीन्हे बलख सो, वैर कीन्हो खुरासान, कीनी हवसान पर पातसाही पलहीं[6]। वेद कल्यान घमसान कै छिनाय लीन्हे जाहिर जहान उपखान येहो चलहीं ॥ जंग करि जोर सों निजाम साहि जेर कीनो, रन में नमाये हैं, रुहेले छल बलहीं। साहन के देस लूटे साहजी के सिवराज कूटी फौज अजौं मुगलान हाथ मलहीं ॥ ४९ ॥

---

१ रूम (टर्की) के चगताई खाँ के यहाँ तक।

२ उड़ीसा।

३ अलवर और जैपूर का प्रदेश।

४ धुंधी, आसमान में उड़ती हुई मिट्टी।

५ धुंधी हल्की होती है किन्तु शिवाजी की धाक की धुंधी भारी आंधी के समान हाहाकार मचाए हुए है।

६ एक पल भर में।

कूरम कवंध हाड़ा तूंवर वघेला वीर प्रवल बुँदेला हूते जेते दल मानी सों। देवल गिरन लागे मूरति लै विप्र भागे नेकहू न जागे सोइ रहे रजधानी सों॥ सवन पुकार करी सुरन मनायवे को सुरन पुकार भारी करी विश्वधनी सों। धरम रसातल को वूड़त उवार्‍यो सिवा मारि तुरकान घोर वल्लम की अनी[1] सों॥५०॥

जोर रूसियन को है, तेग खुरासान की है, नीति इँगलैंड चीन हुन्नर महादरी[2]। हिम्मति अमान मरदान हिन्दुवानहू की, रूम अभिमान हवसान हद नादरी॥ नेको अरवान सान अदव इरान त्योंहीं, क्रोध है तुरान त्यों फरांस फन्द आदरी। भूपन भनत इमि देखिये महीतल पै वीर सिरताज सिवराज की वहादरी॥ ५१॥

आपस की फूट ही ते सारे हिन्दुवान टूटे, टूट्यो कुल रावन अनीति अति करते। पैठि गो पताल वलि वज्रधर ईरपाते, टूट्यो हिरन्याक्ष अभिमान चित धरते॥ टूट्यो सिसुपाल वासुदेव जू सों वैर करि, टूटो है महिष दैत्य अधम विचरते। रामकर छुवतही टूटो ज्यों महेस चाप, टूटी पातसाही सिवराज संग लरते॥ ५२॥

चोरी रही मन मैं, ठगोरी रही रूप ही मैं, नाहीं तौ रही है एक मानिनी के मान मैं। केस में कुटिलताई नैन में चपलताई,

---

१ नोक।

२ महान, महत् भरी, भारी दरें।

भौंह में बँकाई हीनताई कटियान मैं ॥ भूषन भनत पातसाही पातसाहन[1] मैं तेरे सिवराज आज अदल जहान मैं। कुच मैं कठोरताई रति मैं निलजताई छाँड़ि सब ठौर रही आनि अबलान मैं ॥ ५३ ॥

साहू जी की साहिबी दिखाती कछू होनहार जाके रजपूत भरे जोम बमकत हैं। भारेऊ नगर वारे भागे घर तारे दै दै बाजे ज्यों नगारे घनघोर घमकत हैं ॥ व्याकुल पठानी मुगलानी अकुलानी फिरैं भूषन भनत मांग मोती दमकत हैं । दच्छिन के आमिल भगत डरि चहुँ ओर चंबल[2] के आरपार ने जे चमकत हैं ॥ ५४ ॥

१ बादशाही देश में न रहकर बादशाहों के शरीर भर में रह गई।

२ नदी चम्बल के दक्षिण तक शिवाजी राज फैलाना चाहते थे।

सूर्यकुमारी पुस्तकमाला

[१] ज्ञान-योग

पहला खंड

अनुवादक—श्रीयुक्त बाबू जगन्मोहन वर्मा

जिन श्रीमती महाराज कुँवरानी श्री सूर्य्यकुमारी की स्मृति में सूर्य्यकुमारी पुस्तकमाला निकाली जा रही है, उनकी बड़ी अभिलाषा थी कि सुप्रसिद्ध स्वामी विवेकानन्द जी के सब ग्रंथों, व्याख्यानों और लेखों आदि का प्रामाणिक हिंदी अनुवाद प्रकाशित हो। इसी लिये इस ग्रंथ माला का पहला ग्रंथ स्वामी विवेकानन्द जी के ज्ञानयोग संबंधी व्याख्यानों का संग्रह है। इसका मूल पाठ मायावती स्मारक संस्करण से लिया गया है। इसमें स्वामी जी के ज्ञान-योग सम्बन्धी १६ व्याख्यान हैं। पृष्ठ-संख्या ३७१, रेशमी सुंदर जिल्द, मूल्य २॥)

---

[२] करुणा

अनुवादक—श्रीयुक्त बाबू रामचंद्र वर्मा

यह परम प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता श्रीयुक्त राखालदास बंद्योपाध्याय के इसी नाम के ऐतिहासिक उपन्यास का अनुवाद है। इस पुस्तक में आपको गुप्त-कालीन भारत का बहुत अच्छा सामाजिक तथा राजनीतिक चित्र मिलेगा और आप समझ सकेंगे कि उन

दिनों यहाँ का वैभव कितना बढ़ा चढ़ा था और वह किस प्रकार एक ओर बर्बर हूणों के बाहरी आक्रमण तथा दूसरी ओर वैदिक धर्म्म में द्वेष रखनेवाले बौद्धों के आन्तरिक आक्रमण के कारण नष्ट हुआ। इसके मूल लेखक इतिहास के बहुत बड़े ज्ञाता और पंडित हैं; इसी लिये वे गुप्त-कालीन भारत का यथा तथ्य चित्र खींचने में बहुत अधिक सफल हुए हैं। यह उपन्यास जितना ही ऐतिहासिक घटनाओं से पूर्ण है, उतना ही मनोरंजक भी है। पृष्ठ संख्या सवा छः सौ के लगभग; मूल्य ३॥)

---

[३] शशांक

अनुवादक—श्रीयुक्त पं० रामचंद्र शुक्ल

यह भी श्री राखालदास बंद्योपाध्याय का लिखा हुआ और करुणा की ही तरह का परम मनोहर ऐतिहासिक उपन्यास है। यह भी गुप्त साम्राज्य के ह्रास-काल से ही संबंध रखता है और इसमें सातवीं शताब्दी के आरंभ के भारत का जीता जागता, सामाजिक और ऐतिहासिक चित्र दिया गया है। जिन लोगों ने करुणा को पढ़ा है, उनसे इस संबंध में और कुछ कहने की आवश्यकता नहीं। पर जिन लोगों ने उसे नहीं देखा है, उनसे हम यही कहना चाहते हैं कि इन दोनों उपन्यासों के जोड़के ऐतिहासिक उपन्यास आपको और कहीं न मिलेंगे। मूल्य ३)

---

[४] बुद्ध-चरित

लेखक—श्रीयुक्त पं० रामचंद्र शुक्ल

यह अँग्रेजी के प्रसिद्ध कवि सर एडविन आर्नल्ड के "लाइट आफ एशिया" के आधार पर स्वतंत्र ललित काव्य है। यद्यपि इसका ढंग ऐसा रखा गया है कि एक स्वतंत्र हिन्दी काव्य के रूप में इसका ग्रहण हो, पर साथ ही मूल पुस्तक के भावों को रक्षित रखने का भी पूर्ण प्रयत्न किया गया है। कविता बहुत ही मनोहर, मधुर, सरस और प्रसाद-गुणमयी है जिसे पढ़ते ही चित्त प्रसन्न हो जाता है। छप्पन पृष्ठों की भूमिका में काव्य-भाषा (व्रज और अवधी) पर बड़ी मार्मिकता से विचार किया गया है, जिसकी बड़े बड़े विद्वानों से मुक्त कंठ से प्रशंसा की है। दो रंगीन और चार सादे चित्र भी दिए गए हैं जिनमें दो सहस्र वर्ष पहले के दृश्य दिखलाये गये हैं। पृष्ठ संख्या प्रायः तीन सौ। मू० केवल २॥)

---

[५] ज्ञान-योग

दूसरा खंड

अनुवादक—श्रीयुक्त बा० जगन्मोहन वर्मा

यह स्वामी विवेकानंद जी के ज्ञान-योग संबंधी व्याख्यानों का, जो स्वामी जी ने समय समय पर युरोप और अमेरिका में दिये थे, संग्रह है। सूर्य्यकुमारी पुस्तकमाला की पहली पुस्तक

का यह दूसरा खंड है। स्वामी विवेकानंद जी वेदांत दर्शन के पारदर्शी विद्वान् थे, अतः इस संबंध में उनके व्याख्यानों में जो विवेचन हुआ है, वह बहुत ही मार्मिक और मनोरंजक है। पृष्ठ-संख्या ३२६ के लगभग; मू० २॥)

---

[६] मुद्रा-शास्त्र

लेखक—श्रीयुक्त प्राणनाथ विद्यालंकार

हिंदी में मुद्रा-शास्त्र संबंधी यह पहला और अपूर्व ग्रंथ है। मुद्रा शास्त्र के अनेक अँग्रेज और अमेरिकन विद्वानों के अच्छे अच्छे ग्रंथों का अध्ययन करके इसका प्रणयन किया गया है। इसमें बतलाया गया है कि मुद्रा का स्वरूप क्या है, उसका विकास किस प्रकार हुआ है, उसके प्रचार के क्या सिद्धांत हैं, उत्तम मुद्रा के क्या कार्य्य हैं, मुद्रा के लक्षण और गुण क्या हैं, राशि-सिद्धांत क्या है, उसका विकास किस प्रकार हुआ है, उसका क्रय-शक्ति पर क्या प्रभाव पड़ता है, मूल्य संबंधी सिद्धांत क्या हैं, मूल्य-सूची किसे कहते हैं और उसका क्या उपयोग होता है, द्विधातवीय मुद्राविधि का स्वरूप क्या है, उसके गुण और दोष क्या हैं, अपरिवर्त्तनशील और परिवर्तनशील पत्र-मुद्रा के क्या क्या सिद्धांत और गुण दोष हैं, आदि आदि। पृष्ठ-संख्या ३२५ के लगभग; मूल्य २॥)

---

[७] अकबरी दरबार

पहला भाग

अनुवादक—श्रीयुक्त बाबू रामचंद्र वर्मा

उर्दू, फारसी आदि के सुप्रसिद्ध विद्वान् स्वर्गीय शम्सुल उल्मा मौलाना मुहम्मद हुसेन साहब आज़ाद कृत दरबारे अकबरी नामक ग्रंथ का यह अनुवाद अभी हाल में छपकर तैयार हुआ है। इसमें बादशाह अकबर की पूरी जीवनी बहुत विस्तार के साथ दी गई है और बतलाया गया है कि उसने कैसे कैसे युद्ध किए, अपने राज्य की किस प्रकार व्यवस्था की, उसका धार्मिक विश्वास कैसा था और उसमें समय समय पर क्या परिवर्त्तन हुए, उसके समय में देश की राजनीतिक, सामाजिक और साम्पत्तिक अवस्था कैसी थी, उसके दरबार का वैभव कैसा था, आदि आदि। साथ ही अकबर के अमीरों और दरबारियों आदि का भी इसमें पूरा पूरा वर्णन दिया गया है। पृष्ठ-संख्या चार सौ से ऊपर; मू० २॥)

देवीप्रसाद ऐतिहासिक पुस्तकमाला

(१) चीनी यात्री फाहियान का यात्रा विवरण

अनुवादक—श्रीयुक्त बाबू जगन्मोहन वर्मा

चीनी भाषा के मूल ग्रंथ के आधार पर यह ग्रंथ लिखा गया है। गांधार, तक्षशिला, पंजाब, मथुरा, श्रावस्ती, कपिल-

वस्तु, रामस्तूप, पाटलिपुत्र, राजगृह, शतपर्णी गुफा, गया, वाराणसी, ताम्रलिप्ति आदि स्थानों में चीनी यात्री फाहियान ने जो कुछ देखा या सुना था, उसका इसमें पूरा पूरा वर्णन है। अंग्रेजी अनुवादकों ने जो जो भूलें की हैं, वे भी इसमें सुधार दी गई हैं। साथ ही फाहियान के यात्रा मार्ग का रंगीन नकशा देने से पुस्तक का महत्व कहीं अधिक बढ़ गया है। मूल्य १॥)

(२) चीनी यात्री सुंगयुन का यात्रा-विवरण

अनुवादक—श्रीयुक्त बाबू जगन्मोहन वर्मा

यह यात्री फाहियान के १०० वर्ष पीछे भारतवर्ष में आया था। इस पुस्तक के उपक्रम में समस्त चीनी यात्रियों का विवरण संक्षेप में दिया गया है। तुर्किस्तान, शेनशेन, खुतन, यारकंद, सुंगलिंग, गांधार, तक्षशिला, गोपाल गुहा आदि का वर्णन पढ़ने ही योग्य है। इस ग्रंथ में भारत की पश्चिमी सीमा पर के देशों का उस समय का बहुत अच्छा वर्णन है; और स्थान स्थान पर बहुत ही उपयोगी और महत्त्व-पूर्ण टिप्पणियाँ दी गई हैं। आरंभ में अनेक चीनी यात्रियों का संक्षिप्त परिचय भी दे दिया गया है। मूल्य १)

(३) सुलेमान सौदागर

अनुवादक—श्रीयुक्त बा० महेशप्रसाद "साधु"

भारतवर्ष और चीन देश के विषय में मुसलमानों की लिखी जो पुस्तकें पाई जाती हैं; उनमें से सब से प्राचीन पुस्तकें

अरबी भाषा में हैं। उन पुस्तकों में सब से अधिक प्राचीन सुलेमान नामक एक मुसलमान सौदागर का यात्रा-विवरण है, जो अरब से पहले भारत आया था और यहाँ से होता हुआ चीन गया था। उसी का मूल अरबी से यह अनुवाद कराके सभा ने प्रकाशित किया है। इसकी मूल प्रति बहुत परिश्रम करके तथा बहुत कुछ धन व्यय करके प्राप्त की गई थी। इसमें मार्को पोलो तथा इब्न बतूता के यात्रा-विवरणों से भी बहुत सहायता ली गई है। मूल्य १।)

(४) अशोक की धर्म-लिपियाँ

पहला भाग

भारतवर्ष के आज से २५०० वर्ष पूर्व के इतिहास की जानकारी के लिये प्रियदर्शी राजा अशोक के शिलालेख बहुत महत्व के हैं। अशोक भारत का बहुत प्रतापी सम्राट् था और वह सर्व-साधारण के हित तथा राज-कर्म्मचारियों के पथ-प्रदर्शन के लिये अपनी मुख्य मुख्य आज्ञाओं को चट्टानों और स्तंभों आदि पर खुदवा दिया करता था। इस पुस्तक में उसी सम्राट् अशोक के प्रधान शिलालेखों के अनुवाद और स्थान स्थान पर अनेक बहुमूल्य टिप्पणियाँ दी गई हैं। अशोक की धर्म्मलिपियों का ऐसा अच्छा दूसरा संस्करण अभी कहीं नहीं निकला। मूल्य ३)

(५) हुमायूँनामा

अनुवादक—श्रीयुक्त बा० व्रजरत्नदास

प्रसिद्ध मुगल सम्राट् हुमायूँ ने कोई आत्मचरित नहीं लिखा था; पर इस त्रुटि की पूर्त्ति उसकी सौतेली बहन गुलबदन बेगम ने कर दी थी। बेगम ने फ़ारसी भाषा में हुमायूँ की एक जीवनी लिखी थी जो "हुमायूँनामा" के नाम से प्रसिद्ध है। यह पुस्तक उसी का अनुवाद है। इसमें राजनीतिक घटनाओं, युद्धों और विजयों आदि का तो थोड़ा वर्णन है, पर गार्हस्थ जीवन की बातें बहुत दी गई हैं। मूल्य १॥)

(६) प्राचीन मुद्रा

श्रीयुक्त बा० रामचंद्र वर्मा

श्रीयुक्त राखालदास बंद्योपाध्याय के "प्राचीन मुद्रा" नामक बँगला ग्रंथ का हिंदी अनुवाद। इसमें भारत के सब से प्राचीन सिक्कों, विदेशी सिक्कों के अनुकरण पर बने हुए सिक्कों, गुप्त सम्राटों के सिक्कों, सौराष्ट्र तथा मालव के सिक्कों, और दक्षिणापथ तथा उत्तरापथ के पुराने सिक्कों का पूरा पूरा विवरण दिया गया है; और यह बतलाया गया है कि उनसे क्या क्या ऐतिहासिक बातें ज्ञात अथवा सिद्ध होती हैं। अंत में सैकड़ों सिक्कों के चित्रों के प्रायः २० प्लेट हैं। मूल्य ३)

प्रकाशन मन्त्री

नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस सिटी।